समभाव-समदृष्टि के

सबक

दिनांक 05 अप्रैल - 27 सितम्बर 2015

प्रकाशक
सतयुग दर्शन ट्रस्ट (रजि.)
"वसुन्धरा" ग्राम भूपानी–लालपुर रोड फरीदाबाद–121002 (हरियाणा)
ई–मेलः info@satyugdarshantrust.org
website: www.satyugdarshantrust.org
© सर्वाधिकार सुरक्षित सतयुग दर्शन ट्रस्ट (रजि.)
ISBN : 978-93-85423-01-7

प्रथम संस्करण
जनवरी, 2016

समभाव-समदृष्टि के

सबक

दिनांक 05 अप्रैल - 27 सितम्बर 2015

सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार

★ महामन्त्र ★

साडा है सजन राम,
राम है कुल जहान

अर्थात्

ईश्वर हमारा मित्र/प्रियतम सर्वव्यापक है।

उसी को जानो,

मानो और वैसे ही

गुण अपनाओ।

शब्द है गुरु,
शरीर नहीं है।

अर्थात्

ज्ञानी को नहीं,

ज्ञान को अपनाओ ।

निमित्त में नहीं,

नित्य में श्रद्धा बढ़ाओ।

अनुक्रमणिका

क्रमांक	विवरण					पृष्ठ संख्या
1.	दिनाँक	05	अप्रैल	2015	का सबक	01
2.	दिनाँक	12	अप्रैल	2015	का सबक	19
3.	दिनाँक	19	अप्रैल	2015	का सबक	34
4.	दिनाँक	26	अप्रैल	2015	का सबक	48
5.	दिनाँक	03	मई	2015	का सबक	64
6.	दिनाँक	10	मई	2015	का सबक	77
7.	दिनाँक	17	मई	2015	का सबक	93
8.	दिनाँक	24	मई	2015	का सबक	105
9.	दिनाँक	31	मई	2015	का सबक	118
10.	दिनाँक	07	जून	2015	का सबक	133
11.	दिनाँक	14	जून	2015	का सबक	146
12.	दिनाँक	21	जून	2015	का सबक	162
13.	दिनाँक	28	जून	2015	का सबक	176
14.	दिनाँक	05	जुलाई	2015	का सबक	192
15.	दिनाँक	12	जुलाई	2015	का सबक	204
16.	दिनाँक	19	जुलाई	2015	का सबक	217
17.	दिनाँक	26	जुलाई	2015	का सबक	234
18.	दिनाँक	02	अगस्त	2015	का सबक	245
19.	दिनाँक	09	अगस्त	2015	का सबक	258
20.	दिनाँक	16	अगस्त	2015	का सबक	272
21.	दिनाँक	23	अगस्त	2015	का सबक	286
22.	दिनाँक	30	अगस्त	2015	का सबक	299
23.	दिनाँक	06	सितम्बर	2015	का सबक	311
24.	दिनाँक	13	सितम्बर	2015	का सबक	329
25.	दिनाँक	20	सितम्बर	2015	का सबक	345
26.	दिनाँक	27	सितम्बर	2015	का सबक	365
27.	आत्म निरीक्षण हेतु प्रश्न					384

दिनाँक 05 अप्रैल 2015 का सबक

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्मा-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त्त-वर्त्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शान्ति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

याद रखो अभी-अभी हमने ईश्वर से प्रार्थना करते हुए जो चाहा है, ईश्वर हमें वह सब प्रदान करने हेतु तत्पर हैं क्योंकि वह परमपिता यही चाहते हैं कि हम, उनके बच्चे, एक अच्छा इन्सान बनकर उनके सुपुत्र कहलाएं और जीवन जीने का सही ढंग अपनाते हुए अपना गृहस्थाश्रम ठीक तरह से चलाने के योग्य बनें। यही नहीं इस योग्यता के साथ-साथ हमें अपने जीवन के मुख्य उद्देश्य यानि आत्मपद की प्राप्ति भी करनी है जिसकी ओर अब हम बढ़ने लगे हैं। जान लो जीवन में कोई भी उद्देश्य निर्धारित करने से पूर्व उसके विषय में यह समझना होता है कि हमारा लक्ष्य क्या है? फिर उस

लक्ष्य को प्राप्त करने के मार्ग के विषय में जानकारी प्राप्त करनी होती है, कि इस रास्ते पर चलते हुए मुझे कहाँ-कहाँ, किन-किन, विघ्न-बाधाओं का सामना करना पड़ सकता है। इस तरह लक्ष्य की तरफ़ प्रत्येक कदम उठाने से पहले उसके विषय में सम्पूर्ण जानकारी ले बेखौफ़ा-बेख़तरा निरन्तर आगे बढ़ना आरम्भ करना होता है। इस तरह पूर्णतः सचेत होकर ही हम विघ्न-बाधाओं से मुक्त बने रहते हुए अपने लक्ष्य यानि मंज़िल को प्राप्त कर सकते हैं। तो क्या अब सब निर्धारित लक्ष्य 'आत्मपद' की प्राप्ति करने के लिए तत्पर हैं?

हाँ जी।

तो फिर सावधान हो जाओ और इस परमपद को प्राप्त करने के लिए जो गृहकार्य मिला है, उसमें वर्णित 21 बिन्दुओं में से प्रथम बिन्दु जो कि एक अच्छे इन्सान के रूप में ढलने हेतु आवश्यक भाव-स्वभावों का आधार है, यानि नींव है, उसकी मज़बूती हेतु दृढ़ निश्चयी हो जाओ। आज हमने यही प्रयत्न करना है कि जिस नींव पर हमारे भाव-स्वभावों का ताना बाना खड़ा होना है, हम सावधानी व मज़बूती से उसकी स्थापना की क्रिया को समझते हुए, उसे विधिवत् व अफुरता से करने में कामयाब हों। जान लो कि जो ऐसा करने में सफल हो जाएगा उसका जीवन आनन्दमय हो जाएगा और वह सहजता से अपने गृहस्थ आश्रम को सतयुग बना परमपद प्राप्त कर सकेगा। फिर कह रहे हैं कि जो इस गृहकार्य के प्रथम बिन्दु पर मज़बूती से खड़ा हो जाएगा उसके लिए अन्य 20 बिन्दुओं पर खड़ा होना कोई कठिन

कार्य नहीं रहेगा। अब सब सुचेत हो जागृति में आ जाओ और अपने निर्धारित लक्ष्य की प्राप्ति के लिए आगे बढ़ो।

सभी सजन जानते ही हैं कि हमें अपने जीवनकाल में सन्तोष और धैर्य अपना कर सम अवस्था में बने रह, निष्काम भाव से परोपकार कमाने हेतु, न्यायसंगत, निर्भयता व सुदृढ़ता से, सच्चाई-धर्म के रास्ते पर बने रहना सुनिश्चित करना है। इस शुभ कृत्य द्वारा, इसी वर्ष इन्सानियत में ढल, गृहस्थाश्रम ठीक चलाने व परमपद प्राप्त करने के लिए, सजन श्री शहनशाह हनुमान जी की युक्ति अनुसार, हमें 29-03-15 को गृहकार्य मिला है। इस सबक के अनुसार हमें अपने जीवन उद्देश्य को प्राप्त करने का अनथक भरसक यत्न करना है। यह आत्मसुधार हेतु महातप है।

इस महातप की सफलता त्याग भावना पर निर्भर करती है क्योंकि त्याग भावना द्वारा ही हम संसार में रहते हुए भी इन्द्रियनिग्रह द्वारा विषय-विकारों से खुद को बचाए रख अपनी मानव होने की अवस्था में सुदृढ़ बने रह सकते हैं और यथार्थता से जीवन जी सकते हैं। याद रखो जो भी सजन दिलचस्पी में आकर इस पुरुषार्थ के प्रति दृढ़ संकल्प रहेगा, यानि कमज़ोर नहीं पड़ेगा उसके मन की मैल पूर्णतः धुल जाएगी और वह अपने यथार्थ पावन स्वरूप के अनुरूप ख़ालिस सोने की तरह चमक उठेगा। इस प्रकार वह अपने मानव होने की उत्कृष्टता पर खरा उतर सकेगा अर्थात् मानवता के अनुकूल कर्म करते हुए ईश्वर की सर्वोत्कृष्ट कृति होने का सत्य सिद्ध कर पाएगा। इस निज हितकारी कार्य में सफलता प्राप्त करने के लिए सबसे यह भी अनुरोध

किया गया है कि इस सबक को बार-बार पढ़ कर युक्तिसंगत खुद समझें व विचार से सपरिवार अमल में लाकर, अपना घर सतयुग बना लें और अगले वर्ष फ़र्स्ट का नतीजा अवश्य दिखावें। याद रखो इसी क्रिया द्वारा ही हम इन्द्रियनिग्रह कर द्वि-द्वेष व वैर-विरोध की जड़ यानि काम, क्रोध, लोभ, मोह व कुलनाशक अहंकार पर विजय प्राप्त कर सकते हैं और हर विकृति से बचे रह आनन्दमय जीवन व्यतीत करते हुए ब्रह्म पदवी को पा सकते हैं। इस तरह हम अच्छे इन्सान बन अपना गृहस्थाश्रम सतयुग बना सकते हैं और ब्रह्मपद को पा सकते हैं। तो क्या सब अपना जीवन लक्ष्य प्राप्त करने के लिए तैयार हो?

हाँ जी।

ऐसा करने में हम सफल हों, इसके लिए हमें सबसे पहले आत्मनिरीक्षण कर, अपनी कमियों व कमज़ोरियों को जानना होगा और उनके सुधार हेतु बिना किसी सोच व भय के आत्मनियन्त्रण रखते हुए अपना व अपने परिवार का उद्धार सुनिश्चित करना होगा। इसके अतिरिक्त इस पुण्य कार्य को निर्विघ्न समय पर सम्पूर्ण करने हेतु हमें बाल अवस्था के विभिन्न आडम्बरी भक्ति-भावों से बच, युवावस्था के भक्ति-भाव में जागृति से बने रहना होगा और इस प्रकार समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार सजन-भाव के वर्त्त-वर्त्ताव के फलस्वरूप यश-कीर्ति के अधिकारी बन अपना नाम रोशन करना होगा।

सजनो घबराओ मत, हिम्मत दिखाओ क्योंकि यह गृहकार्य और कुछ नहीं वरन् समभाव-समदृष्टि का वह सौखा सबक

है, जिसको आत्मसात् करने से व सजन भाव अनुसार व्यवहार में लाने से, जीवन की हर कठिनाई व विपत्ति से छुटकारा प्राप्त हो सकता है और ध्यान की एकाग्रता व स्थिरता द्वारा ख़्याल को हृदय प्रकाशित निज ज्योति स्वरूप पारब्रह्म परमेश्वर में लीन रखते हुए सहजता से 'मैं ब्रह्म हूँ' के सत्य का बोध हो सकता है। याद रखो बड़े-बड़े ऋषि-मुनियों ने यह कार्य तपस्या द्वारा सहजता से कर दिखलाया। इस सन्दर्भ में ऋषि विश्वामित्र का उदाहरण हमारे सम्मुख ही है जो राज ऋषि, श्रेष्ठ ऋषि, उत्तम ऋषि और महाऋषि तो हो गए लेकिन जब तक काम पर फ़तह न पाई तब तक ब्रह्म ऋषि न हो सके। आखिर में जब उन्होंने विषयों के प्रति इच्छा का विरोध करते हुए, कठोर साधना द्वारा शारीरिक कष्ट सहते हुए अपनी इन्द्रियों पर कन्ट्रोल करके काम पर फ़तह पाई तो वह पवित्रता के प्रतीक बन ब्रह्म ऋषि की पदवी पर पहुँचे।

अतः सजनों इससे शिक्षा लेते हुए हमें खुद पर विश्वास करना है कि अगर ऋषि विश्वामित्र या अन्य मुनिजन जो हमारी ही तरह इन्सान थे, वे ब्रह्म बोध कर इसी महातप द्वारा ब्रह्म ऋषि बन सकते थे तो हम क्यों नहीं। हम भी 'मैं ब्रह्म हूँ' का बोध कर ज्योति स्वरूप जो अपना आप है उसकी पहचान कर सकते हैं। इस सन्दर्भ में खुद से प्रश्न करना है कि मैं यह बोध क्यों नहीं कर सकता। मैं अवश्य कर सकता हूँ। खुद को कहना है कि जब कोई दूसरा इन्सान ऐसा करके दिखा सकता है तो मुझ में भी ऐसा करने की क्षमता है। अगर ऋषि विश्वामित्र बार-बार गिर कर खड़े हो सके तो मैं भी खड़ा हो सकता हूँ। यहाँ यह याद रखना महत्त्वपूर्ण है

कि ऋषि विश्वामित्र कमज़ोर पड़े पर घबराकर रुके नहीं। गिरते रहे पर हर बार विचार शब्द द्वारा ऊपर उठने का यत्न करते रहे। आख़िर में उन्होंने फ़र्स्ट का नतीजा दिखाया और ब्रह्म पद को प्राप्त किया। अतः यह समझते हुए खुद पर आत्मनियन्त्रण द्वारा तप से प्राप्त शक्ति/प्रभाव के बलबूते से किसी प्रकार की सोच में नहीं डूबना और ताकतवर बने रहना। तभी आगे बढ़ सकोगे।

आओ अब इसी सत्य को वृत्ति व स्मृति में लेने की क्रिया करते हैं ताकि हमारी बुद्धि व भाव-स्वभाव रूपी बाणे में निर्मलता का वास हो और हम उच्च बुद्धि, उच्च ख़्याल हो, सहजता से इंसानियत में ढल सकें। यह होगा मन की मैल के धुल जाने के उपरान्त अपने जीवन उद्देश्य मोक्ष को प्राप्त करने के योग्य बनना। इस हेतु सब मिल कर सात बार इस तरह से 'मैं ब्रह्म हूँ' बोलो कि रूप, रंग, रेखा रहित ब्रह्म आपके हृदय में भाव के रूप में विद्यमान हो उठे यानि सुरत रूपी, अन्दर का अपना ख़्याल 'ब्रह्म' शब्द में लीन हो जाए और शब्द 'ब्रह्म' सत्यमयता से व्यवहार द्वारा प्रकट हो जाए।

(सजन बोल रहे हैं)

मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ

ध्यान दो यह क्रिया हकीकत में जो ब्रह्म हमें निगाह नहीं आ रहा, उसको निगाह व दृष्टि में लाने की क्रिया है। यह तो गुप्त को अपने हृदय में प्रकट करने की बात है। अतः इस क्रिया को बिल्कुल अफुर यानि एकाग्रचित्त हो कर करना है ताकि हृदय में विद्यमान ईश्वर दृष्टिगोचर हो जाए। इस हेतु सबने घबराहट हटाकर, सारा भय मिटाकर पूरी श्रद्धा और विश्वास से यह क्रिया करनी है। याद रखो जो अभी इस क्रिया को ठीक से कर लेगा वह अवश्य विजयी होगा । इसलिए पूरी सावधानी से इसे करो और आज का काम कल पर मत छोड़ो। ऐसा करने वाला मूर्ख होता है और हमेशा हार ही खाता है। आओ जीवन की वास्तविक अनुभूति व हृदय में ब्रह्मभाव की विद्यमानता हेतु एक बार पुनः इस क्रिया को करते हैंः-

(सजन बोल रहे हैं)

मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ

याद रखो इस क्रिया को ठीक युक्ति अनुसार करने से जब रूप-रंग-रेखा से रहित ब्रह्म दृष्टिगोचर होगा तभी हम ज्योति स्वरूप पारब्रह्म परमेश्वर की ताकत का एहसास करते हुए इस जगत में समभाव-समदृष्टि अनुसार विचर

सकेंगे। यह मन का 'ब्रह्मशब्द' में लीन होना है और 'शब्द ब्रह्म' के विचार को अपने व्यवहार द्वारा प्रगट करने के योग्य बनने की बात है। ऐसा होने पर ही अपने नित्य सर्व शक्तिमान होने का एहसास कर सकोगे और मौत का भय भी समाप्त हो जाएगा। अतः एक बार फिर अफुरता से इस क्रिया को इस प्रकार करो कि मन और मस्तिष्क दोनों में ही 'मैं ब्रह्म हूँ ' की गूँज इस तरह से गुंजायमान हो जाए कि खाते-पीते, चलते-फिरते, उठते-बैठते आपको इस ध्वनि की गूँज ही सुनाई दे। याद रखो ब्रह्म भाव में मज़बूती लेने के लिए यह अति आवश्यक है। इस हेतु हृदय से यह गूँज उठे, मस्तिष्क में गुँजायमान हो और फिर ब्रह्म-विचार कर्म-इन्द्रियों द्वारा सुकर्मो के रूप में प्रकट हो। यह होगा राग-द्वेष आदि जैसे मनोविकारी भावों से रक्षित रह आत्मीयता के भाव में ढलना।

(सजन बोल रहे हैं)

मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ

'मैं ब्रह्म हूँ' बोलने से पहले गहरी लम्बी श्वास अन्दर तक ले जाओ और जब 'मैं' बोलो तो अपने असलियत ज्योति स्वरूप का अनुभव करो और 'ब्रह्म' बोलते समय श्वास को छोड़ो व ईश्वर के विराट रूप जगत का दर्शन करो। दोबारा श्वास

भरकर 'हूँ' कहते समय हृदय में सूक्ष्म ब्रह्म का दर्शन करो। इस तरह रूप, रंग, रेखा रहित ब्रह्म हृदय में ब्रह्म भाव के रूप में प्रगट होगा और क्रियावन्त हो उठेगा। यह अति बुद्धिमान बनने की बात है। इसलिए इस भाव में मज़बूती लेने के लिए यह क्रिया आप परिवार सहित घर में बोल कर या अन्दरूनी वृत्ति में भी कर सकते हो। इस तरह पूरा सप्ताह इस ब्रह्म भाव को मज़बूती से पकड़ में ले लेना है। इस तरह 15 दिन में ही जिस प्रकार बोर्डों में लिखा है एक ख़्याल एक दृष्टि एक दर्शन हो सकता है और आप जन्म की बाज़ी जीत सकते हो। अतः पूरी दिलचस्पी में आकर यानि लगन से यह कार्य करना है और इस हेतु इधर-उधर की बातों को सुनने की आदत छोड़ देनी है। इस तरह मंदे स्वभावों को त्यागने की कुर्बानी दिखानी है। तभी सदा पूर्णतः जाग्रत अवस्था में बने रह मनुष्यत्व अनुसार जीवन जीने में कामयाब हो सकोगे व परमपद को भी प्राप्त कर सकोगे।

याद रखो इस वर्त्त-वर्त्ताव में मज़बूती से बने रहने के फलस्वरूप ब्रह्मभाव के तेज व बल के प्रभाव से सुरत स्वयमेव कंचन रहेगी और उसे शब्द का संग प्राप्त रहेगा। यह है संकल्प कुसंगी से बचे रहने की बात।

तो कौन बहादुर ऐसा कर दिखलाएगा?

हम सारे।

तो इस हेतु परस्पर सम्बन्ध निभाते हुए व कर्त्तव्य पालन ठीक से करते हुए स्वार्थियों का मोह छोड़ना होगा। क्या यह पुरुषार्थ दिखा पाओगे?

हाँ जी।

इस सन्दर्भ में याद रखो घर वाले, समाज वाले, आपको इस निष्काम रास्ते पर अग्रसर होने से रोकने का व इसके प्रति कमज़ोर करने का हर प्रकार से सम्भव यत्न करेंगे। परन्तु आप उन स्वार्थियों की बातों में न आना और इस सुकर्म पथ पर निरन्तर बहादुरी से बने रहना। इन्सान हो तो इन्सानी दिखाना और अगर इस शुभ कार्य के लिए कुछ कुर्बानी भी देनी पड़े तो मत घबराना। यह मान कर चलना कि समभाव-समदृष्टि की युक्ति पर मज़बूत बने रह अपने निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करना सहज है। इसीलिए सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है कि:-

इन्सान है इन्सानी दिखा, इन्सानी दिखा कुर्बानी दिखा
कुर्बानी दिखा फिर नाम चला
नाम चला फिर ध्यान लगा, फिर कंचन हो के आ
फिर तूं साडे दर्शन पा, ज्योति स्वरूप नाम कहलवा
बिन सूरजों अपने प्रकाश नूं पा।

ध्यान दो यदि ख़्याल ध्यान वल व ध्यान प्रकाश वल कर आपने ऐसा कर लिया तो आपके ख़्याल की स्वच्छता आपकी भावना या विचारों से प्रगट होने लगेगी और आपके लिए एक तो आत्मिक ज्ञान को सत्यता से धारण कर वास्तविकता से जीवन जीना सहज हो जाएगा और दूसरा चित्त की कोमलता भी भंग नहीं होगी जिससे ध्यान की स्थिरता व बुद्धि की सम अवस्था बनी रहेगी और आप अपने यथार्थ यानि वास्तविकता के अनुसार जीवन जी सकेंगे। इस प्रकार सबके प्रति सजन-भाव रखना सहज हो जाएगा। यह

अवस्था आपके मन की आत्मतुष्टि व आत्मभाव में स्थिति का प्रतीक होगी। इस प्रकार इस मायावी जगत में सेवाभाव से कुशलतापूर्वक सब कर्त्तव्य ख़ुशी-ख़ुशी निभाते हुए स्वयमेव संतोष, धैर्य बल द्वारा सत्यनिष्ठ व धर्मपरायण बने रह पाना सरल हो जाएगा। यह होगा फल की इच्छा से रहित, प्रभु के हुक्म अनुसार सब कुछ करते हुए, निष्काम भाव द्वारा परोपकार कमाना व सतवस्तु के चलन अनुसार सदा एकता व एक अवस्था में आनन्दमय बने रहना। इस तरह फिर नेक नीयती से, नीतिसंगत मानव-धर्म अनुसार अफुरता से जीवन जीना। अब जीवन उद्देश्य की सिद्धि हेतु ब्रह्म भाव की महानता व महत्त्व को जानते हैं। आओ इसका एहसास करें किः-

मैं ब्रह्म हूं

जब यह ब्रह्मभाव आपके हृदय में उतरता है तो यह आपको अपनी अजरता-अमरता के विषय में इस प्रकार जनाता है किः-

ओ३म्
अमर है
आत्मा
आत्मा में है
परमात्मा
एहो असलियत ब्रह्म
स्वरूप प्रकाश
है जे ओ मेरा

अपना

हम ब्रह्म प्रकाश

हम
हम ब्रह्म प्रकाश
हां
हम हर अन्दर निवास
हम
हम हर अन्दर निवास
हां
हम हर अन्दर प्रवेश
हम
हम हर अन्दर प्रवेश
हां
हम हर अन्दर विशेष
हम
हम हर अन्दर विशेष
हां
हम ब्रह्म हम, हम ब्रह्म हां

यहाँ 'हम ब्रह्म हम' कहने से तात्पर्य है कि हम स्वयं यह बोध कर रहे हैं कि 'हम ब्रह्म हैं' और 'हम ब्रह्म हाँ' कहने का अर्थ है कि इस सत्य को स्वीकार कर हम इस तथ्य से सबको अवगत करा रहे हैं, कि ऐसा ही है।

इस सन्दर्भ में हम यह भी जानते हैं कि हम सब सजन श्री शहनशाह हनुमान जी के द्वारे पर हैं, अतः हमारे लिए आवश्यक हो जाता है कि हम समर्पित भाव से अपने

परमपिता ओ दाता हनुमान जी के वचनों को प्रवान करते हुए अपने निज असलियत ब्रह्म स्वरूप की पहचान करने में विलम्ब न करें और याद रखें कि:-

'असलियत स्वरूप है जे ब्रह्म, जैंदा रूप, रेखा नहीं रंग

-ओ३म्-

ओ३म् विच विशेष हूँ, ओ३म् तूं निर्लेप हूँ' ।

अर्थात् वो रूप-रंग-रेखा से रहित 'ब्रह्म' मुझ में विशेष है और मैं इस योग्य हूँ कि उसको व्यवहार में उतार इन्सानियत में बना रह आत्मतुष्टि से सब करते हुए जगत से निर्लेप बना रह सकता हूँ। अतः हम सबने इसी सशक्त भाव अनुसार जगत में अकर्त्ता भाव से विचरते हुए निर्लिप्त व तृप्त बने रहना है व अपनी स्वतन्त्र अवस्था व अमीरों के भी अमीर होने का एहसास करते हुए मौन वृत्ति में बने रह, सदा विश्राम अवस्था में बने रहना है। इस हेतु हमे जितना आवश्यक है उतना ही बोलने का चलन अपनाना होगा और बेकार की बात सुनने व करने का स्वभाव छोड़ना होगा। याद रखो तभी हमें सूक्ष्म ब्रह्म के विषय में अभी तक जो बात हुई है उसकी समझ आ सकेगी।

आओ अब इंसानियत में ढलने व जीवन उद्देश्य पूर्ति के लिए, 'विराट्' अर्थात् 'असलियत की पहचान' यानि 'एक हूँ, एक हाँ, एक नज़रों में एक ही एक हर अन्दर सुहा रहा, जनचर-बनचर, जड़-चेतन अनेक रूप-रंगों में हर्षा रहा', इस सर्वोत्तम, नित्य व आत्मीयता के भाव अनुरूप, मानव-धर्म को आत्मसात् करने व वर्त्त-वर्त्ताव में लाने के योग्य बन,

सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार निज यथार्थ को समझते हैं:-

'ब्रह्म स्वरूप है अपना आप, हम तो हैं ओही प्रकाश' ।।

जब हमें अपना यह यथार्थ पता चल जाएगा और उस पर अटल विश्वास हो जाएगा तो समभाव नज़रों में हो जाएगा। इस तरह समदृष्टि रूपा गुण का विकास हो, सबके प्रति सजन भाव का व्यवहार शुरू हो जाएगा। तभी तो कहा गया है कि:-

'जेहड़ा प्रकाश देखो मन मन्दिर,
ओही प्रकाश देखो जग अन्दर

ओही प्रकाश देखो रग रग में,
ओही प्रकाश देखो सारे जग में

ओही प्रकाश हुआ जनचर बनचर,
ओही प्रकाश हुआ जड़ चेतन

ओही प्रकाश है हद हद में,
ओही प्रकाश है सारे जग में

ओही प्रकाश सप्तद्वीप गगनमंडल,
ओही प्रकाश हुआ भूमंडल

ओही प्रकाश है पग पग में,
ओही प्रकाश है सारे जग में
ओही प्रकाश हुआ आद अंत,
ओही प्रकाश हुआ सूरज चन्द

ओही प्रकाश है सर्व सर्वज्ञ में,
ओही प्रकाश है सारे जग में

ओही प्रकाश हुआ निर्वाण दे अन्दर,
ओही प्रकाश हुआ जगत जितेन्द्र

ओही प्रकाश है घट-घट में,
ओही प्रकाश है है सारे जग में।'

इस तरह समभाव-समदृष्टि की युक्ति द्वारा ब्रह्म भाव को वृत्ति, स्मृति में उतार कर व बुद्धि द्वारा उसका वर्त्त-वर्त्ताव करने पर भूत, भविष्य का भेद समाप्त हो जाएगा और हम न सर्गुण में उलझ सकेंगे न ही निर्गुण में घबराएंगे। हमारे लिए सर्गुण, निर्गुण, निर्वाण, परमधाम सब एकरस हो जाएगा।

इस सन्दर्भ में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में वर्णित उपरोक्त पद्यांश से यह भावार्थ स्पष्ट होता है कि जो प्रकाश या स्वरूप हमने अपने मन मन्दिर में देखा है, जिस स्वरूप के साथ हमारा प्यार है (श्री राम, रहीम, श्री कृष्ण करीम या दस पातशाह जी के साथ) वही स्वरूप हमारा बाहर हर एक में है और वही हमारी असलियत है। यह सारा प्रतिबिम्ब मेरा ही है। इसी प्रतिबिम्ब को हर एक में देखना है, जनचर बनचर में वही है, जड़ चेतन में उसी का प्रकाश है। यही असलियत मेरा ब्रह्म स्वरूप है। इससे स्पष्ट होता है कि ब्रह्म रूप, रंग, रेखा से रहित है और ब्रह्म भाव उस ब्रह्म का स्वरूप है। इसे ही हमने भावना में उतारना है और स्वभाव के अंतर्गत इस तरह से कर लेना है कि इस पर से हमारी पकड़ न छूटे। यह बड़े ध्यान से करने वाली क्रिया है इसमें

लेशमात्र भी कमज़ोरी सांसारिकता में फँसने की बात होगी। सजनों 'वृत्ति है जे एहो कमाल, वृत्ति है जे एहो विशाल' एहो कोई मुश्किल फड़दा, विरला कोई धारण करदा। याद रखो जो इस वृत्ति में ढल जाता है उसका अंतःकरण परिपूर्णता से विशुद्ध हो जाता है। और मन-चित-बुद्धि अहंकार सब शांत हो सम अवस्था में आ जाते हैं। इस प्रकार समभाव सजनभाव के रूप में क्रियाशील हो जाता है। इस हेतु विशाल हृदय बनने की आवश्यकता है ताकि तेरी-मेरी, वड-छोट, अमीरी-ग़रीबी, मान-अपमान, दुख-सुख का कोई सवाल न हो अर्थात् एकरस सम अवस्था में बने रह सबके प्रति समदृष्टि हो। अतः जेहड़ा देखो सजनों मन मन्दिर प्रकाश, मानो ओही ब्रह्म स्वरूप है अपना आप।

इसी सत्य को स्वीकारते हुए अब सबने ब्रह्म भाव को इसी तरह धारण करके आना है। याद रखो हृदय में एक बार ब्रह्म भाव के उतरने का एहसास हो गया तो बार-बार इस क्रिया को करने से यह अवश्य स्थिर हो जाएगा। इस तरह वह भाव फिर मन को भा जाएगा और आपका अपना हो जाएगा। फिर मन इधर-उधर भटकेगा नहीं और सब सवाल हल हो जाएंगे।

अंततः हम कहना चाहते हैं कि जो भी सजन इस क्रिया को समझदारी से अमल में लाना आरम्भ कर देगा यानि इसे अपने स्वभाव के अंतर्गत कर, वैसा बने रहने योग्य बन जाएगा, वह सजन 'विचार ईश्वर है अपना आप' के भाव को आत्मसात् कर, अपनी भावना व स्वभाव को इस तरह से निर्मल रख पाने में सक्षम हो जाएगा कि फिर यह ब्रह्म भाव

उसके मन को भा जाएगा। फिर किसी कारण भी इस भाव से पकड़ छूटने का भय नहीं रहेगा। इस तरह जब सुदृढ़ता से अपनी अजर-अमर अवस्था का बोध हो जाएगा तो तीनों तापों के टैम्प्रेचर के साथ-साथ मौत का भय भी समाप्त हो जाएगा। यही निर्भयता हर सजन को सांसारिकता में उलझ अज्ञान धारणा करने के प्रति रक्षित रखेगी व गृहकार्य समयबद्ध करने के प्रति उत्साहित व जाग्रत रखेगी। इस प्रकार फर्स्ट का नतीजा दिखाने में सफलता प्राप्त होगी। यही नहीं इस तरह आप सजन-भाव व गृहस्थ-आश्रम को सही ढ़ंग से निभाने के लिए जो भी सबक अब तक पढ़ चुके हैं, उनको सही ढंग से यानि परिपूर्णता से अमल में लाने के काबिल हो जाओगे।

सजनो यही एकमात्र तरीका है जिसको अपनाने से ख़्याल ध्यान वल व ध्यान प्रकाश वल ठहरा रहेगा, बातचीत करने से मुस्कराहट आएगी, बदन प्रफुल्लित होगा, हृदय खिडेगा और मुख चमकेगा। इस प्रकार सम पर खड़े हो जाओगे व एक दूसरे के प्रिय व मित्र बने रहोगे और एकता के सूत्र में बँधे रह अफुरता से जीवन लक्ष्य प्राप्त करने का कार्य सिद्ध कर सकोगे। यह होगा दिव्य-दृष्टि के सबक को प्राप्त करने का अधिकारी बन, तीनों कालों को जानने की योग्यता प्राप्त करना यानि ख़्याल का सचखंड में वास होना व सत्य धारणा द्वारा सत् जबान, सत् खान-पीन, सत् बोलचाल, सत् उपदेश, सत् ध्यान, सत् वर्त्ताव करते हुए अपने मानव होने की अवस्था में बने रहना। यह ईश्वर की उत्कृष्ट कृति होने का सत्य सिद्ध करने की बात है। अंततः इस साल निश्चित सफलता प्राप्त करने हेतु याद रखो :-

हिम्मत दिखाई ओ जावो हिम्मत वधाई ओ जावो।
हिम्मत न हारनी ओ बेटा, हिम्मत बढ़ाई ओ जावो।

हिम्मत है जगजीत मीतां दी ओ मीत बेटा।
ए सौखा तरीका दे के सब नूं हर्षाई ओ जावो।

अर्थात् हिम्मत ही अब आपकी सबसे बड़ी मित्र है। इसका आश्रय ले इस तरीके से चलते हुए सारे परिवार व जगत को हर्षा लो।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरांत सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियंत्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्मा-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

सब प्रसन्नचित्तता से मुस्कराते हुए बैठो क्योंकि आज से हम परमपद की प्राप्ति हेतु अपने जीवन के प्रमुख उद्देश्य की ओर अग्रसर होने लगे हैं। अतः आज के दिन को खुशी का दिन मानते हुए सब प्रसन्नतापूर्वक अफुरता से कक्षा में बैठो। क्या सब तैयार हैं?

हाँ जी।

आत्मनिरीक्षण करो कि कहीं किसी के ख़्याल को जगत के फुरने ने तो नहीं जकड़ रखा यानि क्या सब जगत के सब झंझटों से आज़ाद होकर अब अफुर बैठे हैं?

हाँ जी।

तो आओ फिर आगे बढ़ते हैं।

हम समझते हैं कि गत सप्ताह बताई युक्ति के अनुरूप परमपद का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए सभी सजनों ने अपने हृदय में ब्रह्म भाव के रूप में वास्तविक सत्य धार लिया होगा व परमार्थ अनुसार चित्तवृत्ति ढाल ली होगी। इस संदर्भ में सबकी यादगीरी के लिए, अपने जीवन के मुख्य उद्देश्य यानि आत्मपद की प्राप्ति करने हेतु जो क्रिया गत सप्ताह बताई गई थी, एक बार फिर उसकी दोहराई करते हैं।

युक्ति अनुसार इस क्रिया के अन्तर्गत हमें सात बार 'मैं ब्रह्म हूँ' बोलते हुए, रूप, रंग, रेखा से रहित 'ब्रह्म' को भाव के रूप में अपने हृदय में विद्यमान करना है यानि उसकी विद्यमानता को अपने ध्यान में इस तरह से उतारना है कि वह रूप, रंग, रेखा से रहित ब्रह्म दृष्टिगोचर हो जाए। फिर उसी भावना अनुसार चिन्तन करना है और उस 'ब्रह्म' को भाव रूप से स्वभाव के अन्तर्गत कर लेना है। आओ अब जैसे बताया है, उसी अनुसार सात बार 'मैं ब्रह्म हूँ' बोलते हुए इस क्रिया को करते हैं। सब लम्बा श्वास भर लो और फिर बोलो 'मैं ब्रह्म हूँ' :-

(सब सजन बोल रहे हैं)

मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ

यह क्रिया करते समय आप सब सजनों को कैसा लगा?

बहुत अच्छा लगा।

क्या यह क्रिया मन को भाई?

हाँ जी।

क्या हम समझें कि यह क्रिया मनभावन है?

हाँ जी।

तो याद रखो जो मनभावन होता है उसको हमेशा दिल लोचता है। दिल करता है कि उसका संग-साथ हमेशा बना रहे। अतः उस मनभावन का यानि रूप-रंग, रेखा से रहित 'ब्रह्म' का संग करने हेतु, हमारा ख़्याल उसे तब तक लोचे, जब तक कि वह हमारी भावना में पूरी तरह न उतर जाए और इस तरह हमारे स्वभाव के अन्तर्गत न हो जाए। कहने का तात्पर्य यह है कि जब तक उस 'ब्रह्म' के जो गुण हैं वह हमारे गुण नहीं बन जाते और हम उनका व्यवहारिक रूप में सक्षमता से इस्तेमाल करने के योग्य नहीं बन जाते, तब तक

यह लोच हमारे अन्दर मज़बूती से बनी रहनी चाहिए। ठीक है?

हाँ जी।

आओ एक बार फिर इस क्रिया द्वारा हमने क्या किया उसे समझें:–

जब हमने 'मैं' बोला तो क्या हुआ? क्या हमें कुछ नज़र आया?

नहीं जी।

अर्थात् हमारे सुरत रूपी ख़्याल में ध्यान द्वारा रूप, रंग, रेखा रहित 'ब्रह्म' का एहसास उतरा। फिर जब हमने 'ब्रह्म' कहा तो क्या हुआ?

मौन।

तब वह रूप, रंग, रेखा रहित 'ब्रह्म' 'विराट' यानि जगत के रूप में प्रकट हो गया। इस प्रकार जब हम उस रूप, रंग, रेखा से रहित 'ब्रह्म' का 'विराट' रूप में दर्शन करते हुए उसका यथार्थ समझने के योग्य हो गए तो समझो कि निराकार व साकार 'ब्रह्म' का सत्य हमारे सामने प्रगट हो गया। फिर जैसे ही हमने निगाह उस प्रगट 'बह्म' पर ठहराई तो विश्व रूप में सर्वव्यापक 'परमात्मा' का समरूपता से हर वस्तु में विद्यमान होने का सत्य बोध हो गया। अब इसी सत्य बोध को सूक्ष्मतः हमने अपने अन्दर भाव रूप में उतारना है। कैसे? इस हेतु समझो कि जब हमने 'हूँ' बोला

तो हमने उस सत्य बोध को ऐसे स्वीकारा जैसे उसे धार व भाव में उतार हम ब्रह्म यानि सर्वमय होने की अवस्था को प्राप्त हो गए हों।

अब वह 'ब्रह्म' जो 'विराट' रूप में है वह जगत के साथ-साथ हमें अपने अन्दर भी नज़र आने लगा। इस तरह ब्रह्म धारणा के बाद हमें एहसास हुआ कि यह तो हमारे अन्दर पहले से ही आत्मिक शक्ति के रूप में विद्यमान है।

अब विचारो कि इस क्रिया को करने की आवश्यकता क्यों पड़ी?

मौन

इसलिए कि हमारे हृदय में अज्ञान छाया हुआ है। अतः इस सत्यज्ञान के प्रकाश से अज्ञान को मिटाने के लिए हमें यह क्रिया करनी पड़ी।

इस सन्दर्भ में याद रखना है कि रूप, रंग, रेखा रहित जो 'ब्रह्म' है हम उसका अनुभव तो कर सकते हैं पर उसे धार नहीं सकते। हम तो केवल 'विराट' रूप में जो उस सर्वव्यापी का दर्शन प्रतिबिम्बित है, सूक्ष्म रूप में उसको अपने सूक्ष्म शरीर में भाव रूप में विद्यमान करते हुए उसके प्रभाव अनुसार उसको अपने जीवन में उतार, मन-वचन-कर्म द्वारा उसका इस्तेमाल कर सकते हैं। याद रखो इस तरह जब हम अपने आप को दैनिक दिनचर्या के दौरान कार्यव्यवहार करते हुए सत्यता से उसका प्रयोग करने में सक्षम पाते हैं तो यह हमारी जीवित व चैतन्य होने की अवस्था होती है।

फलतः हम किसी भी अच्छी या बुरी परिस्थिति के प्रभाव से अचेतन अवस्था को प्राप्त नहीं होते।

अब जिस तरह अभी समझाया है, सब उसी तरह सात बार 'मैं ब्रह्म हूँ' बोलोः-

(सब सजन बोल रहे हैं)

'मैं ब्रह्म हूँ'
'मैं ब्रह्म हूँ'
'मैं ब्रह्म हूँ'
'मैं ब्रह्म हूँ'
'मैं ब्रह्म हूँ'
'मैं ब्रह्म हूँ'
'मैं ब्रह्म हूँ'

याद रखो यदि इस क्रिया को ठीक तरह से पकड़ लिया तो आगे बताई जाने वाली युक्ति को पकड़ना आसान हो जाएगा। फिर माया के स्वामी का संग प्राप्त होने के कारण मायावी जगत नहीं सताएगा। अब फिर बोलोः-

(सजन बोल रहे हैं)

मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ
मैं ब्रह्म हूँ

इस क्रिया को ठीक प्रकार करने से क्या हुआ?

यह सारा जगत जिससे हम घबराते हैं कि कहीं हम इसमें फँस न जाए वह जगत सूक्ष्मतः हमारे उदर में समा गया। उदर में समाने का अर्थ है कि वह हमारे अधिकार में हो गया और हम जब चाहे, जितना चाहे, उसे अपने मन-वचन-कर्म द्वारा प्रकट कर सकते हैं। इस तरह वह हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता और हम जिस तरह चाहे उसका इस्तेमाल कर सकते हैं। अतः सतर्क रहना है कि हमें जगत के उदर में नहीं खेलना क्योंकि उसके उदर में खेलना जन्म-मरण में फँसना है और इसके विपरीत जगत का हमारे अधिकार में हो जाना जन्म-मरण के चक्रव्यूह से मुक्त हो जाना है। इस तरह हम नित्यता को यानि अजरता-अमरता को प्राप्त हो सकते हैं। जीवन जीने के लिए यह ही सबसे ताकतवर भाव है। याद रखो ऐसा होने पर ही सर्व एकात्मा का दर्शन हो सकता है। इस प्रकार मन से नकारात्मक द्वि-द्वेष, छल-कपट आदि जैसे करूर भाव समाप्त हो सकते हैं और उनके कुप्रभावों से बचे रह हम सजन-भाव के व्यवहार में बने रह सकते हैं। अब जानो कि यही अवस्था एक निगाह एक दृष्टि होने का प्रतीक होती है जिसके फलस्वरूप समदृष्टि जैसे महान व उत्तम गुण द्वारा मन में सजन भाव का उद्‌भव होता है और फिर इन्सान अपने मन-वचन-कर्म को सहजता से वैसे ही साधे रख पाता है व एक अच्छे व नेक इन्सान की मर्यादा में बने रह सदा सर्वहित के लिए सोचता, बोलता व करता है। तभी तो उस परमपद पर आसीन व्यक्ति की गणना अपनी हस्ती, हैसियत व अधिकारों सहित कर्त्तव्यों को पहचानने वाले अति बुद्धिमान यानि सूक्ष्म दृष्टि व्यक्तियों

में होती है। याद रखो सूक्ष्म दृष्टि इन्सान ही, छोटी से छोटी और कठिन से कठिन परिस्थिति में भी, सत्य को खोज कर उसे धारने व उस पर बने रहने की सक्षमता रखता है। चाहे कितनी ही गन्दगी उसके आगे रख दो परन्तु फिर भी उसकी दृष्टि उस गन्दगी के आर-पार हो उसमें छिपे सत्य को यानि रहस्य को खोज लेती है। इस प्रकार ब्रह्मभाव का उद्भव होते ही वह आत्मविश्वासी उसी अवस्था में बने रहने हेतु यथा शक्ति, अपने मन व जगत पर शासन करते हुए सबको युक्तिसंगत मानवीय गुणों में बनाए रखने का परोपकार, निष्काम भाव से करने का पराक्रम दिखा पाने में सक्षम होता है। याद रखो कि व्यक्ति का अस्तित्व में आ, निज व्यक्तित्व को धारे रखने हेतु आत्मबल रूपी शक्ति का प्रयोग करना होता है ताकि वह अपनी यथार्थ ईश्वरीय हस्ती का प्रतीक बना रहे। यहाँ यथार्थ ईश्वरीय हस्ती में बने रहने से तात्पर्य 'विचार ईश्वर है अपना आप' में बने रहने से है। अब प्रश्न यह उठता है कि एक मानव में आत्मिक बल का वर्धन कैसे हो सकता है?

आत्मिक ज्ञान प्राप्ति से।

बिलकुल ठीक। याद रखो आत्मिक ज्ञान प्राप्ति हेतु जब हम पूरी तरह से जुट जाते हैं तो वह आत्मिक ज्ञान जैसे-जैसे हमारे अन्दर घर करता जाता है और हम उसे धारते हुए व्यवहार द्वारा प्रकाशित करते जाते हैं तो उस सत्यज्ञान के प्रकाश की ऊर्जा से आत्मिक बल सशक्त होता जाता है। इस प्रकार व्यक्तित्व यानि धर्म रूप हस्ती के नित्य हृदय में विद्यमान रहने से आत्मबल मज़बूत होने की प्रतीति होती है

जिससे व्यक्ति आत्मनिर्भर बनता है और वह खुद स्वतन्त्रता से सब कुछ करने के योग्य हो जाता है। इसका अर्थ है कि वह आत्मिक ज्ञान के वर्त्त-वर्त्ताव के द्वारा दुनियां से आज़ाद रहते हुए अपनी शक्ति के सदुपयोग द्वारा सांसारिकता के प्रभावों को मन में घर करने से पहले नष्ट करने में सक्षम होता है। यह व्यक्ति के पालन-पोषण के ढंग व उसके अच्छे-बुरे संग पर निर्भर करता है। इस सन्दर्भ में हमें याद रखना है कि मन का ईश्वर में लीन रहना संग कहलाता है व जगत में फँसना कुसंग कहलाता है और इसी अनुरूप फिर सकारात्मक व नकारात्मक भाव-स्वभावों की बनत बनती है और वैसा ही अच्छा या बुरा परिणाम सुख-दुःख के रूप में प्राप्त होता है।

जानो कि यह बहुत महत्त्वपूर्ण बात है क्योंकि इसके प्रति सावधान रहने व न रहने पर ही जीवन का उद्धार व विनाश निर्भर करता है। इसी अनुसार ही संसारी व परमार्थी हैसियत बनती है व बिगड़ती है। यह ही व्यक्ति के निष्काम व स्वार्थ रास्ते पर चढ़ने का हेतु होती है यानि व्यक्ति की आर्थिक, सामाजिक व नैतिक दृष्टि से योग्यता-सूचक स्थिति होती है। यही उस व्यक्ति की शक्ति व प्रभाव का मापदण्ड यानि प्रतिष्ठा का सूचक होती है।

अतः अपनी यथार्थ हस्ती को पहचान इन्सानियत अनुरूप ढलने में हम सफल हो इस हेतु सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार हमें ध्यान को प्रकाश वल रख संकल्प कुसंगी से बचे रहने की क्रिया सावधानी व अक्लमंदी से करनी होगी। इसके लिए हमें मन में उत्पन्न होने वाली कार्य करने की

इच्छा को उद्देश्य व परिणाम सहित समझने के प्रति विवेकशीलता से काम लेना होगा और इच्छा उठते ही हमारे लिए वह कार्य करना उचित है या नहीं, अविलम्ब यह फैसला लेने के स्वभाव में ढलना होगा ताकि मन में इच्छाओं का ढेर लगने पर हम उस असमंजस अवस्था को प्राप्त न हों जिससे हमारा बल और बुद्धि दोनों ही सत्य-असत्य की परख कर उसे व्यवहार में लाने में कमज़ोर पड़ जाएँ और इस प्रकार विचार पकड़ से छूट जाए।

यह सावधानी इसलिए आवश्यक है ताकि उन संचित इच्छाओं पर क्रिया न होने के कारण कहीं हमारा मस्तिष्क बोझिल व तनावयुक्त न हो जाए और हम हर वक्त सोच में डूबे रह मन में उठती संकल्प-विकल्पों की तरंगों से हताहत हो ब्रह्म भाव में सुदृढ़ता से बने रहने में अयोग्य हो जाएँ और हमारे मन में अन्य कष्टदायक दुर्भाव घर कर जाएँ। यह ईश्वरीय आदेशों का पालन न कर पाने की स्थिति होगी व संकल्प-विकल्प में फँस अशुद्धता या अस्पष्टता के कारण अज्ञान धारणा द्वारा नीच वृत्तियों में ढलने की बात होगी और हम अति कष्ट को प्राप्त होंगे। याद रखो यह होगा परमार्थ के रास्ते से भटक स्वार्थ के रास्ते पर अग्रसर होना और सदाचारिता के हेतु सम, सन्तोष, धैर्य, सच्चाई, धर्म के स्थान पर काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार के चंगुल में फँस भ्रष्टाचार, दुराचार व व्यभिचार अपनाना।

हमारे किसी के साथ ऐसा न हो उसके लिए सजन श्री शहनशाह हनुमान जी के वचनानुसार मूलमन्त्र शब्द को ही निज ब्रह्म सत्ता के रूप में गुरु मानो व इस महान सत्ता को

ग्रहण कर शब्द ब्रह्म के विचार अनुसार एक निगाह एक दृष्टि द्वारा ईश्वर है अपना आप के सत्य के पारखी बनो और अपने यथार्थ असीमित बल को जानो। इस प्रकार एक दर्शन यानि सर्वव्यापक भगवान आपके ख़्याल में स्थित हो जाएगा। ऐसा होने पर होगा समदृष्टि जैसे महान गुण का विकास। फिर उसी शब्द विचार से जुड़कर सजन-भाव और गृहस्थाश्रम के वचनों पर परिपक्व होने पर जो प्रकाश मन-मन्दिर में देखोगे, वही प्रकाश स्वयमेव सारे जग में भी दिखाई देगा। फिर उसी प्रकाश में अटल होकर हर हालत में एकरस रहने पर सत्य बोध होगा कि 'मैं अजन्मा हूँ, मेरी आत्मा अमर है'। फिर एक आत्मा होकर देखोगे कि सर्व-सर्व वही ब्रह्म ही ब्रह्म है। फिर 'ब्रह्म विशेष भी है निर्लेप भी है और रूप, रंग रेखा से बाहर है' के सत्य को जान ब्रह्मज्ञानी हो जाओगे और इस प्रकार ब्रह्म पदवी पाकर जगत के सब कार्य करते हुए अकर्त्ता बने रहोगे व कर्मगति में नहीं उलझोगे।

ऐसा होने पर कह उठोगे कि-

आहा मेरी ब्रह्म सत्ता हनुमान जी दे वचन करो प्रवान,
अपना आप लवो पहचान ओ मेरी ब्रह्म सत्ता

ओ हर अन्दर प्रकाशे कोने-कोने डाली-डाली,
हर अन्दर ओ जापे ओ मेरी ब्रह्म सत्ता

ब्रह्म सत्ता पकड़ो इन्सान पा लवो सजनो आत्मिक ज्ञान,
ब्रह्म सत्ता हिवे हाज़रा हज़ूर निकट हिवे निवे कोई दूर।

ब्रह्म सत्ता है अजपा जाप हम तो हैं सारा जग प्रकाश,
ओ मेरी ब्रह्म सत्ता आहा मेरी ब्रह्म सत्ता

ब्रह्म सत्ता है बड़ी महान ख़ुद हूँ मैं आप भगवान,
ओ मेरी ब्रह्म सत्ता आहा मेरी ब्रह्म सत्ता

ओ हर अन्दर प्रकाशे कोने-कोने डाली-डाली,
हर अन्दर ओ जापे मेरी ओ ब्रह्म सत्ता।

इस अवस्था को प्राप्त हो व्यक्ति कह उठता है 'मैं ब्रह्म हूँ' । इसलिए मैं निर्वाण की ओर उन्मुख परमधाम में जगमगा रहे सूरजों के सूरज के प्रकाश की शक्ति से सर्गुण व निर्गुण के खेल के सत्य का पारखी होते हुए, मनुष्य रूप में सर्गुण व निर्गुण का खेल एकरसता से खेलने में खुद को सक्षम पाता हूँ। इस प्रकार मैं ब्रह्मज्ञानी पूरी सुध-बुध के साथ जगत में विचरते हुए भी निर्द्वन्द्व, निर्विघ्न, निर्विकार, निर्वैर, निर्भय व निर्लिप्त बना रह समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार सबके प्रति सजन-भाव का व्यवहार कर पाता हूँ। यह ही तीनों तापों के टेम्प्रैचर से छुटकारा पा मेरे मन की संकल्प रहित शान्त व विश्राम अवस्था का रहस्य है। याद रखो यही तो है जीवित (उत्साह, शक्ति आदि से युक्त) और चैतन्य अवस्था (आत्मस्वरूप) में बने रह 'जो समभाव यानि एक निगाह एक दृष्टि देखनी होती है उसका बिना यत्न के प्राप्त होना' और जन्म की बाजी को जीत लेना और तीनों लोको का राज्य प्राप्त करना। इसलिए हमारे लिए बनता है कि हम भी इस सक्षमता को धारें व इस हेतु समझदारी से काम लेते हुए किसी भी कारण अचेतन अवस्था को प्राप्त होने से बचे रहें। निश्चित ही ऐसा होने पर न भीड़ खलेगी न एकान्त। सर्वदा

हम उत्साह व शक्ति युक्त हो पराक्रमी बने रहेंगे व इस तरह आत्मस्वरूप में स्थित रह पाएंगे। याद रखो ऐसा सुनिश्चित करने के लिए हमें कदम-कदम पर विचारसंगत आत्मनिरीक्षण करते हुए स्वयं तो आत्मसुधार करना ही होगा साथ ही अपने बच्चों के उज्ज्वल व समृद्धिशाली भविष्य हेतु उन्हें भी आत्मिक ज्ञान प्रदान कर परमार्थ की राह पर अग्रसर करना होगा। ध्यान से समझो यही धर्मपरायणता से जीवन जीने की बात है। धर्मपरायण जीवन जीने योग्य बनना मनुष्य की श्रेष्ठ अवस्था का प्रतीक होता है और जब कोई संसार में भटका हुआ इन्सान इस उत्तम अवस्था को प्राप्त करता है तो ईश्वर से कह उठता है:-

मुझे क्या हो गया, तूने क्या कर दिया, मैं तो तुम में खो गया, तूं ही तूं हो गया।

हम चाहते हैं कि हम सब भी जगत में भटके हुए इन्सान ईश्वर से वार्त्तालाप कर इस उत्तम अवस्था को प्राप्त करने का आनन्द उठाएं। इस हेतु आओ खड़े होकर सब ईश्वर से कहते हैं:-

मुझे क्या हो गया, तूने क्या कर दिया, मैं तो तुम में खो गया, तूं ही तूं हो गया।

क्या ऐसा करने से सबको उस ईश्वर से वार्त्तालाप करते हुए असीम आनन्द प्राप्त हुआ?

हाँ जी। हमें ऐसा आनन्द प्राप्त हुआ जिसका हमनें जीवन में कभी अनुभव नहीं किया।

तो फिर इसे बनाए रखना और वार्त्तालाप के माध्यम से उस ईश्वर से जो सम्पर्क अभी स्थापित हुआ उसे भूलकर भी मत तोड़ना। कहने का तात्पर्य यह है कि इस सदाचार के मार्ग को कदाचित् न तो स्वयं छोड़ना और न ही पारिवारिक सदस्यों को इससे वंचित रखना।

जान लो कि यथार्थ में यह शान्ति व आनन्द का अनुभव करते हुए सुरत की विश्राम अवस्था होती है क्योंकि आत्मिक ज्ञान के प्रभाव से मन को शान्ति प्राप्त होती है व शान्त मन के प्रभाव से पूरे शरीर को सकारात्मक ऊर्जा व स्फूर्ति प्राप्त होनी आरम्भ हो जाती है जिसके कारण वह पराक्रमी हर परिस्थिति से अप्रभावित सदा चैतन्य अवस्था में बना रहता है और इसी असीम सक्षमता के कारण वह जीवन में जो भी करता है, समझदारी से, सर्वहित के लिए अकर्त्ता भाव से ही करता है। यह ही होता है इन्सान का असली जीवित, जाग्रत व जगजीत ज्योतिस्वरूप। इस प्रकार वह तथ्य व सत्य को 'मन जितयो जग जीत' को चरितार्थ कर लेता है और सत्य व धर्म का प्रतीक युग पुरुष के नाम से जाना जाता है। ऐसा अनुभव करते ही वह फिर बड़े मधुर व आनन्ददायक स्वर में कह उठता है:-

मैं तो घर पहुँच गया जी, तोड़ के सारे बन्धन
अब तो मेरी निगाह में है जी एक दृष्टि एक दर्शन
आहा हा हा.......

मुझे सब मिल गया, मुझे सब मिल गया, मुझे सब मिल गया

यह होती है मनुष्य की आत्मतुष्ट अवस्था जिसके प्राप्त होने

पर वह अपनी आत्मा की अजरता-अमरता का बोध कर अमीरों का अमीर हो जाता है। जान लो कि यही सत्यनिष्ठा और धर्मपरायणता से जीवन जीने का सुदृढ़ आधार है।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरांत सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियंत्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्मा-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त्त-वर्त्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शान्ति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

अभी हमने उस ईश्वर से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना की। हम जो भी माँग रहे हैं, वह ईश्वर हमें प्रदान करे, इसके लिए हमें क्या यत्न करना होगा?

मौन।

क्या कभी हमने इस बात पर विचार किया है कि वह ईश्वर हमें बल, बुद्धि व सुमति कब प्रदान करेंगे?

मौन।

निःसंदेह वह यह सब हमें तभी प्रदान करेंगे जब उन्हें लगेगा कि हम उन द्वारा प्रदत्त बल को सम्भाल सकते हैं, बुद्धि को परोपकार के काम में लगा सकते हैं और सदाचारिता से धर्मपरायण बने रह सकते हैं। इस तरह हमारी योग्यता की परख करने के पश्चात् ही वह हमें यह सब प्रदान करेंगे। अन्यथा जितना मरज़ी यत्न करते रहो यह सम्भव नहीं हो सकता। इसीलिए सच्चेपातशाह जी कहते हैं कि जीवन में विचार अपनाओ।

याद रखो विचार शब्द बड़ा महान है। विचार करने से ही हमें समझ आएगी कि जब से यह सृष्टि बनी है तब से लेकर अब तक जो भी बल, बुद्धि या सुमति प्राप्त कर बलवान, बुद्धिमान बना व उसने जगत से निर्लिप्त रह सदाचार अपनाया, वह मात्र भक्तिभाव अपनाने से ही सम्भव हो पाया। भक्ति भाव अपने आप में उपासना है। इसी उपासना द्वारा मनुष्य जगत के मायावी आकर्षण के प्रभाव से विमुक्त रह ईश्वर के हुक्म यानि वचनों की पालना के प्रति सुदृढ़ रह पाता है और इस तरह अहंभाव से रहित हो जनचर, बनचर, जड़-चेतन की सेवा निष्काम भाव से कर पाता है। यह भक्ति-भाव की महत्ता है।

अतः इसको बड़ी गहराई से सूक्ष्मतः समझने की आवश्यकता है। अन्यथा नादानों की तरह इस भाव को अपनाने पर आसक्ति का भय उत्पन्न हो जाता है और व्यक्ति सन्मार्ग से भटक जाता है। तात्पर्य यह है कि संसार में जिस भाव से विचरते हो भक्ति भाव में उससे भी अधिक सतर्क होकर विचरने की आवश्यकता है। एक सचेतन व्यक्ति ही

भक्ति भाव में स्थिर बना रह सकता है। इस विषय में आगे चलकर आपको शास्त्र अनुसार अच्छे से समझाएंगे। याद रखो इस विषय पर जैसे आपको समझाया यदि आपने ठीक वैसा ही अपना लिया तो भक्ति भाव द्वारा आप हकीकत में वह शक्ति प्राप्त कर लोगे जिससे आपकी बुद्धि सचेत हो जाएगी। बुद्धि सचेत हो गई तो सुमति में आ जाओगे। याद रखो बुद्धि की अचेतन अवस्था के कारण ही हम कुमति में फँसे हुए हैं। अतः इस अचेतन अवस्था से उबरने के लिए अब सब तैयार हो जाओ और इस हेतु बेहरूनी वृत्ति में बाहर के मन्दिरो में जाना छोड़ दो और अन्दरूनी वृत्ति में अपने मन को मन्दिर बनाना आरम्भ कर दो। याद रखो यदि ऐसा कर लिया यानि ख़्याल ब्रह्मभाव के साथ जुड़ गया तो निश्चित ही वातावरण पावन व विशुद्ध हो जाएगा। फिर सब काम आसान हो जाएगा।

अभी तो जो ब्रह्मभाव के विषय में बताया जा रहा है उसे सूक्ष्मतः अपनाने की व समयबद्ध उसको अमल में लाने की आवश्यकता है।

इस हेतु सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ से उद्धृत निम्न पंक्तियाँ सब मिल कर बोलोः-

ब्रह्म स्वरूप है जे प्रकाश जेहड़ा
ब्रह्म स्वरूप है जे नाम मेरा
हर जनों में ओ प्रकाशे
ज्योति स्वरूप अपना आप ही जापे।

यह बोलते समय सब अनुभव करो कि वह रूप-रंग-रेखा से

रहित ब्रह्म, भाव रूप में, हमारे हृदय में विद्यमान है। उसकी विद्यमानता स्वीकारते हुए यानि उसे अनुभव करते हुए ये पंक्तियां एक बार फिर से बोलोः-

ब्रह्म स्वरूप है जे प्रकाश जेहड़ा,
ब्रह्म स्वरूप है जे नाम मेरा।।
हर जनों में ओ प्रकाशे,
ज्योति स्वरूप अपना आप ही जापे।।

अब सब इसी ब्रह्म भाव में मज़बूत बने रहो और ध्यान से सुनो कि साजन परमेश्वर हमें क्या कह रहे हैंः-

बलधारी जी ए फरमाया दासी तुहानु आख सुनाया।
ब्रह्म नाल ब्रह्म हो जा, तूं ब्रह्म नाल ब्रह्म हो जा।।

अर्थात् वह हमें निर्देश दे रहे हैं कि 'ब्रह्म नाल ब्रह्म हो जा'। जब हम जीवन के लिए महत्त्वपूर्ण उनके इस निर्देश को अनसुना कर उसकी तरफ गौर नहीं करते तो वे हमें फिर सख्ती से कहते हैं कि 'तूं ब्रह्म नाल ब्रह्म हो जा' ताकि हम उनके इस निर्देश को सुन कर इसकी पालना हेतु तत्पर हो जाएँ और अपने जीवन लक्ष्य को प्राप्त कर लें। इस सन्दर्भ में हम सबसे पूछना चाहते हैं कि क्या सबको अपना जीवन लक्ष्य याद है?

हाँ जी।

वह क्या है?

आत्मपद को प्राप्त करना।

इस सन्दर्भ में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है कि :-

ओ३म् तत् सत् ब्रह्म, ओ३म् तत् सत् ब्रह्म।
सत् चित्त आनन्द स्वरूप, जैंदा रूप रेखा न रंग।

ओ३म् तत् सत् ब्रह्म, ओ३म् तत् सत् ब्रह्म।।
एहो सजनों है अफुर अवस्था, रैहंदा ओ आप मग्न।
खालस सोना खोट न कोई, चमक रिहा आनन्द कन्द।।
हीरा सजनों परखना जे, मिल करो हनुमान जी दा संग।।
शहनशाह अमर है दुनियां ते, इक नाम ओन्हां दा बजरंग।।

अर्थात् ईश्वर कहतें हैं कि इस सत्य को मानो कि हमारा जो सत्य तत्व है, वह ब्रह्म है। यदि इस मूल तत्व के अनुकूल ही हमारे अन्दर भाव उठते हैं व अमल द्वारा स्वभाव के रूप में विकसित होते हैं तो यह हमारे विकास का द्योतक होता है। इसके विपरीत यदि इस मूलतत्व के प्रतिकूल हमारे अन्दर नकारात्मक भाव उठते हैं तो यह एक मानव के लिए नुकसान दायक होता है। तो क्यों हम यह नुकसान उठाने की भूल बार-बार करते हैं? इस बात पर हमें विचार करना होगा और जो सत्य है उसे स्वीकार कर तद्नुकूल ही आचार, विचार व व्यवहार दर्शाना होगा। याद रखो तभी जो 'अलफ' का तत् यानि सार रूप सत्य है वह प्रकाशित हो सकेगा और हम 'अलफ' में से 'ये' प्राप्त कर ब्रह्म का दर्शन कर सकेंगे। यह चलन हमें अन्दरूनी और बैहरूनी दोनों वृत्तियों में अपनाना होगा ताकि हम संकल्प रहित हो अफुर अवस्था को प्राप्त हो सकें और रूप, रंग, रेखा से रहित हो नित्य भाव से आनन्दमय जीवन व्यतीत कर सकें। याद रहे सतयुग में यही चलन होता है और सब संकल्प रहित हो

अपने सत्-चित्-आनन्द स्वरूप में मग्न रहते हैं। तो क्या ऐसा करना हम सबके लिए कठिन है?

नहीं जी।

याद रखो यह कोई बड़ा काम नहीं है। यदि हमारा ख़्याल सब तरफ से हटकर एकाग्र हो जाए तो हम इस कार्य को समझदार इन्सान की तरह सहजता से कर सकते हैं। तब फिर बाहर किसी से कुछ प्राप्त करने की आवश्यकता नहीं रहेगी और इन्सान अपने इसी मूल तत्व रूपी हीरे की सार को परख सकेगा। क्या सब ऐसा करना चाहते हो?

हाँ जी।

क्या 'मैं' यानि 'निज स्वरूप तत्व' जो 'हीरा' हूँ, उसकी परख कर, उसको इस्तेमाल में लाते हुए, अपने वर्त्त-वर्त्ताव द्वारा उसकी झलक सबको दर्शाना चाहते हो?

हाँ जी।

तो फिर सावधान रहना और संसारियों के कुसंग में फँसने के स्थान पर सजन श्री शहनशाह हनुमान जी की युक्तियों का संग कर उन्हें ही अमल में लाना। याद रखो महाबीर बजरंगबली के नाम से जाने जाते हैं जिन्हें कोई तोड़ नहीं सकता। उनकी युक्ति प्रवान कर शक्तिशाली होने पर हमें भी उनकी भांति कोई हानि नहीं पहुँचा पाएगा।

सभी मानेंगे कि यह तो समस्त तुच्छ उद्देश्यों की प्राप्ति के स्थान पर सबसे श्रेष्ठ उद्देश्य को प्राप्त करने की बात है

क्योंकि आत्मपद अपने आप में वह सर्वोपरि, सर्वोत्तम व महान पद है जिसके प्राप्त होने पर व्यक्ति अपने आप को राजाओं का भी राजा व अमीरों का भी अमीर महसूस करते हुए हर अच्छी-बुरी परिस्थिति में आत्मतुष्ट व सम अवस्था में बना रहता है और इस प्रकार उसका किसी भी कारण जगत के विषयों में लिप्त होना व स्वार्थपरता अपनाना असम्भव सी बात होती है। इसलिए वह असीम सत्ता का मालिक निश्चल एकरस सम अवस्था में बने रह आजीवन निष्काम भाव व एकाग्रता से परोपकार कमाने के सिवाय और किसी कार्य जैसे कि महल-माडियाँ, धन-दौलत आदि इकट्ठा करने में गलतान नहीं होता। इस प्रकार तीनों लोकों पर राज्य करने की सामर्थ्य रखने वाला वह सांसारिकता निभाता तो है पर पदों की प्राप्ति के चक्रव्यूह में उलझना अविचार व अपनी यथार्थ हस्ती से गिरने की बात मानता है। हम कह सकते हैं कि वह सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में वर्णित इस सत्य को मानता है कि:-

'ब्रह्म है सम संतोष धैर्य दा सिंगार, ब्रह्म है ओ शब्द विचार,

अर्थात् वह सम-संतोष, धैर्य का श्रृंगार पहन, 'ब्रह्म' शब्द के विचार को अपने जीवन में उतार लेता है।

इस सन्दर्भ में हम यह भी जानते हैं कि जीवन में किसी न किसी प्रकार का पद व पदक पाने की अभिलाषा पूरी करने में ही मनुष्य अपना पूरा जीवन लगा देता है पर पद यानि सीमित सत्ता व पदक की प्राप्ति के बावजूद भी उसकी सन्तुष्टि नहीं होती। इस भाव में उलझ वह हर कार्य, फल की इच्छा से करने पर, अपने आप को विवश पाता है और

निष्काम भाव उसकी पकड़ से छूट जाता है। इस तरह आत्मिक ज्ञान के अभाव में वह कामनाओं के चक्रव्यूह में फँस यानि जगत में लिप्त हो दार्शनिक तो बन जाता है पर इन्सान नहीं बन पाता। फिर काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार रूपी विकार उसके अन्दर घुस इतनी उत्तेजना व उग्रता पैदा करते हैं कि वह अपनी असन्तुलित मानसिक अवस्था के कारण उस चक्रव्यूह से बाहर निकल पाने में अपने आप को असक्षम पाता है। तात्पर्य यह है कि यही उत्तेजना व उग्रता जब उसकी चित्त वृत्तियों में उतरती है तो अहंकार सिर चढ़ कर बोलने लगता है यानि मन-मस्तिष्क पर एक अजीब तरीके का पागलपन व फ़ितूर छा जाता है। ऐसा इन्सान फिर न तो किसी की बात सुनता है और न ही सही ढंग से उसे समझ पाता है। तभी तो वह पागलों की तरह व्यवहार करता है और इस प्रकार संसार सागर के भँवर में फँस, समय की थपेड़ें खाता रहता है व झुखता-रोता रहता है यानि स्वभाववश दर्द खुद भी सहता है तथा आगे औरों को भी बाँटता है।

याद रखो किसी भी सांसारिक पद के प्राप्त होने पर व्यक्ति किसी के अधीनस्थ रह सीमित दायरे तक अपने अधिकारों का नीतिसंगत प्रयोग नहीं कर पाता। उसे हर हाल में अपने उच्च अधिकारियों के सही या ग़लत निर्देशानुसार सब कुछ करना ही पड़ता है। पद के प्रति आसक्ति, उनके हुक्म की तामील के लिए बाध्य करती है और भय के कारण कई बार गुनाह यानि ग़लत काम करने के लिए बाध्य कर कुकर्म-अधर्म की राह पर भी अग्रसर कर देती है। यह पल-पल जीने-मरने की बात होती है। इस तरह मन में विरोधाभास

पनपता है। बस फिर तो वड-छोट, तेरी-मेरी, अपने-पराए आदि जैसे संकीर्णता के भाव के प्रभाव के कारण तनावयुक्त व्यक्ति को अपमान खलने लगता है और उसके लिए सुकर्मों का रास्ता अपनाना या उस पर बने रहना नामुमकिन सी बात हो जाती है। यह अज्ञानियों की बातों में उलझ कर अपने जीवन के साथ द्रोह करने की बात होती है। यह सब जानने के बाद हम में से कोई भी इस होड़ या दौड़ में न उलझे व न उलझा रहे उसके लिए सबसे श्रेष्ठ आत्मपद के प्रति जागरूक रहो और ब्रह्मविद्या को प्राप्त करने की आवश्यकता को समझो। इस तरह ब्रह्मज्ञानी बन स्पष्टता से न्यायसंगत जीवन जीते हुए परमपद को प्राप्त करने में सफलता सुनिश्चित करो। तभी तो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया हैः-

गुरु है बन्धन ते चेला है बन्धन,
ओ बन्धन है जे पख परिवार।
इस बन्धन तो छुटना चाहो,
सजनों शब्द पकड़ो ब्रह्म विचार।।

अर्थात् माता-पिता, भाई-बन्धु, गुरु-चेला सब नातों को मिथ्या बन्धन मानो और फ़र्ज़ अदा ठीक से निभाते हुए इन बन्धनों से स्वतन्त्र बने रहने हेतु ब्रह्म विचार पकड़ो। सब बाहर के मंदिर-मस्जिदों का भटकाव छोड़ कर अपने मन-मंदिर में भक्ति-भाव द्वारा ब्रह्म भाव को विद्यमान करो। इस हेतु जितना आवश्यक है उतना बोलो। औरों में मत उलझो। इससे भ्रम पैदा होता है व परस्पर दुर्भावना पनपती है जो न केवल खुद के लिए अपितु जिनके साथ भी हम विचरते हैं

उनके लिए भी नुकसानदायक साबित होती है। अतः आत्मपद प्राप्त करने हेतु यह नुकसानदायक क्रिया बिल्कुल बन्द कर दो। याद रखो परमपद प्राप्त होने पर सभी सांसारिक पद अधिकार तो क्या, पूरी सृष्टि पर आपका अधिकार हो जाएगा यानि तीनों लोकों का राज्य प्राप्त हो जाएगा। तभी तो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में फिर कहा गया है:-

सुण लौ सुणने वालियों इक बात बताएं।
ओ बात है हीरा अनमोल, हम तुम्हें सुनाएं।।

महाबीर जी इक सौगात बक्षण।
नाले चानणा बक्षण, साजन जी नूं पोशाक बक्षण।
सारी बक्ष दित्ती हिने राजधानी,
जैंदा आद न अन्त हिसाब बक्षण।।

याद रखो ऐसा होने पर तृप्त हो जाओगे और फिर निर्लिप्त रह अपनी शक्ति का स्वतन्त्रता, धीरता व निष्कामता से प्रयोग करने में सक्षम हो जाओगे यानि ब्रह्मभाव (ब्रह्म यानि रूप-रंग-रेखा रहित परमात्मा/प्रणव + भाव यानि आत्मा रूप सत्ता अर्थात जन्म) आत्मा की आनन्द रूप या ब्रह्मरूप होने की भावना/ध्यान द्वारा, निज स्वभाव के अन्तर्गत हो जाएगी। तात्पर्य यह है कि भाव रूप में विद्यमान, रूप-रंग-रेखा रहित ब्रह्म का ध्यान व एकाग्रचित्तता द्वारा बोध होने पर अपनी अजरता-अमरता का एहसास करते हुए निर्भयता व नित्यभाव से विचर पाओगे। इस तरह दृश्यों यानि रूप के साथ नहीं जुड़ोगे और रेखा नहीं बनेगी। फिर आपके हृदय में ही ब्रह्मलोक का वास होगा यानि ईश्वर को बाहर मन्दिर-

मस्जिदों में ढूँढने की आवश्यकता नहीं रहेगी और इस प्रकार आप की सुरत अपने घर में बने रहते हुए विश्राम अवस्था को प्राप्त रहेगी। अतः जानो कि ब्रह्मभाव का हृदय में व्याप्त होना अपने ब्रह्मस्वरूप यानि असलियत हस्ती को प्राप्त होना है। ऐसा होने पर ब्रह्मशक्ति आपकी शक्ति व ब्रह्मविचार आपके विचार हो जाते हैं व स्वभाव द्वारा ये गुण यथा प्रदर्शित होते हैं। फिर किसी ग्रन्थ को पढ़ने की आवश्यकता नहीं रहती।

यह इन्सान की परिपूर्ण चेतन अवस्था का प्रतीक होता है जिसके कारण किसी प्रकार की विकृति पैदा होने का सवाल ही पैदा नहीं होता। यह सम्पूर्णता से नौजवान युवावस्था धारण कर निरोगी जीवन जीने के योग्य बनने की बात है। जिसमें किसी भी प्रकार की कोई भी कमी नहीं रहती व सब कुछ होने की अनुभूति बनी रहती है। यह कामनाओं से मुक्ति की बात है जिस अवस्था में मन में कोई संकल्प नहीं उठता। इसलिए हम सबके लिए बनता है कि हम अपने मन में परमपद पाने की भरसक चाहना पैदा करें और उसकी प्राप्ति के लिए दिल से प्रयत्नशील हो जाएं और यह सबसे उत्तम पद प्राप्त कर लें। आओ इसी सन्दर्भ में सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ हमें क्या सन्देश दे रहा है इसे ध्यान से सुनें:-

श्री साजन जी के मुख के शब्द

श्री राम हरे, सुखधाम हरे,
निष्काम हरे, विश्राम हरे।
ब्रह्मज्ञान हरे, परमधाम हरे,
ओ३म् हरी ओ३म्, ओ३म् ओ३म् हरे।।

सत् चित्त आनन्द स्वरूप मेरा,
ओजी सत् हरे सत् सत् हरे।
ओ३म् हरी ओ३म्, ओ३म् ओ३म् हरे,
ओ३म् हरी ओ३म्, ओ३म् ओ३म् हरे।।

राम कृष्ण गोपाल स्वरूप मेरा,
ओजी राम हरे राम राम हरे।
ओ३म् हरी ओ३म्, ओ३म् ओ३म् हरे,
ओ३म् हरी ओ३म्, ओ३म् ओ३म् हरे।।

ओ३म् तत् सत् ब्रह्म स्वरूप मेरा,
ओजी ओ३म् हरे ओ३म् ओ३म् हरे।
ओ३म् हरी ओ३म्, ओ३म् ओ३म् हरे,
ओ३म् हरी ओ३म्, ओ३म् ओ३म् हरे।।

सब घट वासी सर्व निवासी स्वरूप मेरा,
ओजी सब हरे सब सब हरे।
ओ३म् हरी ओ३म्, ओ३म् ओ३म् हरे,
ओ३म् हरी ओ३म्, ओ३म् ओ३म् हरे।।

आत्मा सर्व परमात्मा स्वरूप मेरा,
ओजी आत्मा हरे आत्मा आत्मा हरे।
ओ३म् हरी ओ३म्, ओ३म् ओ३म् हरे,
ओ३म् हरी ओ३म्, ओ३म् ओ३म् हरे।।

अन्ततः हम यही कहेंगे कि इस श्रेष्ठ परमपद को प्राप्त करने के लिए अपने अन्दर चाहना पैदा करो। स्वयं को डाँटो और बार-बार समझाओ। खुद को देखो कि कहाँ उलझे पड़े हो,

कहाँ फँसे पड़े हो? इस तरह उस उलझना से निकलने का भरपूर यत्न करो और अपनी बुद्धि टिकाणे ले आओ। हम कह रहे हैं कि ईश्वर आपको सब देने के लिए तैयार खड़े हैं। अतः हिम्मत दिखाओ और बल को धारण कर वे सब लेने के योग्य पात्र बन जाओ। इस सन्दर्भ में आओ पूरे भाव से ईश्वर के आगे करबद्ध प्रार्थना करें:-

हे ब्रह्मा दे ब्रह्म ! मुझे इतना बल दो कि मैं आप की तरह निश्चल बने रह, समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार, सजन-भाव का वर्त्त-वर्त्ताव करने में व परिवारजनों को कराने में सफल होऊँ। हमारी सुरत आप की पटरानी बन, स्थिरता से सर्गुण-निर्गुण का खेल खेलते हुए, जगत के विषयों से निर्लिप्त बनी रहे। इस प्रकार कोई विकृति हमारे मन में घर कर, हमें परमार्थ के रास्ते से भटका न सके व हम सदा निष्काम कर्म करते हुए अफुर अवस्था में बने रहें। इस हेतु हमें शक्ति देना कि हम, आपके संग बने रहें या फिर इस जगत में उसी का संग करें, जो हमें आपके संग जोड़ने की समर्थ रखता हो। हमारी विनय स्वीकार करो और हमें अपने ज्ञान व गुणों को धारने की सक्षमता बख़्शो ताकि हम भी आप की तरह, ओजस्वी सूरजों के सूरज बन, आपके द्वारा प्रदान किए हुए ज्ञान व गुणों को, इस तरह से जगतवासियों के सम्मुख प्रकाशित कर सकें कि, इस भूमण्डल में अचेतन अवस्था को प्राप्त हर इन्सान, पुनः चेतन अवस्था में ढल जाएं। इस प्रकार हम त्याग व निष्काम भाव से, सच्चाई-धर्म के रास्ते पर बने रहने का पराक्रम दिखाते हुए, परोपकार करने योग्य बनें व आपके सपुत्र कहलाएं। हमारी यह प्रार्थना स्वीकारो जी, स्वीकारो जी, स्वीकारो जी, ताकि हम विशुद्ध

हृदय हो जाएं और शक्तिशाली बन, अपने मनुष्यत्व के उत्कृष्ट रूप में बने रहें और इस प्रकार फ़र्स्ट का नतीजा दिखा परमपद को प्राप्त करें।

अन्ततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरान्त सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियन्त्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

26 अप्रैल 2015 का सबक

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्मा-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त्त-वर्त्ताव कर एक अच्छे इन्सान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शान्ति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

सब सजनो ने ध्यान साधना द्वारा अपने हृदय में ब्रह्म भाव को विद्यमान करना है और उसी अनुसार ही अन्दरूनी व बैहरूनी वृति में सजनता का व्यवहार करना सुनिश्चित करना हैं। छोटे-बड़े सबके लिए ऐसा ही आचरण अपनाना आवश्यक है ताकि हम सभी दुराचारिता से उबर पुनः सदाचारिता अपना सकें।

क्या आप सब समझते हैं कि ब्रह्म भाव से युक्त होकर तद्नुरूप व्यवहार करने से हम तनावमुक्त एकता, एक अवस्था में बने रह सकेंगे?

हाँ जी।

तनावमुक्त एकता, एक अवस्था में बने रहेंगे तो क्या सभी यह मानते हैं कि विचार शब्द पकड़ हम पहले से अच्छा जीवन जीने हेतु पर्याप्त योग्यता प्राप्त कर प्रगतिशील व समृद्धशाली बन सकेंगे?

हाँ जी।

तो फिर ब्रह्मभाव की विद्यमानता का अपने हृदय में अनुभव कर हर परिस्थिति में वैसा व्यवहार करना सुनिश्चित करो। इसे आप भक्ति व साधना समझो। यह मानो कि इससे बढ़कर और कोई भक्ति व साधना नहीं हो सकती। इसी भक्ति भाव में समझदारी से स्थिर होकर, शक्तिशाली बन जाओ। इस प्रकार नेक नीयती से इन्सानियत में बने रह, निष्काम भाव से परोपकार करते हुए, अपना व औरों का भी उद्धार करो। इस सन्दर्भ में याद रखो कि वो भक्ति, भक्ति नहीं हो सकती, जिससे इन्सान की अन्दरूनी वृत्ति में जीवन जीने के प्रति उत्साह, सक्रियता, प्रसन्नता यानि मन की शान्ति लुप्त हो जाए। यह अपने सत्-चित्त-आनन्द स्वरूप से विमुख होने की बात है। अतः इस तथ्य को समझते हुए, बालअवस्था का कर्मकाण्ड युक्त भक्ति-भाव त्याग कर, युवावस्था का भक्ति भाव यानि समभाव-समदृष्टि की युक्ति अपनाओ और सजन-भाव अनुरूप व्यवहार करना शुरू कर दो। माता-पिता बाल्यावस्था से ही, बच्चों का शारीरिक विकास करने के साथ-साथ, मनुष्यता अनुरूप मानसिक विकास करने हेतु, आत्मिक ज्ञान के प्रति, उनके अन्दर रुचि पैदा कर, खुद आदर्श रूप बनें ताकि वह भी वैसा ही चलन

अपना सकें। याद रखो समभाव-समदृष्टि की युक्ति के अनुकूल, इस ब्रह्म भाव को अपना कर ही, वे परिपूर्णता से इन्सानियत में ढल सकते हैं और इस प्रकार सुख-चैन का जीवन व्यतीत करने योग्य बन सकते हैं। अपनी अति व्यस्तता के कारण या अपना रुझान व शौक भौतिक सुखों की तरफ होने के कारण, अपने बच्चों को इन्सानियत से विमुख मत रखो। मानो यह वह गुनाह है, जो माफ़ी के काबिल नहीं है क्योंकि यह अपने ही बच्चों की नैतिक उन्नति में बाधा उत्पन्न करने, व उनके अन्दर से मानवता की हिंसा करने के समान है। याद रखो मानव की हिंसा से बड़ा अपराध, मानवता की हिंसा करना होता है। इससे इन्सान जड़ता को प्राप्त हो, संसार में जीते हुए भी, मरे हुए समान जीवन यापन करता है और हर पल विकारों के प्रभाव व परिणामों को दुःख रूप में भोगता हुआ, सदा झुखता व रोता है।

यह इन्सान के कमज़ोर हो, परतन्त्र होने की अवस्था होती है। अतः हम सबसे हाथ जोड़ कर प्रार्थना करते हैं कि मानवता के विनाश का यह खेल खेलना, अब बन्द करो। इस हेतु सब के सब ब्रह्मभाव अपनाओ। याद रखो हमको अपने असलियत ब्रह्म स्वरूप में बने रह, उसी अनुसार ही अपने भाव, भावना व स्वभाव को सुन्दर रूप देना शोभा देता है। इस बात को यादगिरी में रखते हुए, ब्रह्म भाव अनुसार जीवनयापन करना, सुनिश्चित करो। यदि हमने ऐसा कर लिया, तो कोई कारण नहीं, हम इन्सानियत से भटक, राग-द्वेष में फँस जाएं या फिर कोई कामना हमें भरमा या सता, निष्काम रास्ते से भटका सके। याद रखो, हमारा ब्रह्म

स्वरूप ही, हमारी अपार शक्ति है। यह हमारी प्रतीति है, दीप्ति है और वह प्रकाश है जो न केवल हमारे हृदय को, हमारे परिवार को, अपितु कुल संसार को प्रकाशित कर सकता है।

यह जानने के बाद हमें यह समझ नहीं आता कि इसके प्रति हम खुद को कमज़ोर क्यों समझते हैं? क्यों नहीं एकरस प्रसन्नचित्त बने रह पाते और परिवारजनों को प्रसन्नचित्तता में बनाए रखने का सामर्थ्य जुटा पाते?

जान लो कि इस कमज़ोरी का एक मात्र कारण यह है कि, ब्रह्म भाव के स्थान पर हमने, अपने मन में अन्य विकारी भावों को जगह दे दी है और हमारा ख़्याल ईश्वर से प्रीत करने के स्थान पर, नश्वर भावों के साथ प्रीत लगा चुका है। यह जगत में फँसने व हमारे मानसिक सन्तुलन के बिगड़ने, की बात है। इसी से हमारे स्वभावों का टैम्प्रेचर, ऊपर-नीचे हो रहा है और हम तीनों तापों से सन्तप्त है। क्या इस सन्ताप की पीड़ा भोगने से अच्छा यह नहीं कि हम, ब्रह्मभाव को अपना लें और सदा नौजवान युवावस्था में बने रहें?

यही अच्छा है जी।

तो फिर घबराओ नहीं, और अपने, अपने परिवार व समाज के हित की ख़ातिर, सब मिल कर इस भाव को अपना लो। अपने बच्चों को भी इसके प्रति जाग्रत करो ताकि उनका ख़्याल कभी सकारात्मकता तो कभी नकारात्मकता में न उलझा रहे। इस हेतु उनके अन्दर भी आत्मिक ज्ञान धारणा के प्रति रुचि उत्पन्न करो ताकि वे अपनी अनन्त आत्मिक बल रूपी क्षमता को पहचान कर, निर्भय व पराक्रमी बनें और

इस प्रकार अपने जीवन को उन्नत कर सकें। इस प्रकार वे आपके लिए सुखकारी साबित होने के साथ-साथ, खुद भी सुख और शान्ति से जीवन जीने के लायक बनेंगे। निःसंदेह इसी तरह से यदि पति-पत्नि व बच्चे साथ-साथ चलें तो सुन्दर व संगठित परिवार/समाज का निर्माण हो सकता है यानि सम्पूर्ण मानव जाति सुसंस्कृत बन एकता के सूत्र में बँधी रह सकती है।

अब सब अन्दर-बाहर से एक हो जागृति में आ जाओ और इस तरह से यहाँ प्रसन्नचित मुद्रा में बैठो कि आप की शक्ल यानि सूरत से हमें ऐसा प्रतीत हो कि आप, ब्रह्म भाव अपनाने के प्रति रुचि रखते हो और जो भी बात चल रही है उसको एकाग्रचित्तता से धारण करने हेतु तत्पर हो।

(सब प्रसन्नचित मुद्रा में हैं)

अब बताओ कि हृदय में ब्रह्म भाव कैसे विकसित होता है?

ब्रह्म ज्ञान की ध्यान से धारणा द्वारा।

ब्रह्म भाव एक इन्सान को कैसा इन्सान बनाता है?

बुद्धिमान, शक्तिशाली व चरित्रवान यानि श्रेष्ठ इन्सान।

बिल्कुल ठीक। अब ध्यान से सुनोः-

जब हम अपनी ब्रह्म होने की अवस्था यानि यथार्थ हस्ती को पहचान जाएंगे व प्रवान कर लेंगे तो हमारा मुख आध्यात्मिक शक्ति जैसे विशेष तेज से चमक उठेगा, जो हमारे पराक्रमी व सुसंस्कृत होने का, प्रतीक होगा। इस प्रकार हम अन्दरूनी

व बेहरूनी दोनों वृत्तियों में, ब्रह्म भाव के प्रभाव व प्रयोग द्वारा, अपने मन को सहजता से वश में रख पाने के योग्य हो जाएंगे। यह होता है हृदय का सचखण्ड यानि पवित्र होना, व ब्रह्मशक्ति यानि ब्रह्म की मूर्त्त शक्ति से, 'शब्द ब्रह्म' के रूप में उत्पन्न वाणी को सुन-समझ कर, ईश्वरीय हुक्म की निर्विघ्नता से पालना के काबिल बनना।

इस प्रकार 'विचार ईश्वर है अपना आप' के अनुसार, चैतन्यता से, निष्काम भाव से पुण्य कर्म करते हुए, श्रेष्ठ समाज के निर्माण हेतु, जीवन जीना। फिर अटल सत्य पर धर्मसंगत सुदृढ़ता से बने रह, ब्रह्म लेख से बचे रहना व अपनी अजर-अमर अवस्था को प्राप्त होना। यह आत्मतत्व के सदृश्य होने की व अनन्त आनन्द प्राप्त होने की बात है।

याद रखो हम में से प्रत्येक के अन्दर ऐसा कर दिखाने की क्षमता व योग्यता है। परन्तु जन्म-जन्मांतरों से हमारी पालना जिस तरीके से हो रही है, उसके कारण हम अपनी इस क्षमता व योग्यता को खो बैठे हैं यानि उससे विमुख हो गए हैं और हमारे लिए एकाग्रचित्तता में बने रहना, असंभव सी बात हो गई है।

हालात इतने बिगड़ चुके हैं कि, अब हमें पता ही नहीं कि हमारे अन्दर ऐसा कर दिखाने की सामर्थ्य भी है। इतना होने पर भी घबराने की कोई आवश्यकता नहीं है क्योंकि ब्रह्मभाव को धारण कर हम पुनः इन्सानियत में ढ़ल व बने रह, ब्रह्म अवस्था को प्राप्त कर सकते हैं। इस अवस्था के प्राप्त होने पर व्यक्ति कह उठता है:-

मैं ब्रह्म हूँ

ॐ

ब्रह्म पृथ्वी और ब्रह्म ही ओ आकाश हूँ,
ब्रह्म सूरज और चाँद ही ओ प्रकाश हूँ।

ब्रह्म जल और ब्रह्म थल रिहा ओ भास हूँ,
ब्रह्म पवन और पानी में ही ओ निवास हूँ।

ब्रह्म जनचर और ब्रह्म ही ओ बनचर हूँ,
ब्रह्म जड़ और चेतन में ब्रह्म ही ओ निवास हूँ।

ब्रह्म नौखण्ड और ब्रह्म ही ओ सारा ब्रह्माण्ड हूँ,
ब्रह्म सर्गुण ब्रह्म निर्गुण और ब्रह्म ही ओ इतिहास हूँ।

ब्रह्म सप्तदीप और ब्रह्म ही ओ भूमण्डल हूँ,
ब्रह्म गगन मण्डल में बिन सूरजों ओ प्रकाश हूँ।

ब्रह्म रूप रंग न रेखा कोई और ब्रह्म ही ओ आद अन्त हूँ,
ब्रह्म जगत और जहान सारा ब्रह्म ही ओ प्रकाश हूँ।

याद रखो इस उत्तम अवस्था के प्राप्त होने पर ही हम, कलियुगी भाव-स्वभावों से उबर, सतयुग में प्रवेश पा सकते हैं और एक शक्तिशाली श्रेष्ठ समाज के निर्माण में पूरे दिल व कुशलता से अपना योगदान दे सकते हैं। सजनों सजन श्री शहनशाह महाबीर जी के द्वारे पर होने के नाते हमारा फ़र्ज़ बनता है कि हम अपने इस उत्तरदायित्व को समझें, और इस हेतु निष्काम भाव से अपना तन-मन-धन सब कुर्बान कर, अनथक परिश्रम करने से न कतराएं। स्मरण रहे निष्काम भाव से किए हुए कृत्य द्वारा ही हम, हर प्रकार की आसक्ति

व कर्म फल के भोग से बचे रह पाएंगे। अन्यथा स्वार्थवश छल-कपट की भावना से युक्त होकर किया हुआ कर्म, हमें जन्म-मरण के चक्रव्यूह में फँसा देगा और हम नाना प्रकार के कष्टदायक दुःखों को झेलते हुए, आधि-व्याधि की पीड़ा से सन्तप्त रहेंगे। ऐसा किसी के साथ न हो इस हेतु हमें ब्रह्म विचार पकड़ना होगा और अन्य समस्त सांसारिक बातें करना छोड़कर, परस्पर इसी विषय पर ही बातचीत करना, आरम्भ करना होगा। याद रखो ऐसा करने पर ही, आत्मीयता अनुरूप व्यवहार करने का सिद्धान्त, हमें समझ में आएगा और आपसी वैर-विरोध समाप्त कर हम, सजनता युक्त व्यवहार दर्शा, सुख-चैन को प्राप्त करते हुए, सदा एकता में बने रह सकेंगे।

इस सन्दर्भ में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार जब व्यक्ति ब्रह्म अवस्था को प्राप्त कर लेता है तो कह उठता है कि मैंने सतवस्तु के रूप में अनमोल हीरा प्राप्त कर लिया है और अब मैं अपने आप को उस में वेद विदित सबको समझाने के योग्य समझता हूँ। इस परोपकार द्वारा अन्य मनुष्यों के हृदयों से खोट निकाल उन्हें ख़ालिस सोना बना, उनकी सुरतों को भी शब्द ब्रह्म की रोशनी या प्रकाश दिखा सकता हूँ यानि उन्हें भी ब्रह्म भाव के विचारों अनुसार ढाल सकता हूँ। इसके साथ-साथ परमेश्वर की सर्वव्यापकता का सत्य कि घट-घट में उसी का वास व निवास है, उन्हें अपने असलियत स्वरूप की पहचान का तरीका समझा आत्मीयता में भी ढाल सकता हूँ। फिर वह परोपकारी पुण्य कार्य निष्कामता से करने में ही आनन्द प्राप्त करता है। इस प्रकार सब दुःखों से छुटकारा पा लेता है।

इस प्रसंग से शिक्षा ले, हमें भी हृदय वेद-विदित सत्य को खुद समझ कर, सबको उसके प्रति जाग्रत करने की योग्यता प्राप्त करनी है। याद रखो यह योग्यता प्राप्त करना सबसे श्रेष्ठ उपलब्धि है। इस उपलब्धि के प्रति खुद सजग रह अपने घर, परिवार व बच्चों को भी जाग्रत करो। अन्यथा मात्र भौतिक ज्ञान उपलब्ध करा के बच्चों को वैज्ञानिक, डॉक्टर या अफसर अवश्य बना लोगे परन्तु इन्सान नहीं बना पाओगे। इसी प्रचलन के कारण ही इस कलियुग में सन्तान के रूप में घर में उत्पन्न हुए कई इन्सान भी हैवान बनते जा रहे हैं। ऐसी भूल मत करना। खुद मानवता में ढल सबको मानवीय व्यवहार में ढालना अपना कर्त्तव्य मानों और इस फ़र्ज़ अदा को हँसते-हँसते करना सुनिश्चित करो।

याद रखो मानवीय व्यवहार अफुरता व एकता, एक अवस्था का प्रतीक है। अतः हमें मनमत और दूसरों के बहकावे में आकर कुछ भी करने के स्थान पर, खुद विचारवान व विवेकशील बनना है और ब्रह्म विचार को अपने जीवन में उतार, सीधे व सरल निष्काम रास्ते पर बने रहना है। इस तरह अपने जीवन-लक्ष्य को प्राप्त करने में सफल होना है। इसकी विपरीतता अवलड़े यानि कठिनाइयों भरे रास्ते पर चलने की बात है व अविचार धारणा के प्रभाव से, विकार-वृत्ति अपनाने की बात है यानि विकारों के प्रभाव से संकल्प-विकल्प की असमंजसमयी स्थिति में फँस, बुद्धि के भ्रष्ट व भ्रमित होने की बात है। याद रखो बुद्धि का भ्रष्ट होना नीति, आचार या धर्म आदि की दृष्टि से गिरे हुए दुश्चरित्र इन्सान के रूप में, ढलने का प्रतीक है व उसका भ्रमित होना, गलत धारणा या विचारों के प्रभाव से, पागलपन का शिकार होने

की बात है। एक बार इस पागलपन का शिकार हो, बुद्धि यथार्थ धारणा में धोखा खा गई तो समझो, मन-वचन-कर्म में धोखा व छल-कपट ही उतरेगा। ऐसा होने पर हम धर्म यानि निजी विशेष गुण हार बैठेंगे और निज धर्म से गिर पराश्रित होने के कारण कुकर्म-अधर्म का रास्ता अपनाना, हमारी मजबूरी हो जाएगी। याद रखो एक बार सच्चाई-धर्म के रास्ते से भटक कुरस्ते पर चढ़ गए तो अपने सच्चे घर को जाने वाले रास्ते पर लौटना बहुत कठिन हो जाता है। वर्तमान समय में कुकर्म-अधर्मों में फँसें लाचार मानव की हालत इसका स्पष्ट उदाहरण है। सभी स्वीकारेंगे कि 'मैं-मेरा' में गलतान मानव के हालातों को पलटना आज अत्यन्त दुष्कर कार्य हो गया है। अतः इस परिस्थिति से उबरने के लिए हमें ईश्वरीय हुक्म अनुसार चलन अपना कर, ईश्वर का सपुत्र बने रहना है और अपने व अपने परिवारजनों के साथ ऐसा अनिष्ट नहीं होने देना। इस सन्दर्भ में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है कि:-

अवविचार जेहड़ा चलदा है सजन,
चार चुफेर हार ओ खांदा है।

विचार है जित तुम्हारी ओ सजनों,
हर पासियों ओ जितदा रैंहदा है।

अवविचार है जे कवलड़ा रस्ता,
हर पासियों ओ ठोकरां खांदा है।

विचार है जे सवलड़ा रस्ता,
सदा ही ओ जितदा रैहंदा है।।

अर्थात् सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार सजनों अविचार कामनायुक्त कवलड़ा रास्ता है जिस पर चलते हुए, मानव की बुद्धि कदम-कदम पर उसे धोखा देती है और इन्सान औखयाइयों में अर्थात् कठिनाइयों में फँस जाता है। ऐसा इसलिए कह रहे हैं क्योंकि कामुक व्यक्ति सदा कामनापूर्ति के नशे में रहता है और इसी कारण यथार्थ को देख-समझ नहीं पाता। इस प्रकार वह शब्द विचार के महत्त्व को न समझते हुए, सजन-भाव से हट, द्वि-द्वेष, वैर-भाव आदि जैसे अलगाववादी स्वभावों में फँस जाता है और सारी उमर झुखता-रोता रहता है। परन्तु हमें ऐसे नकारात्मक स्वभाव अपनाकर, मन में एक दूसरे के प्रति नफ़रत नहीं रखनी और एकता व शान्ति में बने रह सजन-भाव के व्यवहार पर डटे रहना है क्योंकि सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ हमें समझा रहा है किः-

छल कपट और झूठ चतुराइयाँ, जो इन्सान करेंदा है धोखा
जेहड़ा इन्सान ओ चुगलियाँ लावे, झगड़े पवावे
समझ लवो ओहदी बुद्धि ने दित्ता हाई धोखा
शब्द विचार ओ समझ न सके, है सबनां गल्लां वल्लों औखा।

ध्यान दो यदि यही चलन अपनाओगे तो एक भाव यानि ब्रह्म भाव पर कैसे बने रहोगे? सर्व एक दर्शन का सत्य कैसे स्वीकार पाओगे और वैसा आचार-व्यवहार कैसे दर्शा पाओगे? यह समभाव-समदृष्टि की युक्ति के अनुसार सजन-भाव के वर्त्त-वर्त्ताव से हटकर, विषयी भावों में फँस, जगत में उलझने व जीवन हारने की बात होगी। अतः हमें समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुरूप, आत्मनियन्त्रण क्रिया द्वारा, ख़ुद को सम्भाले रखना है यानि जगत को अपने उदर में रख,

निष्काम रास्ते पर बने रह परोपकार कमाना सुनिश्चित करना है। इस सन्दर्भ में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है:-

एक दा करो अजपा जाप,
फिर ब्रह्म शब्द दा पाओ प्रकाश।

एहो सजनों पकड़ो इतिहास,
फिर ब्रह्म स्वरूप है अपना आप ।।

अर्थात् सृष्टि की रचना उपरांत से यानि आद् से ही, समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुरूप आचार-विचार व व्यवहार अपनाने का चलन चलता आ रहा है। इस इतिहास को पकड़ कर ही हम सतयुगी मानव की तरह सुसंस्कृत, शिष्ट व पराक्रमी मानव बन पाएंगे और फिर सहसा कह उठेंगे ब्रह्म स्वरूप है अपना आप। इसी सन्दर्भ में अब ध्यान से सुनों।:-

क्या हम जानते हैं, कि समभाव-समदृष्टि की युक्ति का इस्तेमाल करने से क्या सम अवस्था में बना रहता है?

नहीं जी।

तो जानो, इससे अन्दरूनी व बैहरूनी वृत्ति सम अवस्था में बनी रहती है। सर्वोच्च आत्मीयता में हम सबको बाँधे रखने वाली इस महान युक्ति से यह दोनों ही वृत्तियाँ एक भाव हो जाती हैं। यही समभाव ही तो हमारे मन-बुद्धि की सम अवस्था का प्रतीक होता है और हम इस युवावस्था के भक्ति बल से प्राप्त शक्ति द्वारा अपने अन्तर में विद्यमान ब्रह्म भाव को बैहरूनी वृत्ति में अपने वचन व कर्म द्वारा उजागर कर

सकते हैं यानि अपनी यथार्थ हस्ती में बने भी रह सकते हैं व उसे अपने स्वभाव व व्यवहार द्वारा प्रगट भी कर सकते हैं।

कैसे?

क्योंकि इस युक्ति द्वारा ब्रह्म भाव/समभाव अन्दरूनी वृत्ति में विद्यमान हो जाता है और उसी भावना अनुसार समदृष्टि द्वारा बैहरूनी वृत्ति में आचार-व्यवहार करना सहज व स्वाभाविक हो जाता है। यही व्यावहारिकता धीरे-धीरे इन्सान के स्वभाव के अन्तर्गत मानवीय धर्म के गुण रूप में ढल जाती है। फिर जब वह इस युक्ति की पढ़ाई व गुढ़ाई द्वारा अपना निज गुण परखते व समझते हुए उसका इस्तेमाल करने योग्य हो जाता है यानि उसी धर्म पर डटे रहने में सक्षम हो जाता है तो वह हितकारी अक्लमंद नाम कहलाता है। यह होता है मानवता धर्म का सम्मान करना व 'विचार ईश्वर है अपना आप' के अनुसार गुणातीत अर्थात् प्रकृति के तीनों गुणों सत्व्, रज, तम् से परे रह यानि ब्रह्म अवस्था में बने रह सत्यता से जीवन जीना।

इस संदर्भ में यह भी जानो कि सत्व आदि तीनों गुणों का स्वामी और कोई नहीं ईश्वर ही है। सत्व आदि तीनों गुणों से निर्लिप्त रह यानि निर्विकार अपने ब्रह्म स्वरूप में बने रहने वाला ही न तो संसारी कनरस में फँस सकता है और न ही शास्त्र के कनरस में। वह तो इन दोनों के बीच का सरल और सीधा, निष्काम रास्ता अपना कर, सदा समरस व संतुलित बना रहता है तथा संसार व परमार्थ दोनों को ठीक निभाते हुए सदा उनसे निर्लिप्त रहता है। इस प्रकार इस समभाव-समदृष्टि की युक्ति से, हमारे मन में, ब्रह्म भाव की

विद्यमानता का बोध बना रहता है और द्वि-द्वेष, छल-कपट आदि विकारी भाव नहीं पनपते जिससे एकता व एक-अवस्था बनी रहती है और हम सब एक दूसरे के सजन होने के नाते, परस्पर हितों को ध्यान में रख कर ही, जीवन में सब कुछ करते हैं व अच्छे इन्सानों की तरह मिल-जुल कर, सुखी व समृद्धशाली जीवनयापन करते हुए अपने सच्चे घर की ओर बढ़ते हैं।

जो कहा गया है सबको समझ आया?

अगर नहीं तो जानो....... समभाव अन्दरूनी वृत्ति में धारण करना होता है, जिससे जगत में अक्लमंदी से विचरने में समर्थ बनने के लिए, समदृष्टि जैसे गुण का विकास होता है। स्पष्ट है कि ध्यान दृष्टि में उतरते ही यह गुण, हमारी नीयत में उतर जाता है और हम उसी अनुसार, अपने स्वभाव ढ़ालने के लिए, तत्पर हो जाते है। फिर उसी समदर्शिता की भावना से युक्त होकर, किसी प्रकार का भेदभाव रखे बगैर यानि राग-द्वेष रहित होकर सबके साथ आचार-व्यवहार करते हुए, एक दूसरे के सुख और दुःख को समान समझना होता है। यह तो मनुष्यत्व में बने रहने की युक्ति है। तो मानो कि समभाव-समदृष्टि की युक्ति ही, हमारे संतोष, धैर्य पर सम अवस्था मे बने रह, सच्चाई धर्म के रास्ते पर अग्रसर रहते हुए, निष्काम भाव से परोपकार कमाने के योग्य बनने के लिए, एकमात्र सर्वोत्तम उपाय है व दोनों वृत्तियों में निर्लिप्तता से, सत्यनिष्ठ व धर्मपरायण यानि सदाचारी बने रहने का महान गुण है। अतः युवावस्था के भक्तिभाव व ध्यान से इस युक्ति को साधो। इसे ही सच्ची उपासना मानो।

इससे क्या फल प्राप्त होता है?

यही तो ब्रह्म भाव में स्थिर बने रह कर एक तो गृहस्थ आश्रम सतयुग बनाने दूसरा परमपद प्राप्त होने की बात है।

अंततः हम सबसे हाथ जोड़ कर प्रार्थना करते हैं कि अपने हितकारी बनो और समभाव-समदृष्टि की युक्ति, भक्ति भाव से अपनी दोनों वृत्तियों में एकरस अपनाने योग्य बनने हेतु सजन-भाव की पढ़ाई व गुढ़ाई द्वारा ब्रह्म भाव अनुरूप ही अपनी भावना व स्वभाव को रूप दो। पूरा सप्ताह इस पर पूरी लगन व निष्ठा से मेहनत करो।

तात्पर्य यह है कि जो भी सोचो वह ब्रह्मभाव के अनुरूप ही हो। इस हेतु अपने पर आत्मनियन्त्रण व ध्यान रखो ताकि अन्दरूनी व बैहरूनी दोनों वृत्तियों में, हमसे इसके विपरीत कुछ भी न हो व इस प्रकार एक अवस्था बनी रहे। इस प्रकार 'सब सजन हुण वैरी कौन' के कथन को आत्मसात् करते हुए आत्मीयता में ढल संकल्प रहित हो जाओ और सही अर्थों में इन्सान कहलाओ व अपने स्थान को पाओ। याद रखो सतयुगी ऐसे ही श्रेष्ठ इन्सान होते हैं। उन इन्सानों जैसा बनने का पराक्रम दिखाओ। निःसंदेह तभी पराक्रमी व सुसंस्कृत कहलाओगे।

याद रखो इस सन्दर्भ में सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ कह रहा है :-

जिस इन्सान ने अच्छे संग नाल संग किया हां हां हां हां
ओ हैवान दा इन्सान हुआ
अक्ल टिकाणे आ गई तो दुनियां ते ओहदा नाम हुआ।।

अक्ल टिकाणे जैंदी आ गई हां हां हां हां जैं
ब्रह्म शब्द कीता विचार सजनों,

ओ चानणे नाल चानणा हुआ,
जेहड़ा आ रिहा अपर अपार सजनों।।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरांत सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियंत्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 3 मई 2015 का सबक

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्मा-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है:-

ब्रह्म शब्द वचन प्रवान करो, ब्रह्म शब्द बडा महाने।
आवागमन ओहदा मिट गया, उस पा लिया आत्मिक ज्ञाने।।

जब ध्यान द्वारा 'ब्रह्म शब्द' का मानसिक प्रत्यक्ष हो जाता है, तो 'शब्द ब्रह्म' रूपी अनहद नाद, अंतःकरण के स्वर, यानि मन की आवाज़ के रूप में, सुनाई देने लग जाता है यानि ब्रह्म विचार मनुष्य के ख़्याल में उतरना आरम्भ हो जाता है। इससे धारणा के रुप में, मन में रहने व होने वाले इन्हीं

विचारयुक्त भावों का, सत्यबोध करना सहज हो जाता है क्योंकि भावों के द्वारा ब्रह्म-भाव भावना के रूप में उतर जाता है और तद्नुरूप ही जीवन का नज़रिया बन जाता है। मन की इस एकाग्र अवस्था से, ब्रह्म का बोध होते ही, ब्रह्मविद्या स्वतः ही प्राप्त होने लगती है। फिर मन ही मन इस पर बार-बार विचार चलता है। फलतः ब्रह्म विचार से मनुष्य विचारशील बनता है और उसकी यह अवस्था परब्रह्म, यानि शुद्ध ज्ञानमय या ज्ञानस्वरूप व महा शक्तिशाली होने का प्रतीक होती है। याद रखो यही तो उसकी शुद्ध चैतन्य अवस्था कहलाती है, जिससे उसकी वृत्ति, स्मृति, बुद्धि व भाव-स्वभाव रूपी बाणा निर्मल हो जाता है।

इसी शुद्ध धारणा क्रिया से ही इन्सान की समाधि अवस्था यानि ब्रह्म में मन के लीन होने की अवस्था, किसी कारण भी भंग नहीं होती अर्थात् ध्यान और ध्याता का भान नहीं होता, ध्येय ही रहता है। कहने का तात्पर्य यह है कि इस अवस्था में इन्सान निज स्वरूप यानि 'विचार ईश्वर है अपना आप' के भाव में बने रहते हुए सब कुछ अकर्त्ता यानि समर्पित भाव से करता है।

इस प्रकार जगत में विचरते हुए फिर उसका ख़्याल जगत से विमुख यानि निर्लिप्त व अफुर बना रह पाता है। यह होती है निज ज्ञानस्वरूप अवस्था जिसमें उसे किसी अन्य बाह्य स्त्रोत से ज्ञान धारण करने की आवश्यकता नहीं रहती। अतः जानो कि युवावस्था के भक्ति-भाव के अनुसार, अपना ध्यान ब्रह्म में लीन रख पाने के योग्य भक्त या उपासक, अपने मोक्ष व जगत के हित के लिए, सदा शब्द ब्रह्म विचार

अनुसार निश्चित किया गया आचरण अपनाता है व एक अच्छे व नेक इन्सान के रूप में, अपनी उत्कृष्ट अवस्था में, सत्यनिष्ठा व धर्मपरायणता से बना रहता है। याद रखो ऐसा इसलिए संभव हो पाता है क्योंकि अपने जीवन लक्ष्य प्राप्ति हेतु वह, ईश्वर द्वारा निर्मित सिद्धान्तों, प्रक्रियाओं व नियमों की समझ रखता है व तद्नुकूल निर्धारित किए गए ईश्वरीय हुक्म यानि थोड़े शब्दों में कहे हुए सांकेतिक कथन की पालना पूरी श्रद्धा व निष्ठा से करता है।

यही उसके सबसे उत्तम इन्सान बने रहने का प्रेरणा स्रोत होता है और वह सदा अचल इसी अवस्था में ही बना रहता है। इस परिप्रेक्ष्य में ध्यान दो कि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में भी सांकेतिक कथनों के रूप में गूढ़ विचार वर्णित हैं। जब तक हम इन विचारों को गहराई से नहीं पढ़ते तब तक हमें इन सांकेतिक कथनों की समझ नहीं आ सकती। परन्तु यदि हम पूरी श्रद्धा व निष्ठा के साथ ग्रन्थ को समझने का प्रयत्न करते हैं तो हमें इसमें वर्णित विचार, कथनों के रूप में छिपे गूढ ज्ञान की व जगत से विरक्त रहने की युक्ति चन्द शब्दों में ही समझ में आ जाती है। इस तरह उस सत्य ज्ञान का प्रयोग कर हम चरित्रवान बने रह पाते हैं।

इससे ज्ञात हुआ कि ब्रह्म का बोध होते ही इन्सान को ब्रह्म विद्या प्राप्त होने लगती है। यह विद्या उसे स्वतन्त्र बुद्धि व मानवता अनुरूप बने रहने व सब कुछ आत्मविश्वास से करने का पराक्रम दिखाने हेतु शक्तिशाली बनाती है। ऐसा होने पर अन्दरूनी व बैहरूनी दोनों वृत्तियों में पारदर्शी अंतःकरण पर अंकित आत्मा में परमात्मा की छवि प्रगट हो

जाती है। फलतः इन्सान का ख़्याल उस प्रगट छवि के साथ ऐसे जुड़ जाता है कि इन्सान कह उठता है 'हम एक हैं' या 'मैं ब्रह्म हूँ' यानि एकरूपता का अनुभव होता है। फिर कभी भी किसी भी परिस्थिति में किसी के प्रति सजनता खण्डित नहीं होती। इस प्रकार परस्पर वैर-विरोध नहीं पनपता व सजनता का वर्त्त-वर्त्ताव चलता रहता है ।

इस सन्दर्भ में जानो कि अन्तरात्मा, आत्मा या जीवात्मा, अंतःकरण या हृदय एक ही बात है। उसी में ही इन्सान के जन्म का मूल तत्व व मुख्य अभिप्राय विद्यमान होता है जो केवल युवावस्था के भक्ति-भाव से जाना जा सकता है। जानो कि इसी भाव में स्थिर रह, शक्ति प्राप्त कर, आत्मबल द्वारा मन को वश में रखते हुए, निज स्वरूप में बने रह, अपना यह महान उद्देश्य, इसी जीवनकाल में, सिद्ध किया जा सकता है। इस उद्देश्य सिद्धि के पश्चात एकता, एक अवस्था में बने रहना कोई सवाल नहीं रहता। मन की यही शुद्धता और पवित्रता इन्सान के भावों और विचारों के सौन्दर्य का प्रतीक होती है जो उसे उच्च बुद्धि, उच्च ख़्याल बनाती है और वह इस जगत में यानि तीनों लोकों में अपना नाम रोशन कर लेता है। इस उच्च अवस्था को प्राप्त करने हेतु सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है:-

हुण अन्दर जुड़ो जी, बैहरूनी छडो वृत्ति
बैहरूनी वृत्ति विच लाभ न कोई
अन्दरूनी वृत्ति विच प्रसन्नता होई
हुन प्रसन्नता होई जी बैहरूनी छडो वृत्ति
हुण अन्दर जुड़ो जी, बैहरूनी छडो वृत्ति

अर्थात् अपने जीवन का आधार अपने अन्दर ही है बाहर नहीं, इस सत्य को मानो और अपनी प्रवृत्ति बाहरी वस्तुओं या बाहरी घटनाओं आदि के प्रति न रखते हुए, अपनी मानसिक स्थिति के प्रति रखो यानि अपने मन-मस्तिष्क को एक अवस्था में साधे रखो। इसके लिए अपने आप पर आत्म-नियन्त्रण रखो और अपने अन्दर की ओर अभिमुख हो जाओ, बाहरी बातों के प्रति नहीं। चाहे कुछ भी हो जाए पर अपने आप पर पहरा रखो। किसी की निन्दा चुगली न करो, किसी से तर्क वितर्क न करो।

ध्यान रखो कि मन में न तो किसी के प्रति वैर भाव पैदा हो और न ही अन्तर्द्वन्द्व पनपे। इसी प्रकार अफुर अवस्था में बने रह सबके प्रति सजन-भाव मज़बूत रखो। जानों कि यह अपने आप में वह तप है जो इन्सान को बाह्य विश्व की अपेक्षा, अपनी मानसिक स्थितियों के प्रति अधिक अनुराग रखने की प्रवृत्ति में ढालता है। याद रखो ऐसा होने पर चित्त की एकाग्रता में, कभी विघ्न नहीं पड़ता और मन-मस्तिष्क सम अवस्था में स्थिर बना रहता है।

तात्पर्य यह है कि मन-मस्तिष्क की सम अवस्था से, अन्दरूनी वृत्ति आत्मीयता व प्रियता की प्रतीक हो जाती है और उसका, आत्मा में जो है परमात्मा, उससे करीबी सम्बन्ध बना रहता है यानि मनुष्य का ख़्याल, अपने घर में बना रहता है या हम कह सकते हैं सुरत 'ब्रह्म शब्द' के संग जुड़ी रहती है। इस अवस्था में मन में कुछ भिन्न या दूसरा भाव घर करने की गुंजाईश नहीं रहती। फलतः हृदय, मन या अंतःकरण सदा एकरस विशुद्ध रहता है और इन्सान को

निज यथार्थ स्वरूप का स्वतः बोध बना रहता है। इस प्रकार समभाव नज़रों में स्थित हो जाता है, जो समदृष्टि रूपा गुण के विकसित होने का हेतु होता है। फिर किसी से असमानता का व्यवहार करने का ख़्याल ही नहीं पैदा होता यानि हम बैहरूनी वृत्ति में प्रसन्नतापूर्वक सबसे मित्रता का व्यवहार करते हैं और हमारी जिह्वा व ख़्याल सजनता के प्रतीक बन जाते हैं।

ऐसा बुद्ध यानि समभाव-समदृष्टि इन्सान, आत्मा की आवाज़ यानि अंतःकरण का निर्देश सुनने व धारने वाला, श्रेष्ठता को प्राप्त होता है। अंतर की जानने वाले ऐसे समबुद्धि इन्सान की, अन्दरूनी व बैहरूनी दोनों वृत्तियों की निर्विकारता के कारण, असमानता नहीं पनपती यानि मन में कपट नहीं पनपता। आशय यह है कि वह मन में कुछ न रखते हुए, सबसे खुले हृदय से बात करता है।

इस प्रकार वह हृदय का भेद कह देने वाला बहादुर, किसी अन्य को भी, भेदभाव की दृष्टि से नहीं देखता, यानि किसी के लिए रहस्यमय नहीं होता। इससे उसके हृदय आकाश, उसके भीतर स्थित गुप्त रूप में मन, हृदय की गति, चित्तवृत्ति व भावना को मन की दशा अनुसार विशुद्धता प्राप्त होती है। ये शुभ लक्षण होते हैं, चिंता या संताप की वेदना से रहित, मन की शांत अवस्था के, यानि इन्सान के लिए संतोषी व धैर्यवान बने रहने का पराक्रम दिखाने योग्य बने रहने के।

याद रखो समभाव-समदृष्टि की युक्ति, ज्ञान नेत्र खुले रख, सब कुछ अन्दर से धारने यानि सत्य धारणा करने व उसे ही

बाहर वर्त्त-वर्त्ताव में लाने की युक्ति है। अपने ज्ञान नेत्र खुले रखते हुए, सत्यज्ञान प्राप्त कर पाने के योग्य ऐसा इन्सान, विशुद्धता और स्पष्टता का प्रतीक होता है। इस अवस्था को प्राप्त करने पर इन्सान भीतरी/गुप्त बातों का सत्य जान जाता है। इसके अतिरिक्त वह अपने शरीर के भीतरी अंगों, जैसे हृदय, मस्तिष्क आदि को सम अवस्था में क्रियाशील रखते हुए, सबसे आत्मीयता अनुरूप व्यवहार करता है। तभी तो ऐसा आत्मीयजन यानि सजनता का प्रतीक, सबका घनिष्ठ मित्र बन जाता है और सबसे कहता है:-

बल्ले बल्ले बल्ले ओ बल्ले मेरा मित्र,
मेरा मित्र है, जित्थे ओ कित्थे
सानूं लभणां पैणां नहियों, हर अन्दर,
हर अन्दर ओ है अस्थिते

इस सन्दर्भ में यह भी जानो कि जो इस प्रकार समभाव-समदृष्टि की युक्ति अपनाता है व व्यवहार में लाता है वह स्वतन्त्र बुद्धि होता है। जानो उसे कभी भी किसी अन्य पर निर्भर नहीं होना पड़ता। उसकी सरलता आनन्द का अंतरंग होती है और सौन्दर्य बहिरंग होता है।

इसके विपरीत सांसारिकता, बाहर से मिथ्या विषय-विकारों को धारने व उनके वेग से उदित फुरनों/संकल्पों के प्रभाव से मन को अशांत करने, व मस्तिष्क के असंतुलित अवस्था को प्राप्त होने की बात है। इस अवस्था में ध्यान अन्तरजगत से हट कर, बाह्य जगत की ओर हो जाता है और इन्सान अपने जीवन उद्देश्य से भटक, बाह्य विषयों में रुचिशील हो जाता है। इस प्रकार आत्मीयता का भाव व व्यवहार छूट जाता है

और ख़्याल परमार्थ से छूट, स्वार्थ में उलझ बेघर हो जाता है। तात्पर्य यह है कि इन्सान की पकड़ से विचार का छूटना, उसके अचेतन अवस्था को प्राप्त होने का प्रतीक होता है। इस प्रकार वह अविचारी, कुकर्म-अधर्म के मार्ग पर अग्रसर हो जाता है। तभी तो जो सांसारिकता को अपनाता है वह पराधीन हो जाता है और उसके लिए निर्विकारता से जीवन जीना असम्भव हो जाता है।

जानो इस भ्रमित अवस्था में इन्सान के लिए, संतोषी, धैर्यवान व आत्मविश्वासी बने रहना, अपने आप में बहुत बड़ा सवाल बन जाता है। इसी परिप्रेक्ष्य में आज के चलन के मुताबिक, इन्सान अंतरंग घटिया होते हुए भी, बहिरंग आकर्षक दिखाने में चतुर होता है। इसीलिए तो वह धोखेबाज व दग़ाबाज कहलाता है। कहने का मतलब है कि, आज का मानव सच्चरित्रता के स्थान पर, बाहरी तड़क-भड़क यानि दिखावे में, अधिक विश्वास रखता है और उसी भाव अनुसार, स्वार्थ व परमार्थ दोनों में ही, बाह्य कृत्य करते हुए औपचारिकता निभाता है।

ध्यान दो कि मनुष्य के पापों और पुण्यों का साक्षी, मन में स्थित परमात्मा यानि अंतःकरण ही होता है। अन्तर्भाव रूप में वृत्ति, चित्त में स्थित भाव व स्वभाव द्वारा हमारे वचन व कर्म से साक्षात् हो जाती है और जिन भावों को वह छिपाता है, उनका नाश कभी नहीं होता। वे संचारी भाव वाशना के रूप में, जन्म-जन्मान्तरों तक संग बने रहते हैं और माया के कपट रूप में सामने आकर, इंसान के रास्ते मे विघ्न बाधाओं के कारण बनते हैं।

फलतः इन्सान तुच्छ वस्तुओं के संकलन में यत्नशील रहते हुए, व्यर्थ ही इधर-उधर घूमता रहता है और निराधार बातें करते हुए सदा झुखता-रोता रहता है। जान लो कि ऐसा इन्सान पराश्रित होकर, कमज़ोर इंसानों की तरह जीवनयापन करता है। ऐसी स्थिति में इन्सान पराजित होने की लज्जा तक छोड़ देता है और दुष्कर्म करते हुए, शोभाहीन परिस्थिति को प्राप्त हो, अपयश लेता है और अपयश देता है।

इस प्रकार वह मन की शान्ति व जीवन का आनन्द खो बैठता है। यह अपने आप को अव्यवस्थित कर, बुरी दशा को प्राप्त होने व अपना ही सर्वनाश करने की बात है। हमारे साथ ऐसा न हो, इस हेतु हमें ब्रह्म भाव अनुसार, सबमें विशेष व सबसे निर्लेप रहते हुए, जीवन जीने के योग्य बनना होगा। इस हेतु सावधान रहना है कि किसी भी परिस्थिति में, हमारी अन्दरूनी व बैहरूनी दोनों वृत्तियों की पकड़ से, आत्मीयता का चलन न छूटे। इसके लिए हमें ख़ुद पर नियन्त्रण रखना होगा। यह निज धर्म पर मज़बूत बने रहने की बात है।

अंततः हमारे लिए बनता है कि हम समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार, सजन-भाव के वर्त्त-वर्त्ताव द्वारा, अपने निर्द्वन्द्व, निर्विघ्न, निर्विकार, निर्वैर, निर्भय व निर्लिप्त नित्य स्वरूप में बने रह, कुल सृष्टि में सर्वव्यापक भगवान का अनुभव करते हुए जीवन जीना सुनिश्चित करें। तभी हमारी शारीरिक व मानसिक अवस्था सदा सम या एकरस बनी रह सकेगी, जो युवावस्था की प्रतीक होगी। याद रखो मनुष्यों में कुदरत प्रदत्त ऐसा जीवन जीने की शक्ति व क्षमता है, यह

सतयुगवासियों ने सिद्ध कर दिखलाया। तभी तो मनुष्य रूप, ईश्वर की सब अन्य सब कृतियों से उत्कृष्टता का प्रतीक माना जाता है। अतः अपने यथार्थ स्वरूप व बल को समझो व उसी पर स्थिर बने रह, अपने व सबके लिए निष्कामतापूर्वक जीवन जीने का चलन अपनाना, हितकर समझो। ऐसा करने पर ही सब प्रकार के फुरनों की हेतु विघ्न-बाधाओं से बचे रह, अपने अंतःकरण को विशुद्ध रखते हुए, जीवन का मूल आशय सिद्ध कर पाओगे। सबकी जानकारी हेतु ये विघ्न-बाधाएँ यानि व्याधियाँ क्रमशः इस प्रकार हैं:-

1. व्याधि यानि शारीरिक अस्वस्थता या वियोग आदि से उत्पन्न मन का क्लेश, रोग।

2. स्त्यान यानि सत्कर्म में चित्त का न लगना, चित्त की अकर्मण्यता यानि निकम्मापन।

3. संशय यानि किसी वस्तु का अनिश्चयात्मक ज्ञान, दुविधा, चित्त की डोलायमान हिलती-ढुलती प्रतीति, सम्भावना और असम्भावना का मिश्रण।

4. प्रमाद यानि किसी नशे में होने की अवस्था, पागलपन, कर्त्तव्य की उपेक्षा, परिणाम का विचार किए बिना अनुचित काम कर बैठना।

5. आलस्य यानि शारीरिक या मानसिक शिथिलता, किसी कार्य विशेष में तत्पर न होने की प्रवृत्ति।

6. अविरति यानि वैराग्य का अभाव, विषयों में तृष्णा।

7. भ्रान्ति दर्शन यानि योगसाधना तथा उसके फल को मिथ्या समझना।

8. अलब्धभूमिकत्व यानि समाधि में न पहुँचना।

9. अनवस्थितत्व यानि समाधि भूमि को पाकर भी उसमें चित्त का न ठहरना।

संक्षेपतः कहने का आशय यह है कि व्याधि से भक्तिभाव में बाधा उत्पन्न होती है। इन विघ्न बाधाओं में उलझने के कारण सत्कर्म में चित्त नही लगता और ऐसा क्लेशों का सताया हुआ मानव, निकम्मे इन्सान की तरह इस जगत में विचरता है। चित्त की यही अकर्मण्यता उसे दुविधा में डाल देती है और वह अज्ञानता में फँस जाता है। फलतः चित्त स्थिर नहीं रह पाता और सम्भव व असम्भव के चक्कर में उलझ, अन्तर्निहित ताकत होते हुए भी उससे उबर नहीं पाता। यह पागलपन की अवस्था कहलाती है।

हम जानते हैं कि पागल व्यक्ति कर्त्तव्यों की उपेक्षा करता है और प्रत्येक कार्य, परिणाम का विचार किए बगैर ही करता है। तभी तो आधे-अधूरे मन से किए हुए कार्य का उचित फल न मिल पाने के कारण वह आत्मविश्वास खो बैठता है और आलसी हो जाता है। ऐसे में विषयों की तृष्णा रूपी काली सर्पणी उसको सताने लगती है और उसमें वैराग्य का अभाव हो जाता है। इस तरह वह इन्सान ईश्वर से विमुख हो जाता है और ध्यान साधना में उसका मन नहीं लगता। तभी तो वह ध्यान साधना के फल यानि मोक्ष को मिथ्या समझता है और इस प्रकार धीरे-धीरे उस अविचारी की बुद्धि मारी जाती है।

फिर अपना ही असलियत स्वरूप उसके लिए भ्रान्ति बन जाता है और वह नश्वर शरीर को ही अपना सत्य समझने लगता है। यह होती है बुद्धि की अचेतन अवस्था यानि अज्ञानता के कारण परमार्थ के रास्ते से भटक स्वार्थ का रास्ता अपनाना।

इससे उसके हृदय में सांसारिक फुरने घर कर जाते हैं और उसके लिए अफुर अवस्था को धारण कर समाधि अवस्था तक पहुँचना कठिन हो जाता है। इस परिप्रेक्ष्य में अगर भूले भटके कभी वैराग्य की अंधेरी चलने पर ऐसा इन्सान इस अवस्था तक पहुँच भी जाता है तो समाधि अवस्था को प्राप्त कर भी उसका चित्त आत्म-स्वरूप में ठहर नही पाता। यह अत्यन्त विडम्बनीय स्थिति होती है।

इस सन्दर्भ में यह जान लो कि, अन्तरिक्ष में छाए हुए धूल जैसे सूक्ष्म कणों के बादल, जिस प्रकार प्रकाश को रोकते हैं, उसी प्रकार ये समस्त विघ्न बाधाएं, अज्ञान अंधकार के छा जाने के कारण, हृदय से प्रकाश के लुप्त होने का हेतु बनती हैं। हमारे हृदय आकाश पर छाए हुए अज्ञान रूपी बादलों के कारण ही हम अपने असलियत ब्रह्म स्वरूप का बोध नहीं कर पाते।

अतः इस अज्ञान रूपी अंधकार से उबर, पुनः ब्रह्म प्रकाश में स्थित होने के लिए, हमें अपने हृदय आकाश का वातावरण स्वच्छ रखना होगा ताकि हमारी सुरत 'शब्द ब्रह्म' के साथ जुड़ी रहे। इस तरह हम अपने ब्रह्म स्वरूप में स्थिर रह, इस जगत में निर्लिप्तता से विचरने के योग्य बने रहें व अपने जीवन लक्ष्य यानि परमपद को प्राप्त कर सके। याद रखो

युवावस्था के भक्ति-भाव यानि समभाव-समदृष्टि की युक्ति द्वारा समाधि अवस्था को प्राप्त करना श्रेष्ठकर माना जाता है क्योंकि ऐसा साधक एक बार समाधि अवस्था में पहुँच कर फिर आजीवन बैखौफा-बेखतरा अटलता से अपने असलियत अवस्था में बने रहने में समर्थ होता है।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरांत सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियन्त्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित

दिनाँक 10 मई 2015 का सबक

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्मा-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इन्सान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शान्ति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

यह जो प्रार्थना अभी हमने की है, यह हम कितनी बार कर चुके हैं?

लगभग एक वर्ष से अधिक हो गया है।

तो क्या यह प्रार्थना जिस उद्देश्य प्राप्ति हेतु है, हम उसके प्रति निरन्तर जागरूक है या बीच में कहीं अटक जाते है?

जागरूक हैं।

सारे ठीक से विचार करो।

जी, अभी कमी है।

याद रखो यदि हम अपने उद्देश्य के प्रति पूर्ण जागरुक नहीं रहते तो प्रार्थना स्वीकार नहीं होती। अत: जीवन उद्देश्य के प्रति जागरूक रहो। अब बताओ कि इस उद्देश्य प्राप्ति के लिए हमने ईश्वर से क्या बख्शने की प्रार्थना की है?

बल, बुद्धि व सुमति।

जान लो कि समभाव-समदृष्टि के इस स्कूल में प्रदान किए जा रहे आत्मिक ज्ञान के माध्यम से आपको बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने का प्रयत्न चल रहा है। हम जानना चाहते हैं कि इस प्रयत्न से लाभ उठा, आप अब तक कितनी सुमति में आ चुके हो अर्थात् आत्मनिरीक्षण द्वारा अपने विकारों पर विजय पा कितने बलवान व बुद्धिमान बन चुके हो?

हमें जो भी यहाँ से बताया जा रहा है, हम उसके अनुसार अपने आप को ढालने का हर संभव यत्न कर रहे हैं और निरन्तर जागरूक हैं कि हमारा यह प्रयत्न हमसे तब तक न छूटे जब तक कि हम पूर्णत: सुधर न जाएं।

यह तो अच्छी बात है कि आप अपनी तरफ से आत्मसुधार के लिए यत्नशील हो। पर इस हेतु अपने ख़्याल सहित उन सबकी तरफ से भी सावधान रहने की आवश्यकता है जिनके साथ हम क्षण-प्रतिक्षण विचरते हैं यानि हमारे माता-पिता,

भाई-बहन, मित्रजन व संगी-साथी इत्यादि क्योंकि कई दफ़ा वे सब भी चाहे-अनचाहे हमारी इस उद्देश्य पूर्ति के प्रति हमारे यत्न को कमज़ोर करने का कारण बनते हैं। ऐसे में सच्चे पातशाह जी हमें सतर्क करते हुए कहते हैं कि:–

ख़बरदार अक्ल ते राहवीं, बुरा संग कर अक्ल अपनी न गँवावी।

अर्थात् ऐसे लोगो के संग साथ से बचकर अपनी अक्ल पर खबरदार बने रहना है ताकि कोई भी आपके आगे बढ़ते कदमों को रोक न सके। याद रखो यह अमल में लाने योग्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात है। इसे धार कर स्थिरता में आ जाओ और आपस में जब भी विचरो आपके व्यवहार द्वारा इस सत्य की प्रतीति हो। चूंकि हम एक ही परिवार से सम्बन्धित हैं अत: हम दिल से चाहते हैं कि नेकी का रास्ता अपनाकर सब इकट्ठे अपनी मंज़िल पर पहुँच जाएँ अर्थात् घर सतयुग बना परमपद को प्राप्त कर लें। क्या सब तैयार हो?

हाँ जी।

तो सब ब्रह्मभाव को मज़बूती से धारण कर लो। इस हेतु ध्यान से सुनो कि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में क्या कहा गया है:-

ब्रह्म नाम ब्रह्म है ध्यान बेटा,
हाँ हाँ हाँ ब्रह्म वचन करो प्रवान बेटा।

ब्रह्म विचार नूं फडन सजन,
फिर ब्रह्म है बड़ा महान बेटा।।
ब्रह्म दी महिमा कोई विरला गावे
हाँ हाँ हाँ हाँ ब्रह्म स्वरूप कोई विरला कहावे।
जेहड़ा खालस सोना हो, खोट न राहवे बदन में,
ब्रह्म प्रकाश फिर ओही कहावे।।
हम हैं ब्रह्म, तुम हो ब्रह्म
हाँ हाँ हाँ हाँ ब्रह्म स्वरूप ब्रह्माण्ड सारा।
ब्रह्म प्रकाश सारी सगली मानो,
ब्रह्म है जगत जहान सारा।।
ब्रह्म स्वरूप है अपना आप,
हाँ हाँ हाँ हाँ हम तो हैं सारा जग प्रकाश।
ब्रह्म स्वरूप कुल इन्सान,
ब्रह्म प्रकाश सारी सगली मान।।

अर्थात् हम हैं ब्रह्म, तुम हो ब्रह्म हाँ हाँ हाँ हाँ ब्रह्म स्वरूप ब्रह्माण्ड सारा, इसको यादगीरी मे रखते हुए हमने किसी के प्रति कोई वैर-भाव नहीं रखना, न ही किसी से ईर्ष्या-द्वेष रख उसकी निंदा-चुगली करनी है अर्थात् किसी को भी देख कर, किसी प्रकार का फुरना हमारे अन्दर नहीं उठना चाहिए। हमें इस कथन के अनुसार सबके प्रति एक निगाह एक दृष्टि रखनी है। एक निगाह एक दृष्टि का अर्थ है सबके प्रति समान दृष्टिकोण रखना। इससे समदृष्टि हो जाती है अर्थात् अन्दरूनी-बैहरूनी वृत्ति सम हो जाती है और हम सबके साथ एक जैसा व्यवहार करने में निपुण हो जाते हैं। तभी तो हमारे चाल-चलन द्वारा एकता, एक अवस्था प्रदर्शित होती है।

जानो यह सतवस्तु का चलन है। तभी तो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार, सतवस्तु में केवल विचार, सत् ज़बान, एक दृष्टि, एकता और एक अवस्था होती है। खुला प्रकाश होता है व कला से सब कुछ उपजता है। सजनो अब जब सजन कलुकाल हटने वाला है और सतवस्तु आने वाली है, तो हमारे लिए बनता है कि हम समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार, वैसा ही चलन अपनाना व उस पर बने रहना, अपना सबसे महान कर्त्तव्य मानें व उसकी सिद्धि हेतु स्वार्थपरता से हट, निष्काम रास्ता अपना लें।

इस हेतु चाहे हमे कितने ही कष्ट-क्लेशों व कठिनाइयों का सामना क्यों न करना पड़े, उन्हे भी हँस कर सहने के लिए तत्पर हो जाएं और इस तरह भारत माता के सुपुत्र बन उसे हर्षा दें। निश्चित ही अपने बच्चों को एकता के सूत्र में बंधे देख भारत माता खिलखिला उठेगी और चहुँ ओर पुनः एकता व शान्ति का साम्राज्य स्थापित हो जाएगा।

इस सत्य व तथ्य से प्रेरणा लेते हुए, हमारे अन्दर एकता व एक अवस्था में बने रहने की चाहना पैदा होनी चाहिए ताकि हम भी अपने स्वभावों को सदा मानवीय व्यक्तित्व अनुरूप, सम अवस्था में साधे रख पाएं और कोई भी विकृति हमें छू न पाए। याद रखो कमज़ोर इंसान को ही विकृतियाँ सताती हैं जबकि ताकतवर तो हर विकृति से बचे रहने में सक्षम होता है। सजनो सुनों, इस कार्य की सिद्धि केवल समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुरूप, सजन भाव की पढ़ाई व गुढ़ाई कर व ब्रह्म पदवी पा, जगत में आत्मीयता व नीतियों के

अनुसार, अकर्त्ता भाव से विचरने योग्य बन कर ही हो पाएगी। याद रखो ऐसा होने पर ही हम युवावस्था के भक्तिभाव पर सुदृढ़ बने रह पाएंगे और जप-तप-भजन-बन्दगी वाले बाल-अवस्था के भक्ति भावों से बचे रह पाएंगे।

इस सन्दर्भ में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में परमेश्वर हमें सावधान करते हुए क्या कह रहे हैं, सजनों ध्यान से सुनो- 'पहले इन्सानों को संसारी फुरना और संसारी बातों का कनरस होता है। जब इन्सान विचार करता है तो सम्भल जाता है और फिर शास्त्र को पढ़ता है। उसका ध्यान शास्त्र के कनरस में पड़ जाता है। संसारी कनरस छोड़ कर फिर शास्त्र का कनरस पड़ जाता है। लेकिन सजन इससे भी कामयाब नहीं हो सकता।'

कामयाब क्यों नहीं हो सकता?

मौन।

क्योंकि लापरवाही या विषयासक्ति के कारण हम शास्त्र को मात्र पढ़ते-सुनते ही हैं, उसमें वर्णित विचार को अमल में नहीं लाते। इसलिए इतने सालों से शास्त्र को पढ़ने-सुनने के बावजूद भी हमारी उन्नति नहीं हो पाई यानि हम अफुर अवस्था को प्राप्त नहीं कर पाए।

परमेश्वर कहते हैं कि, संसारी फुरना व संसारी बातों का कनरस, जब इन्सान के अन्दर प्रबल फुरने का रूप ले लेता है तो इन्सान, उन नकारात्मक भाव-स्वभावों को अनुचित समझने के उपरान्त, उन स्वभावों से छुटकारा पाने हेतु,

शास्त्रों को पढ़ना आरम्भ कर देता है और सांसारिक कनरस से मुक्ति पाने की ख़ातिर, अपने ध्यान को, शास्त्रों के ज्ञान के कनरस में फँसा बैठता है। यहाँ समझने की बात यह है कि शास्त्र के कनरस से छूटना संसारी कनरस से छूटने की अपेक्षा अधिक कठिन होता है। ऐसा इसलिए क्योंकि शास्त्र का कनरस जब इन्सान के ऊपर हावी हो जाता है तो इन्सान अहंकारी बन गुरु-चेले के बन्धन में फँस जाता है। इस प्रकार दोनों प्रकार के कनरसों के प्रभाव से, मन में उठने वाले अच्छे-बुरे फुरनों से, आज़ादी प्राप्त करने के यत्न में, वह अपने आप को असक्षम पाता है।

ऐसा होने पर वह चिन्ता के कारण तनावयुक्त व परेशान इन्सान, अपनी सोच के उद्देश्य को नहीं जान पाता, और उसका ख़्याल, हर बात का समय पर समाधान ले पाने के स्थान पर, उस विषय के प्रति लगातार सोच में डूबा रहता है। जान लो कि यह अति कठिन मानसिक परिस्थिति होती है।

इससे हृदय से प्रसन्नता का लोप हो जाता है। इसी कारण मानव के लिए शान्त व विश्राम अवस्था में बने रहना नामुमकिन हो जाता है और वह स्वार्थियों के चगुंल में फँस कभी इधर तो कभी उधर करवटें बदलता रहता है यानि परमार्थ की राह पर अग्रसर होते हुए जीवन बनाने की बात, जो कि जीवन का सबसे महत्त्वपूर्ण कार्य है, उसके विचार से छूट जाती है। इस प्रकार युवावस्था के भक्ति-भाव को अपनाना व उस अनुसार यथा बने रहना, उसके लिए

असम्भव हो जाता है और आत्मिक ज्ञान प्राप्ति के प्रति उसकी रुचि नहीं पनपती। स्पष्ट है कि ईश्वर प्रदत्त आत्मिक ज्ञान व आत्मिक बल रूपी शक्ति यानि निज ज्ञानस्वरूप के प्रति अचेतन होने के कारण, संसारियों के व्रत-नेम, आडम्बर युक्त मनगढ़ंत कर्मकाण्डों एवं बाल अवस्था के भक्ति-भावों में उलझ कर, उनकी अधीनता स्वीकार, उनका अनुकरण करना, उसकी मजबूरी हो जाती है। धीरे-धीरे अज्ञान धारणा का यह चलन, उसके स्वभाव के अन्तर्गत हो जाता है यानि वह सांसारिक गुरुओं के बन्धन में फँस, मिथ्या आचरण अपना बैठता है।

यहाँ यह भी समझ लो कि अधिकतर संसारी गुरु जो कि धर्म शास्त्रों में वर्णित धुर की वाणी को साधारण जनता तक यथा पहुँचाने के सन्देश वाहक होते हैं, वे निष्काम भाव से अपना कर्त्तव्य ठीक नहीं निभाते। वे तो स्वार्थ सिद्धि हेतु इस धुर की वाणी में अपनी मनमत जोड़कर, भोली-भाली जनता के साथ छल-कपट करने का घोर अपराध करते हैं।

इस तरह नादान जनता जो कि इनकी मंशा को नहीं जान पाती, वह दूसरों की देखा-देखी, इन गुरुओं का अंधा अनुकरण कर गुमराह हो जाती है और परमार्थ को यानि सत्य को अपना नहीं पाती। इस प्रकार संकीर्ण दृष्टिकोण व विचारधारा के कारण उनके मन में कट्टरता का भाव उत्पन्न होता है और आपसी झगड़े व मतभेद पनपते हैं। याद रखो ये सब, तीनों तापों के टेम्प्रेचर की सम अवस्था भंग होने यानि स्वभावों के टेम्प्रेचर के घटने-बढ़ने का कारण होता है। यह

भी जानो कि तीनो तापों का टेम्प्रेचर तभी घटता-बढ़ता है, जब इन्सान की नज़र से समभाव छूटता है और वह समदर्शिता अनुसार व्यवहार करने के अयोग्य हो जाता है। इसके विपरीत संसारी व परमार्थी दोनों प्रकार के कनरस में न फँस, युवावस्था की भक्ति यानि समभाव-समदृष्टि की युक्ति अपनाने वाला, ईश्वर का संग कर अपने असलियत स्वरूप को पहचान लेता है। इस प्रकार अपने यथार्थ में बने रह, वह विचारवान समानता का भाव अपनाकर स्वतन्त्र हो जाता है।

ध्यान दो कि कनरस चाहे परमार्थी हो या स्वार्थी, है तो कनरस ही, यानि अच्छा या बुरा इन्द्रियरस है। यह ब्रह्म भाव को धारण करने से प्राप्त होने वाली, आत्मअनुभूति से भिन्न, श्रवणशक्ति को प्राप्त होने वाली अच्छी या बुरी अनुभूति है। याद रखो आत्मस्वरूप की अनुभूति से जहाँ सत्य प्रकट होने के कारण आनन्द प्राप्त होता है और सत्-चित्त-आनन्द स्वरूप में स्थिति होती है वही इस इन्द्रिय अनुभूति से मन में बाह्य वस्तुओं के सुखात्मक और दुःखात्मक प्रभावों की संवेदना उत्पन्न होती है जो मन में अच्छे-बुरे संकल्पों-विकल्पों की तरंगे उठाती हैं।

याद रखो किसी भी बाह्य वस्तु या शास्त्र के कनरस का विषयी, कभी भी इस व्यक्तिगत चेतन संस्कार से सुनी हुई बात का, बौद्धिक ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता। जब बौद्धिक ज्ञान प्राप्त नहीं कर सकता, तो उसे इस्तेमाल करने की योग्यता कहाँ से प्राप्त करेगा? अतः हमे जहाँ ख्याल है वही

दृष्टि रख, अनुशासित ढंग से शब्द विचार को, जीवन में उतारने के महत्त्व को समझते हुए, तद्नुकूल ही कार्य करना आरम्भ कर देना है। याद रखो इसके विपरीत चलन, उस परमपिता परमात्मा के प्रति, गुस्ताख़ी होगी और यह अशिष्टता पूर्ण आचरण, हमारे लिए अति घातक साबित होगा। यह हमारे घमण्डी होने व मन में तूं-मैं का सवाल पैदा होने की बात होगी। परिणामस्वरूप हम निर्लज्ज व नीच प्रवृत्ति बन जाएंगे।

इसका मतलब यह नहीं, कि हमने आपस में बातचीत करना व शास्त्र आदि को पढ़ना व सुनना ही बन्द कर देना है। नहीं ऐसा कदापि नहीं करना। आवश्यकता अनुसार यह क्रिया अवश्य करनी है ताकि मन में बुरे संकल्पों के स्थान पर स्वच्छ संकल्प उठें और उस दौरान प्राप्त अच्छे या बुरे विचारों को परखने की, योग्यता बनी रहे। इस तरह केवल सत्य व जीवनोपयोगी विचारों को धार, चैतन्यता से वर्त्त-वर्त्ताव में लाने के स्वभाव में ढलना है।

इससे एक दूसरे के मनोभावों की स्पष्टता होगी और आपस में मानवीय शिष्टाचार अनुरूप आचरण अपना सकेंगे। इसलिए हमें समभाव-समदृष्टि के महत्त्व को जानना होगा व उसके प्रयोग द्वारा, हर परिस्थिति में अपने मानव होने की अवस्था में, एकरस बने रहना सुनिश्चित करना होगा। तभी एक दूसरे के प्रति आदर-सत्कार, प्रेम-प्यार व सजन-भाव बना रहेगा।

इस परिप्रेक्ष्य में, हमें स्मरण रखना है कि हम मनुष्यों का,

अपने मनुष्य होने की अवस्था में, सदा मज़बूत रहना, चैतन्य अवस्था कहलाती है। यह अवस्था हमारे शक्तिशाली व आत्मिक ज्ञानी होने का प्रतीक होती है। इस उत्तम अवस्था में, हृदय में शुद्ध वातावरण के प्रभाव से, मनुष्य की बुद्धि पूर्णतया सचेत रहती है। यह इन्सान के स्थिरता से, ख़्याल को अपने घर में, ईश्वर के संग बनाए रखते हुए, सत्यनिष्ठा व धर्मपरायणता से यथार्थ अनुरूप, जीवन जीने की बात है।

याद रखो किसी कारण भी इससे विपरीतता, मानव के विकारी व दुराचारी हो मानव-धर्म हारने की बात होती है। ऐसा होने पर ही मनुष्य के स्वभावों के टेम्प्रेचर के, घटने-बढ़ने का क्रम शुरू हो जाता है और इस प्रकार उसके लिए जाग्रत अवस्था में बने रह, सच्चाई-धर्म के रास्ते पर चलना नामुमकिन हो जाता है। यह स्वप्न अवस्था कहलाती है यानि ऐसी मानसिक क्रिया, जिसमें सोए रहने की अवस्था में, विविध व्यक्तियों, दृश्यों, घटनाओं आदि को देखते हुए, उनकी अनुभूति होती है।

जो इन्सान इस अर्द्धचेतन अवस्था में बना रहता है, वह धीरे-धीरे सुषुप्ति रूपा अचेतन अवस्था यानि गहरी नींद को प्राप्त होता है। यह उस इन्सान की पूर्णतः अविवेकपूर्ण अज्ञानियों जैसी, मानसिक स्थिति होती है, जिसमें चित्त की एकाग्रता भंग होती है। फलतः इन्द्रियनिग्रह नहीं हो पाता और विकार वृत्तियों में फँसे इन्सान के लिए सत्य-असत्य की पहचान करना, नामुमकिन हो जाता है। यही कमज़ोरी उसके जीवन में अज्ञान धारणा द्वारा, सुख और दुःख यानि झुखने व रोने

का कारण बनती है। इस प्रकार संतोष, धैर्य, सच्चाई, धर्म उसके लिए सवाल बन कर रह जाते हैं और उस व्यक्ति का सम अवस्था में बने रहना व समदृष्टि अनुसार व्यवहार कर पाना, नामुमकिन सी बात हो जाती है। इस तरह एकता, एक अवस्था भंग होते ही, मन को वश में रखते हुए, आत्मविश्वास से जीवन जीना, कठिन हो जाता है। इस प्रकार इंसान मनमत अनुसार चलन अपना बैठता है। ऐसा न हो, इसके लिए सब कुछ त्याग कर भी, उस ईश्वर के संग बने रहो और अच्छी प्रारब्ध को प्राप्त करो। याद रखो ईश्वर के संग बने रहने से ही घर सतयुग बन सकता है और परमपद प्राप्त हो सकता है।

यह जान लो कि मनुष्य होने की अवस्था, मन की संकल्प रहित अवस्था होती है और इसकी विपरीतता, मन में संकल्प-विकल्प के उठने का, कारण बनती है। इस प्रकार इस कठिन विकृति के कारण, सत्य पकड़ से छूटता है और इन्सान झूठ के रास्ते पर अग्रसर हो जाता है। ऐसा होने पर वह कमज़ोर इन्सान, विषयों व दृश्यों में आसक्त हो जाता है व अनेक प्रकार की घटनाओं से प्रभावित हो, इस तरह से अन्तर्द्वन्द्व में फँस जाता है कि उसके लिए मनुष्यत्व में बने रहना कठिन हो जाता है।

इस प्रकार जब वह अन्तर्द्वन्द्व के कुप्रभावों को सहने योग्य नहीं रहता, तो काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार द्वारा, उन्हें प्रगट करता हुआ, आप भी दुःखी रहता है और दूसरों को भी परेशान करता है।

इस तरह हमने जाना कि, जाग्रत अवस्था भंग होने से इन्सान, जब स्वप्न या सुषुप्त अवस्था को प्राप्त होता है, तो मुश्किल में पड़ जाता है। इस परिस्थिति में वह सात्विक धारणा, सुनिश्चित नहीं कर पाता और राजसिक व तामसिक धारणा, उसके विकारी भावों को और हवा देती हैं, जिससे वह मानवीय आचरण के विपरीत, कठोर व करूर स्वभाव अपना बैठता है। इस प्रकार वह स्वयं हँसी-खुशी जीवन जीने व दूसरों को वैसा जीवन जीने देने में बाधा व झंझट पैदा करता है।

यह अति विकट पागलों जैसी मानसिक स्थिति होती है। इससे इन्सान हठी स्वभाव का हो जाता है और किसी की नहीं सुनता। फिर सांसारिकता के प्रभाव से बच, इस स्थिति से उबरने के लिए, शास्त्रों को पढ़ना आरम्भ कर देता है। जब उस पवित्र वाणी को सुनने से, उसको क्षणभंगुर सुख की अनुभूति होती है, तो उसके कठोर स्वभावों में, कुछ कोमलता का प्रवेश होना शुरू होता है। यह उसके हृदय की कोमल अवस्था का प्रतीक होता है।

ऐसी मनोदशा वाले इन्सानों को, दुराचारिता के रास्ते से हटा, सदाचारिता के रास्ते की तरफ मोड़ना, कुछ सम्भव होता है, क्योंकि मन में स्नेह, करुणा आदि का भाव व्याप्त होने से, इस क्रिया को करना सहज होता है। याद रखो कोमल अवस्था वाले इन्सान को ही, वज्र अवस्था में ढाल हीरा यानि निर्विकारी व पुनः सत्यज्ञानी और शक्तिशाली बनाया जा सकता है। तभी तो सबसे श्रेष्ठ, सबसे विद्वान,

सबसे गुणवान, सबसे बलवान, सबसे धनवान, सबसे बुद्धिमान व सारी दुनियां में ज्ञानवान हीरों की खान हनुमान जी को बजरंग बली नाम से जाना जाता है।

यही यत्न इस समभाव-समदृष्टि के स्कूल से चल रहा है, जिसमें कठिन से कठिन स्वभावों वाले इन्सानों को, भी आत्मसुधार कर, निर्भयता से निर्विकारी व वज्र अवस्था में ढलने व बने रहने हेतु, 'अलफ से ये' तक, आत्मिक ज्ञान की पढ़ाई व गुढ़ाई विधिवत् कराई जा रही है। इसके लिए उनको आत्मिक ज्ञान, नियमबद्ध प्रदान करने, धारण कराने व वृत्ति व स्मृति में उतार, इस निर्मल ज्ञान को बुद्धि द्वारा अमल में लाने योग्य, बनाने की पूरी व्यवस्था है, ताकि वे स्वभावों की कठिन अवस्था से उबर, कोमल अवस्था को प्राप्त हों और आत्मनिरीक्षण क्रिया द्वारा, अपनी कोमल अवस्था को, वज्र अवस्था में परिवर्तित कर, सुदृढ़ता से मनुष्यता अनुरूप, पुनः जीवन जीना आरम्भ कर दें। इस प्रकार निज ब्रह्म स्वरूप का बोध कर, ब्रह्म भाव अनुसार जगत में विचरते हुए, जन्म की बाज़ी को जीत लें। इसलिए हमारे लिए बनता है, कि हम इस हितकर व्यवस्था का खुद भी पूर्ण लाभ उठाएं व अपने बच्चों व परिवारजनों को भी, इससे वंचित न रखें। यही गृहस्थ आश्रम को सतयुग बनाने की कुंजी है।

तो क्या हम इस कुंजी से अपनी किस्मत का ताला खोलने को तैयार हैं? अगर हाँ जी, तो आओ ईश्वर को हाज़िर-नाज़िर रखते हुए सब मिलकर बोलते हैं-

हे ईश्वर ! संसार में भटके हुए, हम नादानों से, अब तक के जीवनकाल में जो भी भूलें हुईं, हम उन्हें दिल से स्वीकारते हैं। हे कृपानिधान ! करुणा के सागर, हमारी भूलों को क्षमा करो। हम यह भी मानते हैं कि दुनियां के चक्कर में आकर, आपके प्रति विमुख हो, अज्ञान धारणा के कारण, हम कलियुगी चलन अपना बैठे और हमसे ये सब भूलें हुईं।

हे त्रिकालदर्शी ! हमें पता लग चुका है, कि समय की गति को जानने वाले आप, जानते हो कि, सतयुग का आगमन शीघ्रता होने जा रहा है। इसीलिए ही तो आपने, हमें कलियुगी चलन से उबार, सतयुगी भाव-स्वभाव अपनाने हेतु, समभाव-समदृष्टि के स्कूल की व्यवस्था कायम कर, सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में विदित, समभाव-समदृष्टि की युक्ति के अनुसार, सजन-भाव में ढालने हेतु, आत्मज्ञान की पढ़ाई व गुढ़ाई कराने का प्रबन्ध किया है।

यह क्रिया हमें सम्भालने, व निज स्वरूप से पूर्णतः गिर दुष्चरित्रता में ढलने से पहले ही, आप द्वारा थाम लेने की बात है। यह अपने आप में आपका बड़प्पन ही है। इसलिए आगे के लिए, हम आपके प्रति पूरी श्रद्धा व विश्वास रखते हुए, समर्पित भाव से, आत्मज्ञान प्राप्त कर, सुधरना व सम्भलना चाहते हैं और नेकी का निष्काम रास्ता अपनाना चाहते हैं। इसलिए हम आपसे प्रार्थना करते हैं कि हमें परिवारसहित अपनी भूलें सुधारने का मौका दो।

हे सर्वशक्तिमान! हमें इतनी शक्ति दो, कि हम आत्मनियन्त्रण द्वारा, अपनी वृत्तियों में पनपने वाली विकृतियों के कारणों व

उनके प्रभावों से मुक्त रहने का, सामर्थ्य जुटा पाएँ। इस प्रकार सन्तोष-धैर्य में बने रह, शारीरिक व मानसिक स्वस्थता के बलबूते पर, अपने जीवन में घटने वाली घटनाओं का, खुद मज़बूती से सामना करने के योग्य बन, अपने मन-मन्दिर के द्वार इस तरह से खोल दें कि फिर किसी भी कारण वे बन्द न हो सकें।

हम दिल से चाहते हैं कि अपने मन को आप में ही लीन रखें, प्रसन्नचित्तता से अपने ख़्याल को आपके संग जोड़े रख सकें व अपना दृष्टिकोण सदा सकारात्मक रखने के योग्य बनें। इस तरह आपके हुक्म अनुसार आत्मज्ञान प्राप्त कर व उसे अमल में लाने योग्य बन, जीवन का अभिप्राय सिद्ध कर सकें व आत्मनिर्भरता व निर्भयता से, व्यावहारिकता के दौरान सजनभाव के वर्त्त-वर्त्ताव पर दृढ़ बने रहें। इस प्रकार सच्चाई, धर्म पर बने रह, परोपकार कमाते हुए गृहस्थाश्रम सतयुग बना, आत्मउद्धार करने में भी सफल हों।

अन्ततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरान्त सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियन्त्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्मा-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इन्सान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शान्ति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार
ज्योति स्वरूप है अपना आप,
हम तो ओही है प्रकाश, ज्योति स्वरूप
ब्रह्म नाल सजनों होना जे ब्रह्म सिमरन ये दा करो
जपो अजपा जाप

इस कथन के अनुसार, सब सजन रूप, रंग, रेखा रहित नित्य ब्रह्म को, ध्यान साधना द्वारा, अपने हृदय में, ब्रह्म भाव के रूप में, विद्यमान करो। इस नित्य भाव को इस तरह अपने हृदय में स्थिर कर लो कि उस ब्रह्म की व्यापकता,

ध्यान धारणा द्वारा प्रत्यक्ष रूप से हमारे विचार, ख़्याल, स्मृति व भावना में उतर जाए और हमारी मानसिक प्रवृत्ति यानि मन का झुकाव उसी अनुसार ढल जाए। इस तरह हमारा स्वभाव ब्रह्म भाव अनुरूप ढल जाए और एकाग्रचित्तता से उस ब्रह्म ज्ञान का प्रवाह हमारी बुद्धि को निरन्तर प्राप्त होता रहे। इसके प्रति हमें सावधान रहना है क्योंकि इस क्रिया में ज़रा सी चूक से, ब्रह्म ज्ञान के अविरल प्रवाह में जगत के ज्ञान के मिश्रित होने का यानि अज्ञान धारणा के सिलसिले के आरम्भ होने व भ्रमित बुद्धि होने का भय बना रहता है। हमारे साथ ऐसा न हो और हम जगत में विचरते हुए, अपने ब्रह्म स्वरूप में स्थिर बने रह आत्मपद को प्राप्त करें, इस सन्दर्भ में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है:-

पंच ज्ञान इन्द्रियाँ, पंज कर्म इन्द्रिया,
विच है ख़्याल तुम्हारा
मनुराज नूं छड के सजनो टप्पा मारो
ज्ञान इन्द्रियाँ दा पावो स्थान हमारा।

यह कार्य कैसे सिद्ध हो सकता है, आओ अब इसे समझते हैं:-

ब्रह्म यानि वेद-विदित व प्रणव/ओ३म् यानि आत्मा में स्थित परमात्मा एक ही है। तभी तो वेद-विदित ज्ञान ही एकमात्र वह ब्रह्मविद्या है जो अपने आप में एक मनुष्य को निज ज्योति स्वरूप अमर आत्मा में परमात्मा के स्थित होने का बोध कराने में पूर्णतः सक्षम है। जानो 'परमात्मा' बद्ध यानि

सांसारिक बन्धनों में बन्धी हुई मोह-माया से ग्रस्त, जीवात्मा से भिन्न, कार्य-कारण से परे, नित्य, शुद्ध ज्ञानस्वरूप और मुक्त स्वभाव वाला चैतन्य है जिसे परब्रह्म परमेश्वर के नाम से जाना जाता है। यही जीव का असलियत स्वरूप है और जगत रूपी रंगमंच पर इसी स्वरूप में बने रह कर अभिनय करने वाला जीव, अपने मुक्त स्वभाव में बना रह सकता है।

जानो परमात्मा सभी भेदों से रहित है और जब कोई जीव जगत में आता है उसे इसी अवस्था में स्थिर बने रहते हुए कोई काम करने या न करने का आदेश दिया जाता है। यही तो होती है परिपूर्ण सम अवस्था जिसमें समदृष्टि जैसा विशेष गुण प्राप्त कर, परमात्मा के आदेश अनुसार उसमें स्थिर बने रहते हुए उस द्वारा प्रदान किए हुए सर्वोच्च अधिकार का नीति-नियमानुसार प्रयोग करना होता है।

अब यह भी जानो कि आत्मा जीवों में विद्यमान सबसे श्रेष्ठ चैतन्य ब्रह्मशक्ति है और वह ही मनुष्य के समस्त शरीर व मन, बुद्धि, अहंकार, स्वभाव/प्रकृति का सार भाग/मूल तत्व है। इसीलिए यह सत्य मानना होगा कि इस मूल तत्व से आत्मिक ज्ञान प्राप्त करने के अतिरिक्त इस जगत में एक मनुष्य के आत्मकल्याण का किसी प्रकार से भी और कुछ भी हेतु नहीं हो सकता।

आगे जानो आत्मज्ञान द्वारा आत्मभाव पनपता है। आत्मभाव यानि अपनेपन का भाव जो हर प्राणी के प्रति परमात्म-दृष्टि रखने हेतु मनुष्य को आत्मबल प्रदान करता है। यही आत्मभाव मनुष्य को आत्मप्रकाश द्वारा अपने दोषों का सूक्ष्म

अवलोकन कर, अपने भावों, वृत्तियों, ग़लतियों और दोषों को जानने-समझने का अवसर प्रदान करता है। फलतः मनुष्य स्वयं को मानसिक या शारीरिक कष्ट देकर तृप्ति पाने की क्रिया नहीं करता। वह तो आत्म-विचार द्वारा आध्यात्मिक प्रगति यानि अपनी उन्नति करता है। इसके विपरीत जिसका हृदय अंधकारमय होता है यानि आत्मप्रकाश से प्रकाशित नहीं होता वह कुरस्ते पर अग्रसर हो जाता है और लाख प्रयत्न करने पर भी उसे अपने दोष व कमियाँ नज़र नहीं आती। अतः याद रखो कि आध्यात्मिक उन्नति ही वह निज उन्नति होती है जिसके द्वारा इन्सान आत्म-साक्षात्कार कर दूसरों के हित के लिए अपने हितों का त्याग यानि आत्म-बलिदान कर परोपकार करने की सामर्थ्य जुटा पाता है।

यह होता है आत्मा का अस्तित्व या उसे सर्वत्र व्याप्त मानने का सिद्धान्त और बाहरी संसार से मन हटा कर आत्म-स्वरूप की साधना में लगे रहने की अवस्था। इस अवस्था के अन्तर्गत इन्सान अपने विचारों और भावों का विश्लेषण और विवेचन भली-भान्ति कर सकता है और स्वयं अपने पर मोहित हो अपने विषय में भ्रमित नहीं होता।

ऐसा मनुष्य आत्मविश्वासी, आत्म-संयमी, आत्म-निर्भर होता है और आत्मविद्या की साधना में लीन रहते हुए किसी ऊँचे आध्यात्मिक लक्ष्य को पाने के लिए अन्दरूनी व बेहरूनी दोनों वृत्तियों में अपनी इच्छाओं और सांसारिक पदार्थों का त्याग कर पाता है। तात्पर्य यह है कि सदाचार पर सुदृढ़ बने रहने हेतु वह उस इच्छा का त्याग करना बेहतर समझता है जो उसे अविचार युक्त झूठ का रास्ता अपनाने के लिए प्रेरित

करती है। यह जानते हुए कि ऐसी इच्छाओं का परिणाम बुरा निकलने वाला है वह स्वयं को परमात्मा के प्रति पूरी तरह समर्पित कर देता है। तभी तो वह स्वयं अपना मार्गदर्शन करते हुए अपने हित या भविष्य के विषय में स्वयं निश्चित करता है। इस प्रकार वह अपने प्रयत्न द्वारा निज का उद्धार तो करता ही है साथ ही साथ परोपकार करने का पराक्रम भी दिखा पाता है।

याद रखो इसी विशेष गुण अनुरूप आचार-विचार व व्यवहार संहिता अपनाकर एक मनुष्य जगत में विचरते हुए न केवल परमानन्द का अनुभव कर पाता है अपितु परमपद की प्राप्ति भी कर लेता है। इस सन्दर्भ में सभी जानते हैं कि परमपद की साधना और ब्रह्मत्व की प्राप्ति को ही मनुष्य के जीवन का सबसे श्रेष्ठ कर्त्तव्य व उद्देश्य माना गया है। तभी तो यह सर्वोच्च सत्य सब स्वीकारते हैं कि परमार्थ, यथार्थ आत्मज्ञान रूप में, सबसे श्रेष्ठ वस्तु ही नहीं अपितु ऐसी सबसे उत्तम सम्पत्ति भी है जिसके प्राप्त होने पर मन को सन्तोष प्राप्त होता है और मनुष्य निष्कामता व निर्भयता से परोपकार जैसे विशेष गुण का प्रयोग करने में सक्षम हो जाता है।

फलस्वरूप वह इस जगत में फिर जो भी करता है वह अकर्त्ता भाव से करता है तथा इस प्रकार सब कुछ करते हुए भी अपने असलियत स्वरूप में स्थित रह, जगत से मुक्त बना रह पाता है यानि बन्धनमान नहीं होता। याद रखो ऐसा व्यक्ति ही जितेन्द्रिय बन यानि आत्मविजय प्राप्त कर अपने प्रति व सबके प्रति सजनता का आचार-व्यवहार कर सकता

है व आत्म-तुष्टि यानि आत्मज्ञान से प्राप्त होने वाले सन्तोष के प्रभाव से आनन्द प्राप्त कर 'मैं ब्रह्म हूँ' का बोध कर पाता है।

इस तथ्य से यह सिद्ध होता है कि इन्सान को अपना पूरा समय, पूरी चेष्टा व ध्यान, परमार्थ जो सर्वोत्तम संपत्ति है, उसकी प्राप्ति की तरफ लगाना चाहिए। इस सन्दर्भ मे ध्यान से सुनो और समझो कि सबसे ग़रीब वही होता है जो सबसे अमीर होता है।

ऐसा इसीलिए कह रहे हैं कि उस अमीर के पास धन के अतिरिक्त कुछ नहीं होता यानि न सुख होता है न चैन, न शान्ति होती है और न ही जीवन का आनन्द। इस तरह वह जीवन उद्देश्य को प्राप्त करने की ताकत यानि सामर्थ्य नहीं जुटा पाता। इसके विपरीत रूखी-सूखी खाने वाला वह गरीब जिसको अपनी प्रारब्ध में पूर्ण सन्तोष होता है वह निष्कामी स्वयं को अमीरों का भी अमीर समझता है। इस तरह वह जीवन लक्ष्य प्राप्त करने की ताकत जुटा पाता है।

जान लो कि हकीकत में ईश्वर ने सबको यह अमीरी प्रदान कर मानवता रूपी धर्म पर डटे रहने का आदेश दिया है। परन्तु हम अज्ञानी सांसारिकता में उलझ अपना मानवता रूपी अभिन्न गुण खो बैठे हैं और सांसारिक धन यानि मिथ्या अमीरी जो हकीकत में गरीबी है, उसकी प्राप्ति की तरफ नासमझों की भान्ति दौड़ रहे हैं। माता-पिता, बहन-भाई, पति-पत्नी, घर-परिवार वाले सब यही चाहते हैं कि हम कुकर्म हो या अधर्म किसी भी साधन द्वारा अधिक से अधिक

धन कमाएं व सांसारिक सुख-सुविधाएँ एकत्रित करें। ऐसा मनुष्य मिथ्या अमीरी यानि धन कमाने के पीछे जीवन के प्रमुख उद्देश्य यानि परमार्थ को ही दाँव पर लगा देता है। अब तो हालात इतने बिगड़ चुके हैं कि इस मिथ्या अमीरी ने हमें कोठियों में, दफ्तरों में, कारों में व सूट-बूट में इस तरह बन्द कर दिया है कि इन विभिन्न आवरणों में ढके हम खुद अपने असलियत ज्योति स्वरूप का बोध करने में असक्षम हो गए हैं। तात्पर्य यह है कि स्वार्थवश इस मिथ्या अमीरी के नशे में लिप्त हो, हमारा सारा पुरुषार्थ, निजी बहुमूल्य गुण मनुष्यता को दाँव पर लगाकर महल-माड़ियाँ जुटाने तक ही सीमित हो गया है।

आज संसार में यही उल्टा चलन चल पड़ा है। यही तो अमीरी-गरीबी, वड-छोट व अलगाववाद आदि का कारण है। पर हमें तो सम्भलना है क्योंकि हम इस परमार्थी स्कूल से आत्मिक ज्ञान प्राप्त कर रहे हैं और हमें हर सम्भव यत्न द्वारा जीवन की वास्तविकता का बोध कराया जा रहा है। इस सत्यज्ञान के अनुसार हमने अपने साथ-साथ बच्चों को भी परमार्थ में सुदृढ़ बने रहने के लिए प्रेरित करना है। इसके लिए चाहे हमें कुछ भी कुर्बान क्यों न करना पड़े व जगत वालों का किसी भी प्रकार का अनुचित व्यवहार क्यों न सहना पड़े। सर्वहित की ख़ातिर खुशी-खुशी सर्वत्यागी बन सब सह लेना है और इस तरह अपने सुन्दर व्यक्तित्व को पुनः प्राप्त करने के लिए ब्रह्म ज्ञान प्राप्त कर उसे जीवन में आत्मसात् कर लेना है।

जान लो कि एक ब्रह्म जिज्ञासु ही ब्रह्मज्ञानी का पद प्राप्त

कर सकता है। ब्रह्मज्ञान ही परमतत्व का ज्ञान है। ब्रह्मज्ञान का तेज ही एक मनुष्य को निज ब्रह्मत्व यानि ब्रह्म होने की अवस्था/भाव का आभास या यथार्थ जनाता है। ब्रह्मज्ञानी ही ब्रह्म के ध्यान में लीन रह निर्वाण पद यानि मोक्ष प्राप्त कर सकता है या ब्रह्मपद को पा सकता है।

आओ अब ब्रह्म के विषय में प्रश्नोत्तर के माध्यम से उपलब्ध ज्ञान के अनुसार यह भी जानते हैंः-

वेद में निर्दिष्ट कर्म को क्या कहते हैं?

ब्रह्म कर्म। प्रत्येक इन्सान को ऐसे ही कर्म करने चाहिए।

ब्रह्म-शक्ति से उत्पन्न वाणी को क्या कहते हैं?

शब्द ब्रह्म।

ब्रह्म का परिणाम क्या है?

जगत।

ब्रह्मबीज किसे कहते हैं?

प्रणव यानि ओंकार को।

मनुष्य का हृदय किस नाम से जाना जाता है?

ब्रह्मलोक।

इस ब्रह्मलोक में विचरने का साधन क्या है?

वह माध्यम है प्रणव अक्षर। इस अक्षर के अफुर अवस्था में अजपा जाप के द्वारा हृदय रूपी ब्रह्मलोक, आत्मप्रकाश से

प्रकाशित हो जाता है। परिणामस्वरूप हमें अपना व जगत का यथार्थ स्पष्टतः समझ में आ जाता है और हम स्वतन्त्रता से एक भाव अनुरूप इस ब्रह्मलोक में विचर पाते हैं।

ब्रह्मबल की प्राप्ति किस से होती है?

तपस्या से। यह हमारी मानसिक शक्ति कहलाता है।

ब्रह्म सम्बन्धी चिन्तन को क्या कहते हैं ?

ब्रह्मविचार।

ब्रह्मभाव क्या है?

आत्मा की आनन्द रूप या ब्रह्मरूप होने की भावना या ध्यान ।

मनुष्य की ब्रह्ममय अवस्था क्या दर्शाती है?

ब्रह्म से अभिन्नता। यही समभाव योग है।

ब्रह्मरन्ध्र किसे कहते हैं?

मस्तक के मध्य एक सूक्ष्म छेद जिससे होकर प्राण निकलने से मोक्ष प्राप्त हो जाता है।

ब्रह्मलेख किसे कहते हैं?

भाग्य को।

अन्ततः इस सिद्धान्त को सत्यता से मानो कि पूर्ण विश्व ब्रह्ममय है अथवा ब्रह्म-निर्मित है और उसी की शक्ति से चल रहा है। इसके लिए वेदों के अर्थतत्व को जानना आवश्यक है। याद रखो वेद-वाक्य अटल सत्य हैं जिनकी सत्यता के

विषय में कोई सन्देह नहीं हो सकता। आत्मा के ब्रह्म होने के भाव अनुसार जीना सीखो यानि ब्रह्म और आत्मा की एकता का अनुभव करो और इस प्रकार इस प्रयत्न द्वारा श्रेष्ठ समाज का निर्माण करने में सहायक बनो।

इस सन्दर्भ में यह भी जान लो कि ब्रह्म की अनुभूति से प्राप्त होने वाला आनन्द, लौकिक वस्तुओं के उपभोग से प्राप्त होने वाले सुख की अपेक्षा कहीं अधिक और परम उत्कृष्ट कोटि का होता है। यही आनन्द मन के आत्मसन्तोष व जगत से निर्लिप्तता का हेतु होता है। अतः इस संसार में जो भी करो परमात्मा को अपने सभी कर्मों के फल अर्पित करने की क्रिया द्वारा ही करो। आओ अब सब मिलकर बोलें:-

ब्रह्म स्वरूप है अपना आप, हम तो हैं ओही प्रकाश

निश्चित ही अब यही सत्य हमारे मन में ब्रह्म भाव के विद्यमान होने का आधार होगा। इस हेतु आओ सब मिलकर ईश्वर के सम्मुख करबद्ध होकर प्रार्थना करें:-

हे श्री साजन परमेश्वर ! समभाव-समदृष्टि का स्कूल खोल कर, व उसमें आत्मिक ज्ञान की पढ़ाई व गुढ़ाई कराने का प्रबन्ध करा कर, आपने हमें अपने गृहस्थाश्रम को सतयुग बनाने व परमपद प्राप्त करने के प्रति बेफिकर कर दिया है। यही नहीं ब्रह्म भाव को हृदय मे विद्यमान करने की युक्ति बताकर, आपने हमें हमारी असलियत का बोध करा, जन्म की बाजी को जीतने के योग्य बनाया है। हम आप की यह कृपा कभी भी नहीं भूल सकते क्योंकि सत्यज्ञान द्वारा हमारे

मलिन मन की सफाई करने का प्रबन्ध करके आपने तो हमारा भाग्य ही जगा दिया है। हमें समझ नहीं आ रही कि हम आपका शुक्रिया अदा कैसे करें। हे परमेश्वर ! हमारी आपसे प्रार्थना है कि हम निष्काम रास्ते पर चलते हुओ को, इस तरह से थामे रखना कि हम सन्तोष व धैर्य में बने रहे, सच्चाई-धर्म के रास्ते पर चलते हुए अपनी मंजिल को प्राप्त कर लें व ब्रह्म नाल ब्रह्म हो जाएं।

अभी तक हमने ब्रह्म विद्या अनुसार यह जाना कि रूप-रंग-रेखा रहित ब्रह्म व प्रणव अक्षर में प्रकाशित साकार ब्रह्म क्या है व ब्रह्म शक्ति से उत्पन्न शब्द ब्रह्म के वेद-विदित विचारों अनुसार, ब्रह्म के साक्षात्कार की साधना कर, ब्रह्म ज्ञान कैसे प्राप्त किया जाता है। हमने यह भी जाना कि ब्रह्म ज्ञान अपने आप में ब्रह्मचर्य धार कर उसका पालन करने की वह शक्ति है जिससे गृहस्थाश्रम सतयुग बनाने में मदद मिलती है व परमपद की प्राप्ति स्वतः हो जाती है। यह व्यक्ति की, ब्रह्म को जानने की इच्छा के पूर्ण होने व उसके ब्रह्मज्ञानी के पद को प्राप्त हो, एक श्रेष्ठ समाज के निर्माण के योग्य बनने की बात है।

हमें यह भी ज्ञात हुआ कि ब्रह्म होने की अवस्था/भाव में स्थिर बने रहने का हेतु ब्रह्म का ही तेज व सच्चा ज्ञान होता है और ऐसा व्यक्ति दूसरों को भी सच्चा ज्ञान देने के योग्य बन जाता है। यह परमात्मा में लीन हो, जगत में विचरते हुए, समभाव-समदृष्टि अनुसार, सजन-भाव के आचार-व्यवहार द्वारा, आनन्दमय जीवन जीने की बात है। ऐसा ब्रह्मरूप व्यक्ति ब्रह्मत्व की भावना से युक्त होता है। तभी तो वह ब्रह्मअक्षर

ओ३म् का महत्त्व जानने वाला, अपने ब्रह्मात्म भाव को समझता है। इस तरह ब्रह्म और आत्मा की एकता की प्रतीति के प्रभाव से उसे ब्रह्म के समान शक्तिशाली होने की अनुभूति होती है और वह इस जगत में अकर्त्ता भाव से विचरता हुआ सदा सन्तुष्ट व जगत से आज़ाद बना रह पाता है।

हम सब भी ऐसे ही ढल पाएँ व बन पाएँ, इसके लिए अब ब्रह्मभाव हृदय में विद्यमान होने के पश्चात्, उसे युवावस्था के भक्ति-भाव की नीतिनुसार, किस प्रकार ध्यान से साधना है व उससे प्राप्त ब्रह्मशक्ति का प्रयोग कर, न्यायसंगत व निर्भयता से जीवन जीने के लिए, कैसे सक्षम बनना है, इस सन्दर्भ में अगले सप्ताह से भक्ति-शक्ति के खेल को समझेंगे।

अन्ततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरान्त सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियन्त्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्म-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

अभी तक हम सबने ब्रह्मभाव के विषय में जाना। इसके अतिरिक्त इस ब्रह्मभाव को अपने हृदय में आत्मभाव के रूप में स्थित कर तद्नुकूल व्यवहार करने की योग्यता प्राप्त करने के प्रति दृढ़ संकल्प होने की भी बात की। अब इस कार्य को सिद्ध कैसे करना है, आओ इसके विषय में भी जानें:-

ध्यान से सुनो आत्मभाव जब हृदय में विद्यमान हो जाता है तो उसे भक्तिभाव से ध्यानपूर्वक साधने की आवश्यकता होती है। तात्पर्य यह है कि अपने भाव, विचार, करनी, बातचीत इत्यादि सब को आत्मभाव के अनुरूप ढालना होता है। यह होता है आत्मभाव को साधना। इस साधना द्वारा परस्पर सजनता कभी खंडित नहीं होती और शत्-प्रतिशत सफलता प्राप्त होती है। याद रखो भक्तिभाव में बने रह हमें इस भाव को थामे रखना है व शक्तिशाली होकर अपने निर्विकारी मनुष्यत्व पर ठहरे रहना है ताकि कोई भी कारण व परिस्थितियाँ हमें विचलित कर इस आत्मभाव से विपरीत कोई अन्य भाव अपनाने के लिए विवश न कर सकें। ऐसा होने पर ही भक्ति-शक्ति को धारण कर जीवन का आनन्द प्राप्त कर सकेंगे।

इस संदर्भ में यह भी बता दे कि त्रेता, द्वापर व कलियुग का भक्ति भाव कामनायुक्त होता है। अधिकतर इंसान कामना सिद्धि हेतु भक्ति करते हैं और प्राप्त शक्ति का इस्तेमाल दूसरों पर अपना आधिपत्य जमाने हेतु करते हैं परन्तु सतयुग में समस्त मानव निष्काम भाव से भक्ति करते हैं व प्राप्त शक्ति का इस्तेमाल खुद को अपने अधिकार में रखने की खातिर करते हैं। इस प्रकार वे अकर्त्ता भाव से ईश्वर के निमित्त सब कुछ करते हुए, संकल्प रहित विश्राम अवस्था में सदा एकरस बने रहते हैं।

यहाँ समझने की बात यह है कि जहाँ त्रेता, द्वापर व कलियुग का आडम्बर युक्त भक्ति भाव पुनः मृत्तलोक में आवागमन का

हेतु बनता है, वहीं सतयुग का निष्काम भक्ति भाव सीधे अपने घर परमधाम की ओर ले जाता है। इस प्राप्ति को दृष्टिगत रखते हुए आवश्यक है कि हम युवाअवस्था के भक्ति भाव यानि समभाव-समदृष्टि की युक्ति को अपनाने की महत्ता को सूक्ष्मता से जानें व उसे अपने आचार-विचार व व्यवहार में ढालने हेतु आवश्यक आधारभूत तथ्य को समझें। ध्यान से सुनो इस भक्ति को अपनाने से पूर्व हमारे लिए क्या स्वीकारना आवश्यक है:-

साडा है सजन राम, राम है कुल जहान

अर्थात्

ईश्वर हमारा मित्र/प्रियतम सर्वव्यापक है, उसी को जानो, मानो व वैसे ही गुण अपनाओ।

आशय यह है कि इस जगत में सर्वव्यापक ईश्वर को ही अपना एकमात्र मित्र मानो और उसे ही प्रीत करने योग्य प्रियतम समझो। ऐसा इसलिए कह रहे हैं क्योंकि वह प्रियतम ही निष्पाप, निष्कलंक व इच्छा रहित है व बल, बुद्धि ज्ञान सब कुछ प्रदान करने में समर्थ है । वह ही हर रूप में विशेष होते हुए उससे निर्लेप है। निष्कामता से उसी को जानो, मानो और उसके गुण अपनाओ। याद रखो यदि हम उपासक बनकर, उपासना द्वारा मात्र इतना यत्न करने में सफल हो जाते हैं तो फिर हमें कोई विकार न तो छू सकता है न ही सता सकता है। हम सर्वसम्पन्न व ताकतवर होकर स्वतन्त्रता से इस जगत में विश्राम से विचर सकते हैं।

ईश्वर कहते हैं ऐसा योग्य उत्तम व श्रेष्ठ व्यक्ति बनने के लिए किसी तस्वीर व शरीर की साधना करने के स्थान पर इस विचार की साधना करो और इसे धार कर अमल में लाने हेतु ध्यानपूर्वक निष्काम रास्ते पर बने रहो। सावधान रहो कि कहीं कोई भी कामना हमें इस विचार से भटका न दे। याद रखो यदि ऐसा हुआ तो अविचार अन्दर घर कर जाएगा और हम कामनाओं के प्रति आसक्त हो उनके अधीन हो जाएंगे। यह मानवता से गिरने की बात होगी। अतः सदैव निर्लेप बने रहने हेतु अपना ध्यान जगत के फुरने रूपी सम्बन्धों से स्वतन्त्र रखो और अनेक प्रकार के आडम्बर व कर्मकाण्ड युक्त मनगढ़ंत भक्ति-भावों के अनुरूप साधना करने के तरीकों से बचे रहो क्योंकि इससे मन में चंचलता पनपती है व अशांति उत्पन्न होती है।

इस संदर्भ में जानो कि जगत के फुरने रूपी सम्बन्धों व पदार्थों से जुड़ने पर आशा-तृष्णा का रोग लग जाता है और असंतुष्ट मन में काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार जैसे विकार घर कर जाते हैं। इस प्रकार 'मैं' और 'मेरा' के भाव के वशीभूत हुए इंसान को मान-अपमान खलने लगता है और माँ-बाप, सगे-सम्बन्धी यहाँ तक कि ईश्वर से भी नाता छूट जाता है। जान लो ऐसा इन्सान न तो दुनियावी माता-पिता की इज्ज़त कर पाता है, न ही परमपिता परमेश्वर की। इस प्रकार उनकी आज्ञाओं का पालन करना तो दूर की बात रही वह तो उनके आगे नतमस्तक होने में भी लज्जा का अनुभव करता है। परिणामस्वरूप वह इन्सान अकेला पड़ जाता है और चारित्रिक गिरावट आरम्भ हो जाती है यानि अच्छे-बुरे की पहचान खत्म हो जाती है। यह मन के

असंतुष्ट, अधीर व अशान्त होने के कारण, शक्तिहीन होने व निष्काम भक्ति पर स्थिर न बने रह पाने की बात होती है।

अतः यह मानो कि मन अति चंचल है। मन का स्वभाव भागने का है। मन की चंचलता व दौड़ने के स्वभाव को केवल इन्द्रियनिग्रह व निष्कामता द्वारा ही वश में रखा जा सकता है। इसके विपरीत कामनाओं की पूर्ति में रत मन, मनुष्य के ख़्याल को जगत में इधर-उधर भटकाता है। परिणामस्वरूप ध्यान स्वयं पर केन्द्रित रहने के स्थान पर संसार में बिखर जाता है। यही कारण है कि मन प्रायः किसी एक स्थान पर टिकता नहीं। यह तो स्वार्थ पूर्ति हेतु जो लालच दिखाता है उसी का हो जाता है।

इस प्रकार संसार भर में और संसार से भी परे यह मन मार करता है। वर्त्तमान में रहने के स्थान पर, यह कभी अतीत की चिंता से चिंतित रहता है तो कभी भविष्य की आशा-प्रतीक्षा में खोया रहता है। जाग्रत तो क्या स्वप्न अवस्था में भी यह मन बहुत दूर-दूर तक चला जाता है। अतः अपने मन पर नियन्त्रण रखना सीखो। ऐसा कर पाने हेतु जानो कि वेदों में कहा गया है कि इन्सान जहाँ कहीं भी अपने दक्ष, चतुर और इन्द्रियों से श्रेष्ठ मन को लगाता है, वहीं मन अपना ठिकाणा बना लेता है अर्थात् जहाँ मन लगता है वहीं अपना घर बना लेता है। तात्पर्य यह है कि यदि यह मन जगत के मायावी विषयों के साथ जुड़ता है तो यह इस मृतलोक को ही अपना ठिकाना बना लेता है और यदि परमार्थ से जुड़ता है तो यह ईश्वरीय विचारों व हुक्म अनुसार क्रिया करने लगता है। प्रचलन के मुताबिक भी

यदि हम देखें तो आज संसारियों का मन परस्पर एक-दूसरे में लगा हुआ है। तभी तो वे देखा-देखी बिना सोचे-समझे एक दूसरे का चलन यानि सोचने-समझने का ढंग व वर्त्त-वर्त्ताव का तरीका अपना रहे हैं और उसी में ही फँसे हुए हैं। ऐसा करते समय लोभ व मोह वश वे स्वार्थपर यह भूल जाते हैं कि इस मन में ही तो सबसे सुन्दर, सबसे प्रिय, ज्ञान व प्रकाश स्वरूप ईश्वर का सदा से निवास है।

तो कैसे उस परमेश्वर के स्थान पर वे नश्वर सम्बन्धों व विषयों को अन्दर घर करने की अनुमति दे सकते हैं ? वेदों के कथनानुसार 'जो मन भूत-भविष्य व सम्पूर्ण जगत से भी परे चला जाता है, तृष्णा के कारण उसे हम यहाँ रहने और जीने के लिए लौटा लाते हैं अर्थात् आवागमन के चक्कर में फँसा देते हैं।

इसलिए मन के महत्त्व को समझते हुए, इसे भली भांति हृदयंगम करो और कहीं भी मन लगाने से पहले उसके फल यानि परिणाम को समझो। समझो कि यदि मैं संसार में मन को लगाता हूँ तो उससे क्या परिणाम निकलेगा और यदि मैं ईश्वर में मन को लीन रखता हूँ तो उससे क्या फल प्राप्त होगा। फिर इन दोनों परिणामों की तुलना करो और देखो कि किसके साथ जुड़ने से मैं अजरता-अमरता को यानि नित्यता को प्राप्त हो सकता हूँ व किस के साथ जुड़ने पर नश्वरता को प्राप्त हो सकता हूँ। इस तरह अंतिम परिणाम को दृष्टिगत रखते हुए समझो कि हमारे लिए क्या करना बेहतर व हितकर है।

इसी परिप्रेक्ष्य में अगर अभी तक नादानी के कारण यानि मन

के वशीभूत हो अपना स्वभाव बिगाड़, नकारात्मक चलन में फँस, अनेकानेक दु:खों को प्राप्त हो चुके हो तो घबराओ नहीं। इस परिस्थिति से उबरने हेतु, अब सावधान हो जाओ और युवावस्था के भक्ति-भाव अनुसार, समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई द्वारा, कुदरत प्रदत्त गुणों पर स्थिर बने रहो। कहने का तात्पर्य यह है कि एकाग्रचित्तता से अपने मन को साधना सीखो और सदा कामना रहित व संकल्प रहित परिपूर्ण चैतन्य अवस्था में एकरस बने रहो।

इस प्रकार सतयुगियों की तरह निर्भय, निर्वैर व निर्विकार हो, जगत से निर्लेप रह, निर्विघ्नता व त्याग भावना से निष्काम रास्ते पर चलना सीखो। इससे सदा मन को संतोष प्राप्त रहेगा और मस्तिष्क को धीरता से शांत व सन्तुलित अवस्था में साधे रखने के काबिल हो जाओगे। इस तरह ईश्वर के रंग में रंगे होने के कारण, जगत के रंग से अप्रभावित हो, इन्द्रियनिग्रह व एकाग्रचित्तता द्वारा, सहजता से अपना ख़्याल स्वच्छ, जिह्वा स्वतन्त्र व दृष्टि कंचन रख सकोगे। यह होगा समभाव नज़रों में कर, समदर्शिता व अकर्त्ता भाव से, कामना रहित बने रहना व जगत में विचरते हुए अक्लमंद नाम कहाना और अपने सच्चे घर में बने रहना।

कहने का तात्पर्य यह है कि सदा ईश्वर प्रदत्त निज यथार्थ गुण निष्कामता में स्थिर बने रहो। कामना के वशीभूत हो, दुनियां वालों को खुश करने के चक्कर में, अपने इन मूल गुणों से हट, खुद को उनके अनुसार बदलने की भूल कभी मत करो। जानो इसी मनुष्यता रूपी गुण के बल से ही आप

इस जगत के रंगमंच पर अपनी भूमिका सफलता व कुशलता से निभाते हुए सबसे अच्छे अदाकार कहला सकते हो। मानो कि आप सर्वश्रेष्ठ हो। इस विचार से ख़्याल को गिरने मत दो। याद रखो, इस रंगमंच पर आपके अतिरिक्त आपकी भूमिका न तो कोई आप से बेहतर निभा सकता है और न ही कोई इसको युक्तिसंगत करने का तरीका समझा सकता है। वह युक्ति तो जिसने आपको बनाया है यानि ईश्वर, आपका प्रियतम ही आप को बता सकता है। इसलिए इस जगत में जो भी करने आए हो, अपनी यथार्थता अनुसार स्वतन्त्र रूप से, निःसंकोच, समचित्तता से आत्मसंयम रखते हुए, आत्मविश्वास के साथ करने के स्वभाव में ढलो।

जानो ऐसा होने पर यह जगत, आपके कार्य-कौशल की प्रशंसा में बजी तालियों से गूँज उठेगा। इस तरह सबकी प्रशंसा के अधिकारी बन न केवल आप सबके प्रिय कहला सकोगे अपितु बच्चों व दूसरों के लिए भी यह मंगलमय आदर्श स्थापित कर सकोगे। इसलिए अपने यथार्थ में बने रहो। याद रखो, हर सुबह आपके पास दो विकल्प होते हैं या तो अपने उद्देश्यों को पूरा करने हेतु स्वप्न अवस्था में खोए रहो और जीवन हार जाओ या फिर जाग्रत अवस्था मे बने रह, अपने उद्देश्यों को सच्चाई से पूरा करने का पराक्रम दिखाओ और विजयी होवो। याद रखो दूसरे विकल्प का चयन करने पर ही आप अपने जीवन के शुभ लक्ष्य यानि परमपद को प्राप्त कर सकोगे।

इस विषय में सफलता प्राप्त करने के लिए हर काम ध्यान से करने की आदत डालो क्योंकि जरा सी असावधानी आपके उद्देश्य की पूर्त्ति में बाधा उत्पन्न कर सकती है। सब जानते हैं

कि आज के युग में लापरवाही अधिकतर इन्सानों का आधारभूत लक्षण है। जिन बातों या वस्तुओं को हम अनमोल नहीं समझते उनके प्रति असावधान रहते हैं, परिणामस्वरूप उनको खो बैठते हैं। इसका अर्थ यह है कि हम जानते हैं कि हमें कब और कहाँ सावधान रहना है। इस संदर्भ में सदाचारिता के प्रतीक अपने मानवीय व्यक्तित्व की अमूल्यता को न समझते हुए हम ईश्वर प्रदत्त उस कीमती चीज़ को खो बैठते हैं और दुष्चरित्र बन जाते हैं। अतः अपने जीवन को अनमोल समझो और इसकी कद्र करना सीखो।

इस संदर्भ में सभी मानेंगे कि हम अपने जीवन में उन्हीं चीज़ों के प्रति सावधान रहते हैं जिन्हें कीमती समझते हैं। अतः सर्वप्रथम अपने मनुष्य चोले को सबसे अधिक कीमती यानि अनमोल समझते हुए, सदा चैतन्य अवस्था में बने रहो।

फिर अपने स्वास्थ्य को कीमती समझते हुए आहार रूप में जो भी व जैसे भी खाओ, उसके प्रति सावधान रहो।

आपसी सम्बन्धों को मूल्यवान समझते हुए, किसी के साथ, कभी भी, कोई भी ऐसा व्यवहार मत करो जिससे सम्बन्धविच्छेदन हो। इस तरह इन संबंधों के प्रति जो आपका कर्त्तव्य है उसका निर्वाह करने के प्रति कदाचित् कमजोर मत पड़ो।

इसी तरह परस्पर मित्रता को कीमती समझते हुए एक दूसरे के प्रति सजन भाव व शिष्टाचार अपनाकर उस दोस्ती को बरकरार रखने की चेष्टा करो।

संसारी धन को कीमती समझते हुए उसको उचित यानि अच्छे कामों में खर्च करने के प्रति सावधान बने रहो।

समय की कीमत समझो और आलस्यवश उसे व्यर्थ गँवाने की आदत छोड़ दो यानि समय पर काम करना शुरू कर दो।

इस तरह हर चीज़ की अनमोलता को समझते हुए हर कर्म निष्कामता से करने की आदत डालो और सदा सावधान रहो कि हमसे कोई ऐसी भूल न हो जाए जिससे हम किसी प्रकार भी अस्वस्थ हो जाएँ।

इस हेतु खुद पर खुद पहरा रखो यानि यह स्वीकारो कि ईश्वर सब कुछ देख रहा है, सुन रहा है व जो भी हम करते हैं उसका साक्षी है। क्या जानते हो कि यह सब करने के लिए परमात्मा के पास क्या विशेष प्रबन्ध है?

नहीं जी।

जान लो, इस हेतु उसने सबके हृदय आकाश में, पारदर्शी अंतःकरण रूपी दर्पण फिट कर रखा है। इस विशेष यंत्र द्वारा आवाज़ भी सुनी जा सकती है, देखा भी जा सकता है, घटनाएँ व दृश्य इसमें रिकॉर्ड भी हो सकते हैं। यही नहीं मनुष्य के मनोभाव व चित्तवृत्तियाँ आदि भी इसके द्वारा जाने जा सकते हैं। इस विशेष यंत्र की एक विशेषता यह भी है कि इसका सिग्नल कभी डाउन नहीं होता यानि आप कहीं पर भी हो, कुछ भी लुक-छिप कर करो, परमात्मा को आपके मन-वचन-कर्म द्वारा किए जाने वाली प्रत्येक करनी की रिपोर्ट परिणाम सहित निरन्तर प्राप्त होती रहती है यानि ईश्वर सदैव हमारे प्रत्येक कर्म के साक्षी बने रहते हैं। इस यन्त्र को कहीं भी, किसी भी समय इस्तेमाल किया जा

सकता है यानि आप कहीं भी चले जाओ, आकाशों-आकाश, पातालों-पाताल वह हर समय कार्य करता है। इसके अतिरिक्त आपके पूरे जीवनकाल का विवरण इकट्ठा करने के लिए इस विशेष यंत्र को कभी रिचार्ज नहीं करना पड़ता।

इतना सब कुछ होते हुए भी विडम्बना की बात यह है कि इस प्राकृतिक अनुसंधान से अपरिचित यानि सत्य से अनभिज्ञ मनुष्य अविद्या के कारण, अनजानवश उस परमात्मा की सर्वव्यापकता, सर्वशक्तिमानता व सर्वज्ञता को नकारते हुए, कुकर्म-अधर्म व दुष्कर्म करने की भूल कर बैठता हैं।

याद रखो, ऐसा होने पर भी, परमात्मा का वह विशेष यंत्र एकतरफा काम करता रहता है यानि परमात्मा तो मानव को हर समय देखता और सुनता रहता है और उसके द्वारा किए सब कर्मों का लेखा-जोखा सत्यता से इकट्ठा करता रहता है, परन्तु इंसान उस ईश्वर को देखने व सुनने-समझने में असमर्थ हो जाता है। तभी तो आखिरी श्वास के समय पूरे जीवन में किए हुए अच्छे-बुरे कर्मों का परिणाम मनुष्य के सामने आ जाता है और इस परिणाम को भोगने के लिए वह पुनः जन्म-मरण के चक्रव्यूह में चला जाता है।

इस बात से ज्ञान लेते हुए हमारे लिए बनता है कि हम ईश्वर द्वारा प्रदत्त आत्मिक ज्ञान को प्राप्त कर कुदरती साइंस के इस रहस्यमय बेतार यंत्र यानि अंतःकरण की निर्मलता के प्रति भक्ति-भाव से सदा सावधान रहें व इसका निष्कामता से प्रयोग करने की युक्ति समझें। निष्कामता इसीलिए कह रहे हैं क्योंकि जप-तप, संयम से निर्लेप ईश्वर को केवल निष्काम भक्ति ही कबूल होती है। ऐसी भक्ति करने वाला

भक्त ही, सच्चा भक्त कहलाता है।

तो क्या यह जानकर आप सच्चा भक्त बनना चाहते हो?

हाँ जी।

अगर हाँ तो ईश्वर की आज्ञाओं का उसी के निमित्त समर्पित भाव से पालन करना सीखो और सेवा भाव में बने रहने के लिए आवश्यक कुर्बानी दिखा श्रेष्ठता को प्राप्त हो। जानो कि यह अपने आप में ऐसा भक्ति भाव है जिसमें धीरता से बहुत कुछ सुनना व सहना पड़ता है। यही अपने आप में संतोष-धैर्य पर सम अवस्था में बने रहने की बात होती है। इसी द्वारा इन्सान सच्चाई-धर्म के रास्ते पर निर्विघ्न चल सकता है। याद रखो निष्कामता व त्याग भाव अपनाने वाले को मान-अपमान आदि नहीं खलता।

यह इस भक्ति भाव की विशेष महत्ता व महानता है, जिसके द्वारा मन सदा शांत बना रहता है और परस्पर सजनता कभी भी खंडित नहीं होती। यह भक्त शिरोमणि सजन श्री शहनशाह हनुमान जी की तरह बलधारी, ब्रह्मचारी, असुरसंहारी, तेजधारी, जगत- हितकारी, परउपकारी, न्यायकारी, गदाधारी बनने की बात होती है। स्पष्ट है कि समभाव-समदृष्टि की युक्ति पर बने रहने से भक्ति प्रबल और शक्ति ताकतवर हो जाती है और इस प्रकार मन पर वश रखते हुए, निष्काम भाव से हर कर्म करना व कर्म फल की प्राप्ति से बचे रहना सहज हो जाता है।

याद रखो उत्तमता से युक्त ऐसा निष्कलंक यानि शुद्ध जीवन

जीने के उपरान्त ही इन्सान परमपद को प्राप्त होता है।

तो क्या सभी युवावस्था के भक्ति-भाव को अपनाकर, ऐसा निष्काम भक्त बनना चाहते हो जिसके लिए परमपद को प्राप्त करना सहज हो?

हाँ जी

तो फिर

सजनों फर्स्ट दी करो तैयारी, फेल जेहड़ा हो गया, ओ उमरां राहवे भिखारी।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरांत सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियंत्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 31 मई 2015 का सबक

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्म-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है, ध्यान से सुनोः-

श्री साजन जी के मुख के शब्द

शब्दः- जेहड़ा नाम ओही सजनों लावो ध्यान,
असलियत अपनी लवो पहचान।
हुण तुसां बालक नहीं अनजान, तुसां हो नौजवान।

ज्योति स्वरूप अपने प्रकाश नूं पा लवो,
फिर ज्योति स्वरूप अपना नाम कहा लवो।
फिर अपना आप प्रकाश जान,

फिर ज्योति स्वरूप है आप दा नाम।

ध्वनिः- ओ३म् तत् ओ३म् सत्, ओ३म् जप ओ३म् तप।
ओ३म् दा है विस्तारा, ओ३म् जपो, जपो ओ३म् ओंकारा।

सजन दयालु श्री रामचन्द्र जी कह रहे हैं

राग

ओ मेरे साजना नी ओ, नी ओ मेरे साजना नी ओ,
नी ओ मेरे साजना हां मेरे साजना।
साजन मेरा रैहंदा मन मन्दिरों में,
क्यों ढूंडो मन्दिर मस्जिद समाज गुरुद्वारों में।

ढूंडो क्यों बाहर दे मन्दिरों में, ढूंडो क्यों बाहर दे मन्दिरों में।
ओ साजन मेरा नी ओ जैंदा हर अन्दर डेरा नी ओ।

साजन रैहंदा रोम-रोम, रग-रग में,
सजनों ढूंडो क्यों पब-पब, हद-हद में।
क्यों ढूंडो पब-पब, हद-हद में,
क्यों ढूंडो पब-पब, हद-हद में।

ओ साजन मेरा नी ओ जैंदा हर अन्दर डेरा नी ओ। साजन मेरा रैंहदा विश्रामी पलंग में, ओन्हां दा विश्रामी पलंग विश्राम।

ढूंड रहे जगह-जगह चारों धाम,
क्यों ढूंड रहे जगह-जगह चारों धाम।

ओ साजन मेरा नी ओ जैंदा हर अन्दर डेरा नी ओ साजन मेरा रैंहदा गगन मण्डल में, ढूंढ रहे हो नदी नाले

पहाड़ और जंगलों में।

सजनों क्यों ढूंड रहे हो जंगलों में,
सजनों क्यों ढूंड रहे हो जंगलों में।
ओ साजन मेरा नी ओ,
जैंदा हर अन्दर डेरा नी ओ।

अब संस्था बोल रही है

ओ साजन रैंहदा गगन मण्डल,
असां ढूंड रहे सारे जंगल।
असां ढूंड रहे सारे जंगल,
असां ढूंड रहे सारे जंगल।

साजन रैहंदा नी ओ,
सब कोई कैंहदा नी ओ।
ओ सब कोई कैहंदा नी ओ,
ओ सब कोई कैंहदा नी ओ।

असां साजन कोल है जाणां,
जैंदा मन मन्दिर है टिकाणा
जैंदा मन मन्दिर है टिकाणा,
जैंदा मन मन्दिर है टिकाणा।

साजन रैंहदा नी ओ,
सब कोई कैंहदा नी ओ।
ओ सब कोई कैहंदा नी ओ,
ओ सब कोई कैंहदा नी ओ।

ध्वनि:- जोत प्रकाशे गगन मण्डल में,

आहा शक्ति खड़ी दरबान।
आहा ओ प्रकाशे गगन मण्डल में,
एकता पकड़ो एकता पकड़ो इन्सान।

इस कीर्तन द्वारा स्पष्ट होता है कि हमें भूलकर भी बाल अवस्था के भक्तिभाव नहीं अपनाने यानि ईश्वर को बाहर के मन्दिर, मस्जिद, समाज, गुरुद्वारों, जंगलों व चारों धाम में नहीं ढूँढना क्योंकि वह ईश्वर तो हमारे मन-मन्दिर में यानि हृदय में व सर्व-सर्व विद्यमान है। हमें समझना है कि वही ईश्वर ही सब सुरतों का साजन यानि परमेश्वर है। वही हमारा प्रियतम है। उसी को अपना प्रियतम जान व मानकर, अपनी सुरत को यानि ख़्याल को उसके संग जोड़े रखना है। इस सन्दर्भ में सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ हमें समझा रहा है कि:-

भक्ति सच-धर्म दी कर,
फिर इन्सान नूं मौत दा न रिहा डर
शक्ति दा हथियार हाथों में फड़,
बेख़ौफा बेख़तरा जगत विच विचर।

उक्त कथन के अनुसार सच्चाई के रास्ते पर चलते हुए धर्मसंगत बने रहना ही वास्तविक भक्ति है। इस भक्ति-भाव को अपनाने हेतु मानव निर्मित विभिन्न धर्म स्थलों में भटकने की ज़रूरत नहीं अपितु इन पावन स्थलों में स्थापित धर्म-ग्रन्थों में जो ज्ञान विदित है उसको निष्काम भक्ति-भाव से व्यावहारिकता में अपनाओ'। इस प्रकार इन धर्म ग्रन्थों में वर्णित वाणी का आदर करते हुए सच्चाई-धर्म के रास्ते पर सीधे चल पड़ो। याद रखो जो इस प्रकार ईश्वर का हुक्म

मानकर सच्चाई-धर्म के रास्ते पर कामना रहित चल पड़ता है, वही निष्कामता का प्रतीक कहलाता है। इस प्रकार कामना उसके मन को छू नहीं पाती जिससे उसके लिए संतोष, धैर्य धारण कर, सदा ताकतवर सम अवस्था में बने रहना सहज हो जाता है। इसी कारण वह ईमानदारी से इस जगत में जीवनयापन करते हुए सदा उससे निर्लेप बना रह पाता है और कभी भी जन्म-मरण के चक्रव्यूह में नहीं फँसता। हमें भी आत्मभाव अपनाकर ऐसा ही पराक्रम दिखाने के योग्य बनना है।

इस सन्दर्भ में जगत में आत्मभाव अनुसार निर्लिप्तता से विचरने हेतु ईश्वर इन्सान से कह रहे हैं कि समभाव-समदृष्टि को पकड़ो और सजन शब्द की महानता को जानो। इस विधिवत् पढ़ाई व गुढ़ाई के द्वारा सजन भाव को कुशलता से वर्त्त-वर्त्ताव में लाने के लिए पक्का निश्चय लो और अभी से ही सजन भाव का वर्त्त-वर्त्ताव करना शुरू कर दो। फिर अपने मनुष्य होने की महानता को प्राप्त करने की ख़ातिर अपने मन को वश में रख, समभाव-समदृष्टि की युक्ति के प्रति भक्ति-भाव रखो और ध्यान साधना द्वारा प्रसन्नता से वैसी ही अखण्ड चित्त-वृत्ति अपना लो।

याद रखो यदि ऐसा करने में सफल हो गए तो दिल और दिमाग़ की एक अवस्था बनी रहेगी। फलतः घर-परिवार व जगत में एकता से विचर सकोगे और सदा शान्ति से आनन्दमय जीवन जी सकोगे। अतः इस युक्ति के प्रति श्रद्धा और निष्ठा रखते हुए, मनुष्यत्व रूपी ईश्वर प्रदत्त चलन पर सुदृढ़ता से बने रहो और आत्मतुष्ट अवस्था में समरूपता से बने रह, निर्भयता से निष्काम भाव द्वारा कर्म करते हुए जगत हितकारी बनो।

यहाँ हम निष्काम भाव से कर्म करने की महत्ता को स्पष्ट करते हुए बताना चाहते हैं कि फल की इच्छा से रहित कर्म करने पर कर्मफल नहीं उत्पन्न होता। इसके विपरीत यदि मानव सुकर्म करता है तो उसे सुख-साधनों के रूप में अच्छा फल प्राप्त होता है और यदि बुरा कर्म करता है तो उसे दुःख के रूप में बुरा फल प्राप्त होता है। कर्मफल के रूप में प्राप्त इस सुख-दुःख में इन्सान जकड़ा जाता है और जन्म-मरण का अधिकारी बनता है।

यहाँ समझने की बात यह है कि निष्काम-कर्म, निष्कर्म कहलाता है। जिस प्रकार ईश्वर इतना बड़ा जगत रचकर भी, निष्कामता के कारण, निष्कर्म बने रहते हैं उसी तरह हमें भी अच्छे-बुरे कर्मों में नहीं जकड़ना। याद रखना है कि बीज से जिस प्रकार जड़, तना, टहनियाँ, पत्र-पुष्प व फल और उस फल से फिर बीज निकलता है, उसी तरह जिस प्रकार का भी अच्छा या बुरा कर्म किया जाता है, उस कर्म-बीज से फिर वैसा ही फल यानि परिणाम प्राप्त होता है।

अतः बेहतरी इसी में ही है कि हम निष्काम भाव से कर्म करते हुए निष्कर्म बने रहें। इससे अहंकार पैदा नहीं होगा और कर्त्ता होते हुए भी हम अकर्त्ता भाव में स्थित रह पाएंगे। इसीलिए सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में लिखा है कि 'साधना करो ते लावो ध्यान रस्ता पकड़ो निष्काम'। फिर यह भी कहा गया है:—

चहुं प्रकारां दे कर्म बनाये,
कुकर्म, कर्म, सुकर्म, धर्म नजर आये।
निष्काम भक्ति है तूं ही तूं ही,
किस नूं पूजां ते किस नूं ना पूजा।

किस नूं पूजां ते किस नूं ना पूजां,
नज़र आवे तूं ओही ओही।

जानो कि इस तरह से परोपकारी प्रवृत्ति में ढल निष्काम भाव से पुण्य कर्म करते हुए जीवन जीना अपने आप में सबसे उत्तम भक्ति है। बनना भी है तो इसी भक्ति-भाव का अनुयायी बनो व हर मानव को इसके प्रति जागरूक करने व उसके ख़्याल को बाल अवस्था के अन्य आडम्बरी भक्ति-भावों से मुक्त कराने के प्रति, अपना कर्त्तव्य निभाने के लिए तत्पर हो जाओ और अनथक परिश्रम द्वारा सफलता प्राप्त करो। इस प्रकार अपने निश्चल, नित्य स्वरूप में बने रह, स्वयं तो मौत से निर्भय हो ही जाओ, साथ ही अन्य सबको भी जन्म-मरण के चक्रव्यूह से आज़ादी दिलाने के काबिल बनने हेतु आत्मभाव अपनाने के लिए प्रेरित करो। फिर भक्तिमान् वैष्णव जन यानि सात्विक आचार-विचार व आहार वाला बन, इस जगत में सब कुछ सत्य-धर्म अनुसार, अकर्त्ता भाव से करते हुए, सबसे शक्तिशाली यानि सन्तोषी व धैर्यवान बनो और हृदय में एकरस शान्ति और आनन्द का वातावरण स्थापित करो।

इस तरह निष्कामी बन सबके विश्वासपात्र बनो और सम अवस्था जैसे महान व श्रेष्ठ पद को प्राप्त करो। यह होगा मनुष्य चोले में बने रहते हुए सदा समान प्रकृति में बने रहना व सबको समान दृष्टि से देखना यानि समदर्शिता की भावना से युक्त व्यवहार करते हुए, अपने असलियत स्वरूप के गुणों के साथ, मानवता अनुरूप खुद को मन, वचन, कर्म द्वारा व्यक्त या प्रत्यक्ष करने के योग्य बनाना। जान लो कि मानवता अनुरूप बने रहने का अर्थ है, 'विचार ईश्वर है

अपना आप' के सत्य पर मज़बूत बने रहना। इस आधार के सुदृढ़ होने पर ही हम परस्पर, सजनता युक्त, आत्मीयता का व्यवहार करने में कामयाब हो सकते हैं।

याद रखो इसी तरह इस जगत में आत्मतुष्ट व संकल्प रहित बने रहते हुए निर्लिप्तता से जगत कल्याण हेतु अपनी योग्यता व सामर्थ्य पहचानने में समर्थ हो पाओगे। तभी अपनी भक्ति-शक्ति के प्रभाव द्वारा, कमज़ोर इन्सानों को समभाव-समदृष्टि की युक्ति के वर्त्त-वर्त्ताव में निपुण बना, भ्रष्टाचार से उबार पुनः मानवता अनुरूप शक्तिशाली बनाने का प्रयास सफलता से कर पाओगे।

इसी प्रकार अगर ईश्वर की माया रूपी आश्चर्यजनक काम करने वाली, असाधारण शक्ति को अपने अधिकृत कर, स्वतन्त्रता से मनुष्यत्व अनुरूप जीवन जीने की क्षमता प्राप्त करना चाहते हो तो हिम्मत दिखाओ। ऐसा इसलिए कह रहे हैं क्योंकि यही मायावी शक्ति मोह-माया का जाल फैला, मनुष्यों की विवेकशील बुद्धि को, छल द्वारा भ्रमित कर, जगत में फँसा देती है। कहने का आशय यह है कि यह ही एक जादूगर की तरह ख़्याल को अविद्या, मिथ्या धारणा व अविचार में उलझा दुराचार व व्यभिचार के मार्ग पर अग्रसर कर देती है जिसके प्रभाव से मानव जन्म-जन्मान्तरों तक जन्म-मरण के चक्रव्यूह में फँस, नाना प्रकार की पीड़ाएँ भोगता रहता है। तभी तो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है:–

माया स्त्री आप दी है,
आप हो माया दे स्वामी।

पिच्छे पिच्छे माया ही फिरे,
ओ जान करे कुर्बानी।
माया डंगे ओ उन्हाँ ही ताई,
जेहड़े माया दे विच गलतानी।
माया नचनी ने कइयां नूं नचाया,
जिवें नचे गणिका रानी।
माया डंगनी ने कइयां नूं डंगया,
जैं माया दी रमज़ न जानी।
माया छलनी ने कइयां नूं छलया,
जैं माया दी मर्म न जानी।
माया डंगे माया पीड़ा दिखावे,
जगत दे जीव राहवन परेशानी।
जिन्हां नूं डंगे माया हुन उन्हां नूं पुच्छे तो सही,
जाके किसे विरले माया पहचानी।
हनुमान जी ने दस ही दित्ती,
सारी खोल के माया दी कहानी।

हमारे साथ ऐसा न हो इस हेतु समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार, सजन-भाव की पढ़ाई व गुढाई कर, सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में बताए गए महातप पर, युक्तिसंगत निर्विघ्न बने रहो व इस तरह ब्रह्म शक्ति यानि महाशक्ति धारण करने के योग्य बनो। याद रखो ऐसा होने पर यानि ब्रह्म शक्ति प्राप्त कर लेने पर विवेकहीनता हट जाएगी और ईश्वर की मायावी शक्ति हमारा कुछ नहीं बिगाड़ पाएगी। फिर पुनः ब्रह्म भाव अनुसार अपनी भावना व स्वभाव ढालने में समर्थवान हो जाओगे। यह होगा 'विचार ईश्वर है अपना आप' के भाव से जगत पर अधिकार रखते हुए सब कुछ तद्नुकूल, फल की

इच्छा न रखते हुए ईश्वर के निमित्त करना यानि 'करन-करावन आपे ही आप', 'मैं तूं, जगत तूं, आप ही आप हो', इस भाव से युक्त होकर समस्त कर्म निष्काम भाव से कर पाओगे।

हम समझते हैं कि यह सब सुनने व समझने के बाद अपनी कमज़ोरियों का आभास हुआ होगा और परमात्मा के प्रति विश्वास रखते हुए उस श्रद्धेय के साथ बने रहने का निश्चय ले लिया होगा अर्थात् निश्चित ही अभी तक आपने अपनी जाँचना कर ली होगी कि निष्कामता का भाव अपनाने के प्रति मेरी अन्दर क्या कमी है, और इस कमी को दूर करके मुझे किस प्रकार अपने मन को ईश्वर में लीन रखना है। याद रखो इस प्रकार आत्मनिरीक्षण कर, आत्मनियन्त्रण द्वारा, आत्मसुधार करने पर ही, अंश और अंशी के बीच की दूरी समाप्त हो सकेगी और यथार्थता यानि अभिन्नता का बोध हो जाएगा।

इस सन्दर्भ में यह जानो कि सजन श्री शहनशाह हनुमान जी भक्ति-शक्ति के राजे हैं व इसी कारण सारी सृष्टि में उन हितकारी व तेजधारी की मानता व पूजा होती है। उनकी भक्ति-शक्ति इतनी प्रबल है कि उसके प्रभाव से फुरने की सृष्टि तो क्या, मौत भी थर-थर काँपती है। यहाँ तक कि कुलनाशक अहंकारी रावण का अहंकार भी उनके बल के सामने कमज़ोर साबित हुआ। अतः यह समझ लो कि अपने ख़्याल को ऐसे शक्तिवान परमपिता ओ दाता द्वारा बताई गई युक्तियों के संग जोड़े रखते हुए विचारवान बन जीवन के निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने का कार्य सहजता से सिद्ध हो सकता है।

इसी परिप्रेक्ष्य में यह भी जानो कि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार ध्यान को ईश्वर में स्थित रखते हुए अपने यथार्थ निज स्वरूप को मन/ख़्याल में उतारने के लिए व सच्चाई-धर्म के रास्ते पर ठीक बने रह गृहस्थ-धर्म को नियम व नीति अनुसार निभाने के लिए आवश्यक हर कर्म, इच्छा रहित, भक्ति-भाव से करने का विधान है। याद रखो जो भी मनुष्य अपने जीवन के सब कर्त्तव्य इस सिद्धान्त अनुसार अपनाने के योग्य बन जाता है वह सुप्त अवस्था से जाग्रत अवस्था को प्राप्त होता है और यही चैतन्यता उसके मन की शांति व आनन्द का हेतु होती है।

इस प्रकार वह कुदरत प्रदत्त सन्तोष-धैर्य रूपी शक्ति पर यथा एकरस बना रह सच्चाई-धर्म के रास्ते पर निष्कामता से बना रह पाता है। तभी तो वह भक्ति और शक्ति का प्रतीक किसी कारण भी सच्चाई-धर्म के रास्ते से नहीं भटकता व मानवीय चलन पर सुदृढ़ता से डटा रहता है। तात्पर्य यह है कि उसका मन सांसारिक प्रभावों से रोमांचित होकर इधर-उधर नहीं उड़ता और इस प्रकार अंतःकरण की स्वच्छता के कारण सत्य सदा उसके दृष्टिगोचर रहता है। यह अपने असली स्वरूप पर स्थिर बने रह, अपने मन को वश में रखते हुए, शान्त व अफुर अवस्था को प्राप्त हो, ईश्वरीय हुक्म अनुसार सब कुछ सहजता से कर पाने की बात होती है।

इससे उस पराक्रमी के स्वभावों का टैम्प्रेचर सदा सम रहता है और वह अपने जीवनकाल में परोपकार कमाता हुआ यश और कीर्ति को प्राप्त होता है व अन्य कुरस्ते पड़े हुए सजनों को भी समभाव-समदृष्टि की युक्ति द्वारा सजन-भाव के वर्त्त-

वर्त्ताव में निपुण बना, रास्ते पर लाने का यत्न सफलतापूर्वक करने में सक्षम होता है। इस प्रकार वह भक्ति प्रबल व शक्ति ताकतवर होने के प्रभाव से संकल्प स्वच्छ, जिह्वा स्वतन्त्र व दृष्टि कंचन रख पाने की योग्यता प्राप्त कर लेता है। तभी तो वह उच्च बुद्धि उच्च ख़्याल इन्सान कहलाता है। क्या हम सब ऐसा ही मनुष्य बनना चाहते हैं?

हाँ जी।

तो हमें याद रखना होगा कि सच चानणा है, झूठ अन्धेरा है और इसी तथ्य अनुसार ही घर-परिवार में सच के वर्त्त-वर्त्ताव पर सुदृढ़ता से बने रह, यही सन्देश कुल दुनियां तक फैलाना है ताकि सभी इन्सान धर्म के महान रास्ते पर बने रह जगत पर विजय प्राप्त करने के योग्य बन सकें और एकता व एक अवस्था में बने रहें।

याद रखो ऐसा महान मनुष्य बनने यानि अपने धर्म पर खड़े रहने के लिए तन-मन-धन का त्याग भी करना पड़े, तो वह भी प्रसन्नचित्तता से करना है। इस सन्दर्भ में जानो कि यही धर्म का निष्काम यानि संकल्प रहित रास्ता है जिस पर बने रहते हुए मनुष्य किसी प्रकार भी कुरस्ता नहीं अपना सकता और सदा मनुष्यत्व के आधार ब्रह्म-भाव में बना रह पाता है। जान लो यही सतयुग का चलन है।

सतयुग में संकल्प नहीं होता परन्तु त्रेता में संकल्प उगना शुरू हो जाता है इसलिए झुखना-रोना आरम्भ हो जाता है। द्वापर, कलियुग में यह क्रमशः बढ़ता जाता है क्योंकि निष्कामता छूट जाती है और स्वार्थपरता पनप जाती है। इसी कारण दुई-द्वेष का भाव पनपता है। अतः निष्काम

रास्ता यानि संकल्प रहित रास्ता अपनाओ। उसके लिए आवश्यक है कि ब्रह्मज्ञान को अपने जीवनयापन का सुदृढ़ आधार बनाओ तभी मनुष्यता में बने रह पाओगे।

जानो इसी कार्य सिद्धि के लिए प्रचलित बाल अवस्था के कई प्रकार के कमज़ोर भक्ति-भावों से हट युवावस्था के शक्तिशाली भक्ति-भाव अनुसार जीवन में सब कुछ करने के काबिल बनने व सबको बनाने हेतु ही सजन श्री शहनशाह हनुमान जी के हुक्म अनुसार सतयुग दर्शन वसुन्धरा पर समभाव-समदृष्टि का स्कूल खोला गया है। इस महान भक्ति-भाव को अपना कर कोई भी मनुष्य अपना पूर्ण विकास कर ओजस्वी व शक्तिशाली बन सकता है व जीवन की कठिन से कठिन परिस्थिति में भी सच्चाई-धर्म के निष्काम रास्ते पर स्थिर बने रहने का पराक्रम दिखाने के योग्य बन सकता है। तो है ना यह सबके हित की बात?

हाँ जी।

तो इसे अपने सबसे श्रेष्ठ बनने की बात मानो और अविलम्ब समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार सजन-भाव अपना कर, वर्त्त-वर्त्ताव में लाना आरम्भ कर दो। इस तरह सच्चाई-धर्म के निष्काम रास्ते पर बने रहने जैसा महान कार्य सिद्ध करने में सफलता प्राप्त करो। क्योंकि सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ सबको कह रहा है कि:-

सजनों तुसां बालक नही नादान, हो तुसां हुन नौजवान।
पा लवो आत्मिक ज्ञान, पावो विश्राम, सजनों पावो विश्राम।।

इस सन्दर्भ में यह भी जान लो कि ईश्वर सत्य है, सत्य ही

ईश्वर है। यदि इस सत्य पर हम डटे हुए हैं तो ईश्वर का हुक्म मानते हैं। यह ईश्वर के आज्ञाकारी पुत्र होने की निशानी है। यदि इस सत्य से विरुद्ध झूठ बोलते हैं, क्रोध करते हैं, लोभ-मोह में फँसे हुए हैं तो यह सब ईश्वर का विरोध करने की बात है। ऐसा विरोधी अहंकारी रावण की भांति अपने व कुल के सर्वनाश का कारण बनता है। यह अत्यन्त कष्टदायक स्थिति होती है जिसकी पीड़ा सबको भुगतनी पड़ती है। अतः यह पाप मत करो और सत्य-धर्म के रास्ते पर चलते हुए सदैव निष्काम कर्म करो। जान लो यही वास्तविक साधना है। इसी पर ध्यान केन्द्रित करते हुए सावधान बने रहो कि काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार रूपी दानव हमारी साधना भंग कर कहीं हमको कुरस्ते पर न चढ़ा दे। अतः यदि सुखी रहना चाहते हो तो संतोषी बनो, धीर बनो और सजन भाव अनुसार सबके साथ मित्रता का व्यवहार करते हुए सहनशील कहलाओ।

इसी परिप्रेक्ष्य में यदि अक्लमंद नाम कहा विश्राम पाना चाहते हो तो आओ सब मिलकर नेक नीयती से ईश्वर से प्रार्थना करें:-

हे परमेश्वर ! हमें समझ आ गया है कि ब्रह्मज्ञान से बढ़कर, हमारे समुचित बल, बुद्धि व चारित्रिक सुन्दरता का और कोई आधार नहीं हो सकता। अतः अभी तक जगत को जीवन आधार मानते हुए, आपके प्रति विमुखता की जो भूल व गुस्ताखी हमने की, उसे क्षमा करो जी व हमें पुनः अपने संग रखना स्वीकारो जी ताकि हम समझदारी से युवावस्था के भक्ति भाव में स्थिर रह निष्काम कर्म करने के योग्य बनें।

हे परमेश्वर ! इस संदर्भ में हम यह भी जान गए हैं कि अन्दरूनी व बैहरूनी दोनों वृत्तियों में आपके ज्ञान, गुण व बल रूपी सुन्दरता से ही हम, आप जैसी सुन्दरता के प्रतीक बन, नेकी के काम करते हुए अच्छे व नेक इन्सान कहला सकते हैं। इस प्रकार हम अपना घर सतयुग बना, आत्मीयता अनुसार जगत में विचरने के साथ-साथ परमपद को भी प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए हमारे साथ बने रहना जी।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरांत सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियंत्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 7 जून 2015 का सबक

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्म-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

सजन दयालु श्री रामचन्द्र जी के मुख के शब्द

शब्द:-गरुड़ ते जब चल पड़े, गरुड़ मारे टपोली।
चार चुफेरियों फिर फिरा के, पहुँचे सप्त द्वीप में।
आहा सप्तद्वीप में, आहा सप्त द्वीप में।
भूमण्डल फिर फिरा के गरुड़ पहुँचे गगन मण्डल में।
आहा गगन मण्डल में, ओहो गगन मण्डल में।
ओथे कैसा है विश्राम, शक्ति खड़ी है दरबान।
कैसे जगे ओ जगत जहान, पहुँचे जब गगन मण्डल में,
आहा पहुँचे गगन मण्डल में।

गरुड पहुचँ दरबार में, हकूमत दी कुर्सी ते बैठ गये।
ओ बैठे खेल खिलाड़ी, आहा बैठे लीलाधारी।
हेठां संस्था बैठ गई, कुर्सी ते बैठे कान्ह कन्हाई।
ओ बैठे हिन बनवारी, आहा बैठे हिन बनवारी।
श्री साजन जी कह रहे है
सजनां नूं समझन विच नहीं आऊंदी,
प्रभु जी नूं किस तरह पाउणा है।
प्रभु जी नूं किस तरह पाउणा है,
प्रभु जी नूं किस तरह रिझाउणा है।
प्रभु जी हैन ओ परवरदिगार,
आलम सारी रही जे ओन्हां नूं पुकार।
निर्मल प्रेम जैंदा होवे प्यार,
तदों प्रभु जी नूं मनाउणा है।
तदों प्रभु जी नूं मनाउणा है।,
तदों प्रभु जी नूं मनाउणा है।
निर्मल प्रेम जैंदा होवे प्यार,
तदों प्रभु जी नूं मनाउणा है।
प्रभु जी दा समभाव नाल है जे ओ प्यार।
सन्तोष, धैर्य दा दिखाउणा है जे ओ सिंगार।
सच्चाई धर्म दे रस्ते ते चलदे जाना,
फिर प्रभु जी दा दर्शन ओ पाउणा है।
फिर प्रभु जी दा दर्शन ओ पाउणा है,
फिर प्रभु जी दा दर्शन ओ पाउणा है।
सच्चाई धर्म दे रस्ते ते चलदे जाना,
फिर प्रभु जी दा दर्शन ओ पाउणा है।
प्रभु जी दी धुर दी है बाणी,

किसे विरले सजन ने है पहचानी।
पहचाने कोई विरला ओ सजन,
प्रभु जी दी रमज़ जैं जाणी है।
प्रभु जी दी रमज़ जैं जाणी है,
प्रभु जी दी रमज़ जैं जाणी है।
पहचाने कोई विरला ओ सजन,
प्रभु जी दी रमज़ जैं जाणी है।
प्रभु दा ओन्हां प्रेमियां नाल है जे ओ प्यार,
जेहड़ा खालस सोने दा पावे ओ सिंगार।
एक निगाह जैंदी एक है दृष्टि,
उस मेल प्रभु जी नाल ओ खाणा है।
उस मेल प्रभु जी नाल ओ खाणा है,
उस मेल प्रभु जी नाल ओ खाणा है।
एक निगाह जैंदी एक है दृष्टि,
उस मेल प्रभु जी नाल ओ खाणा है।
प्रभु नाल मेल ओ खा करके,
गगन मण्डल ओहदा टिकाणा है।
ओहदा हो गया ज्योति स्वरूप अपना आप,
प्रभु नाल ओ प्रभु हो जाना है।

ध्वनिः– खालस सोना होके आओ, सजनों मेल प्रभु नाल खाओ।

इस कीर्तन के भावार्थ से यह स्पष्ट होता है कि ईश्वर के प्रति हमारा प्रेम/प्यार निर्मल होना चाहिए। इस हेतु हमें सत्यता से समभाव अपनाकर, मानवता यानि इन्सानियत धर्म पर, जो मनुष्य जीवन का आधार है, उस पर सुदृढ़ बने रहना है और तद्नुकूल ही अपने चरित्र को ढालना है।

याद रखो इन्सानियत में बने रहने हेतु समभाव जिसे समता योग भी कहते हैं, उसे अपनाना अति आवश्यक है। जो ऐसा कर पाता है, वही ईश्वर का सपुत्र कहलाता है और उसी से ही ईश्वर प्यार करते हैं।

जान लो समभाव अपनाने से हमारा मन (जो निगाह नहीं आता) व शरीर (जो नज़र आता है) उन दोनों का योग यानि मिलन बना रहता है। इस प्रकार समता से दोनों समान हो जाते हैं और इस जगत में ईश्वर के हुक्म अनुसार अपने कर्त्तव्यों की पालना के लिए अपना-अपना निर्धारित कार्य एक रस कर पाते हैं।

अतः समभाव की महत्ता को देखते हुए हमारे लिए बनता है कि हम समभाव को गहराई से समझें और इस हेतु समभाव-समदृष्टि के स्कूल में कराई जा रही पढाई द्वारा, उसे धर्म संगत जीवन में उतारने की युक्ति ध्यानपूर्वक समझते हुए, उसका जीवन में इस्तेमाल करना आरम्भ करें। इस तरह अपने धर्म पर मज़बूत बने रह, उस पढाई की जो गुढाई है उसे करने मे कुशल बनें। ऐसा करते हुए सावधान बने रहें कि कलियुग का कोई भी नकारात्मक स्वभाव या कारण हमें प्रभावित कर अपने धर्म से न गिरा सके।

जान लो यदि ऐसा हुआ तो हम समभाव के स्थान पर, दुई-द्वेष युक्त स्वभाव अपना बैठेंगे और उसी चलन के अनुरूप वर्त्त-वर्त्ताव करना शुरू कर देंगे। इस तरह एक भाव के स्थान पर अनेक भाव हमारे हृदय में घर कर जाएंगे और बिगाड़ आरम्भ हो जाएगा। फिर निज धर्म छोड़ देने के कारण सन्तोष और धैर्य को अपनाना हमारे लिए एक सवाल

बन जाएगा। फलतः ध्यान स्थिर नहीं हो पाएगा और हम निज असलियत स्वरूप को भूल दुनियावी झंझटों में यानि भौतिक ज्ञान में उलझ जाएंगे। निःसन्देह यही कारण है, धर्म ग्रन्थों में विदित धुर की वाणी यानि ईश्वरीय हुक्म को न समझने का और पढ़-सुन कर भी आत्मिक ज्ञान को धारण करने के प्रति रूचि के अभाव होने का। इसीलिए तो इस कलियुग में आज उस ईश्वर की रमज़ कोई विरला पहचान पा रहा है। जान लो जो ऐसा कर पा रहा है, वही खालस सोना हो, एक निगाह, एक दृष्टि द्वारा, सर्वव्यापक एक दर्शन का बोध करते हुए "विचार ईश्वर है अपना आप" के तथ्य अनुसार, इस जगत में निर्भयता से विचर पा रहा है। इसीलिए तो इस कीर्तन में कहा गया है:

ध्वनि-

खालस सोना होके आओ, सजनों मेल प्रभु नाल खाओ।

खालस सोना हो आत्मपद प्राप्त करने हेतु ही हमने, गत सप्ताह युवावस्था के सर्वोत्तम भक्ति-भाव यानि समभाव-समदृष्टि की युक्ति को अपनाने से प्राप्त होने वाली शक्ति के विषय में जाना। आओ अब इसी सन्दर्भ में आगे बढ़ते हैं:-

जानो कि युवावस्था के भक्ति-भाव में बने रहना अपने आप में वह महातप है जिसके द्वारा इन्सान महाशक्ति प्राप्त कर सकता है व सत्यनिष्ठा से अपने आप को सत्यता से व्यक्त कर सकता है। इस प्रकार जगत रूपी माया के खेल को निपुणता से खेलता हुआ निर्लेप बना रहता है। हम कह सकते हैं कि भक्ति-भाव अगर सन्तोष का प्रतीक है तो उस साधना से प्राप्त

शक्ति धीरता का। ऐसा भक्ति-भाव ईश्वर की ओर सम्मुखता का प्रतीक होता है। ऐसा दृष्टिकोण रखने वाले इंसान की भक्ति-शक्ति ताकतवर होती है और फलतः उस के मन में सम्पूर्णता का भाव बना रहता है। याद रखो भक्ति-शक्ति के ताकतवर होने पर इन्सान कष्ट-क्लेश आने पर भी सम अवस्था में बना रह सकता है और फिर वह प्रबल विचारवान भली प्रकार विचार कर किसी भी विषय का सत्य बोध करने की योग्यता रखता है। ऐसे धीर, ताकतवर व विचारवान के मन, बुद्धि व ख़्याल को, कोई भी अज्ञानी भ्रमित कर, पथभ्रष्ट नहीं कर सकता।

इस प्रकार उसके लिए संसार के प्रति उदासीन यानि मन की राग रहित अवस्था द्वारा विषय-वासना और सांसारिक सम्बन्धों के प्रति मोह रहित रहते हुए अपने मन को ईश्वर में लीन रखना सहज हो जाता है। यहाँ यह भी जान लो कि जहाँ राग होता है, वहाँ मोह उत्पन्न हो जाता है और मोह रूपी कुसंग के कारण द्वेष का चलन हो जाता है। इसके विपरीत राग रहित अवस्था में मन के ईश्वर में लीन रहने के कारण ईश्वर का संग प्राप्त रहता है।

तब फिर ईश्वरीय संग के प्रभाव के कारण, उस सुमतिवान मनुष्य के हृदय में आनन्द, व उत्साह आदि भरने वाली मानसिक उमंग रूपी तरंग, उसे सदा पुण्य कर्म करने में प्रवृत्त करती है। याद रखो इस मानवीय रंग में रंगा हुआ, सर्वहितकारी इन्सान ही अपनी नेक करनी द्वारा जगत को दंग कर देता है। यह होता है निष्काम भक्ति द्वारा शक्तिशाली बन, परोपकार कमाने के योग्य बनना व इस प्रकार दुराचार,

व व्यभिचार के हेतु पाँच लुटेरों यानि काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार से बचे रह सच्चाई-धर्म रूपी सुकर्मों के रास्ते पर बने रहना। याद रखो यह शान्ति से आनन्दपूर्वक संकल्प रहित जीवन जीने की बात है। ऐसा इन्सान ही विशुद्ध हृदय व स्थिर चित्त वाला होता है।उसी की भाव-भावना निर्मल होती है जो उसकी वाणी को स्वतन्त्रता व दृष्टि को कंचनता प्रदान करती है।

यहाँ विडम्बना की बात यह है कि कलियुग में अधिकतर इन्सान नादानी के कारण सांसारिकता के प्रति रोमांचित होने के कारण अपने जीवन में भक्ति-शक्ति के महत्त्व को भूल खुद ही अपने जीवन के साथ जुल्म कमाते हैं। इससे उनको कठिन रोग लग जाते हैं और वे मान-अपमान में फँस अपने मन पर अंकुश रखने में कमज़ोर पड़ जाते हैं। फलस्वरूप आत्मिक ज्ञान के अभाव के कारण, मन शैतान वृत्तियों द्वारा, उन इन्सानों को विषय-विकारों व कुकर्म-अधर्म में लिप्त कर, इस तरह से तोड़ देता है कि उन्हें हर पल अपनी तरफ बुलाती हुई मौत की जोर-जोर की आवाज़े सुनाई देती हैं।

इस प्रकार आधि-व्याधि के रोगों से त्रस्त भयग्रस्त मानवों पर फिर विसूचिका का लश्कर हमला करता है। फलतः अनेक रोगों की पीड़ा से संतप्त मानव न तो दिन को आराम पा सकते हैं और न ही रात को सुख की नींद सो सकते हैं। इस स्थिति में उन इन्सानों की चेतन अवस्था भंग हो जाती है और अचेतन अवस्था को प्राप्त होते ही बुद्धि ठीक से काम करना बंद कर देती है। इससे उनकी स्मरण शक्ति

कुप्रभावित होती है और वे भ्रमित बुद्धि परिस्थितियों के अनुसार सही समाधान लेने में असक्षम हो जाते हैं। यही अविवेक कहलाता है जिससे इंसान अच्छे-बुरे का अन्तर नहीं समझ पाते। ऐसा होने पर उनके हृदय से प्रकाश छँट जाता है और अज्ञान रूपी अंधकार के छा जाने के कारण, वे अपने निज स्वरूप की पहचान खो, जीवन के मकसद को भी भूल जाते हैं।

कहने का तात्पर्य यह है कि वे अपनी वास्तविक क्षमता भूल **"विचार ईश्वर है अपना आप"** इस सत्य का बोध नहीं कर पाते। इस तरह सांसारिक सम्पदा इकट्ठा करना व सुख प्राप्त करना ही उनके जीवन का ध्येय बन जाता है और दूसरों से आगे बढ़ने की इस होड़ में वे अज्ञानी खुद को दूसरों से अधिक बुद्धिमान व श्रेष्ठ समझने लगते हैं। निःसन्देह धन व सुख-साधन एकत्रित करने की दृष्टि से वे जगत वालों की नज़रों में दूसरों से अधिक बुद्धिमान हो सकते हैं परन्तु पारमार्थिक दृष्टि से वे अज्ञानी ही माने जाते हैं, क्योंकि झूठ, चोरी व ठगी द्वारा इन नश्वर सुख साधनों को एकत्रित करने की प्रतिस्पर्धा में वे हकीकत में जीवन का कौन सा अनमोल असली सुख व शान्ति गँवा रहे हैं, इसका उन्हें भान नहीं रहता।

इस तरह अज्ञानवश वे शरीर व जगत को ही सब कुछ मानने वाले इन्सान, स्वार्थपरता का सिद्धान्त व विकार वृत्तियाँ अपनाकर कूड़, कपट व छल करते हुए सबको ठगते हैं। यही नहीं तब फिर वे जगत के मायावी जाल में फँस, शारीरिक मिथ्या अहंकार के कारण अपने तुल्य किसी को कुछ न समझते हुए पाप कर्म करते जाते हैं। यह होता है

कुकर्म-अधर्म के फलों के प्रभाव से आजीवन ख़्याल का झुखते रहना व इन्सान का रोते रहना। ऐसी अवस्था से ग्रस्त इन्सान अनगिनत रोगों में फँस, आजीवन कष्ट उठाते हुए, जन्म-मरण के अधिकारी बन अपने जीवनकाल में ही नरक तुल्य पीड़ा भोगते हैं और परमार्थ को भूल, हीरे जैसा जन्म गँवा देते हैं।

इस विवेचना से यह स्पष्ट होता है कि जो कलियुगी इन्सान सांसारिक धन्धों में इतने अधिक आसक्त हो उलझे हुए होते हैं कि उनके हृदय में आत्मिक ज्ञान प्राप्ति के प्रति उदासीनता इस प्रकार घर कर जाती है कि फिर न तो वे इस विषय पर कुछ सुनने-बोलने में और न ही उसके लिए कुछ कार्य करने में रुचि रखते हैं।

परमार्थ के प्रति उनकी यही विमुखता, उनकी चैतन्य अवस्था के भंग होने का कारण बनती है। फलतः वे मिथ्या संसार की सुख-सुविधाओं के गुलाम बन, चारित्रिक सुन्दरता के स्थान पर शारीरिक सुन्दरता को महत्त्व देने लगते हैं और सुषुप्त अवस्था को प्राप्त होते हैं। सर्वहित की ख़ातिर ऐसे सजनों को पुनः जाग्रत अवस्था में ला, मनुष्यता अनुरूप ढालने व भक्ति-शक्ति का व्यापार करने के योग्य बनाने के लिए ध्यान-कक्ष में इन कक्षाओं को लगाने का निश्चय लिया गया। ताकि भक्ति-शक्ति से वंचित मानव, दुष्कर्मों व पापकर्मों के फलस्वरूप अपना अनमोल जीवन गँवा न बैठें। इस प्रकार उनके लिए अटल राज्य प्राप्त करना व स्वतन्त्रता से ईश्वरीय हुक्म अनुसार जीवन जीना कठिन या नामुमकिन हो जाए।

इस सन्दर्भ में सभी से कहना चाहते हैं कि आज की भयावह परिस्थितियों को देखते हुए हैरान-परेशान मत होवो, अपितु शास्त्र-विदित वचनों को युवावस्था के भक्ति-भाव अनुसार प्रवान करते हुए ईश्वरीय महान शक्ति को जानने, पहचानने व धारण करने हेतु समभाव-समदृष्टि की युक्ति पर बने रहने का तप करो व ताकतवर बनो। इससे आत्मिक बल जाग्रत होगा और हमारे मन से वैरी-दुश्मन और बनचर का डर समाप्त हो जाएगा।

इसके लिए हमें खुद पर पकड़ रखनी होगी ताकि हम इस युवावस्था के भक्ति-भाव में कमज़ोर पड़ कर किसी अन्य भाव अनुसार जगत में विचरने का चलन न अपना बैठें। याद रखो जो इन्सान समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार इस सुदृढ़ता से भक्ति-शक्ति को धारण कर जगत में विचरते हुए न केवल स्वयं सच्चाई-धर्म का वर्त्त-वर्त्ताव करने में सक्षम हो जाता है अपितु औरों को भी उस रास्ते पर अग्रसर करने के लिए प्रेरित करने में निपुण हो जाता है, उसी को ईश्वर अपने कंठ से लगाते हैं। तात्पर्य यह है कि समभाव-समदृष्टि की युक्ति अपनाकर, वह सजन, सजन-भाव के वर्त्त-वर्त्ताव द्वारा, ख़ालिस सोना हो, इस जगत में शक्तिशाली इन्सान की तरह, बेख़ौफ़ा-बेख़तरा, स्वतन्त्र रूप से विचरता है। इस प्रकार जन्म-मरण की पीड़ा से मुक्त हो वह भाग्यशाली निष्पाप सजन, परमपद को प्राप्त कर लेता है।

इसी विषय में यदि हम जगत के इतिहास को भी देखें तो समझ आएगी कि हर युग में जिसने जो भी शक्ति प्राप्त की, वह भक्ति बल यानि तपस्या से उस आराध्य के प्रति समर्पित

भाव व एकाग्रचित्तता से, ध्यानपूर्वक उसके ज्ञान व गुण को यथा अपने मन-वचन-कर्म में उतारने के प्रति श्रद्धा व विश्वास रखते हुए, उत्साह पूर्वक बने रहते हुए की। इस प्रकार इस संसार में उसने ही आत्मविश्वास व आत्मनिर्भरता के साथ, स्वतन्त्रतापूर्वक किसी प्रकार का भी पराक्रम दिखा पाने के योग्य बनने हेतु, अन्य सब कुछ त्यागने व कष्ट-क्लेश सहते हुए भी, सम अवस्था पर बने रहना उचित समझा व वैसा कर पाने का आदर्श स्थापित किया।

याद रखो उसी ने ही मनुष्यत्व में सुदृढ़ता से बने रहने हेतु सांसारिक धन की पूजा करने से बेहतर ईश्वर के ज्ञान रूप विचारों को सम्मान देते हुए तद्नुसार गुण धारणा को महत्त्वपूर्ण माना और कठिन उपासना द्वारा उन्हें अपने भाव, भावना व स्वभाव के अंतर्गत कर लिया। इस प्रकार मनुष्य चोले में होते हुए भी आज वे सजन आराधनीय यानि पूजनीय माने जाते हैं।

हमें इस सर्वविदित सत्य से शिक्षा लेनी है और उसी प्रकार युवावस्था के सर्वोत्तम भक्ति-भाव को अपने जीवन में उतार कर शक्तिशाली बनने का भरसक प्रयत्न करना है ताकि उन्हीं की तरह हमारे भी मन, वचन, कर्म में नेक नीयती का वास हो और हम कभी भी किसी कारण, किसी से सजन-भाव के वर्त्त-वर्त्ताव में कमज़ोर न पड़ें। इस प्रकार सदा एकता, एक अवस्था में बने रह सत्यता से, आजीवन निज मानवता रूपी धर्म पर डटे रहें। इसी से घर परिवार व अन्य संबंधियों पर अच्छा प्रभाव पड़ेगा और कुल समाज तक अच्छा सन्देश जाएगा।

याद रखो ईश्वरीय विचारों को भक्ति बल से प्राप्त करने का सिलसिला क्रमबद्ध यानि विचार प्रवाह रूपी शक्ति निरन्तर चलते रहना चाहिए ताकि हमारे मन-वचन-कर्म मनुष्यत्व अनुरूप आचार-व्यवहार की उत्तम अवस्था में इस प्रकार बने रहें कि जीवन की कठिन से कठिन उद्देश्यपूर्ति करना, हमारे लिए सुलभ हो। इस तरह किसी को भी दुःख या नुकसान न पहुँचाते हुए हमारे मन में किसी कारण भी कोई खोट घर न कर सके। यह सर्वव्यापक भगवान के सत्य के अनुसार आत्मभाव में बने रह सबके साथ आत्मीयता का एकरस व्यवहार करते हुए ख़ालिस सोना हो मानव होने की उत्कृष्टता सिद्ध कर, अपना नाम रोशन करने की बात है। इसलिए सब सजनों को सुझाव है कि -

सजनों हनुमान जी दे वचन करो प्रवान।
पकड़ो निष्काम रास्ता, रस्ता पकड़ो निष्काम।
फिर भक्ति-शक्ति चमके महान।।

याद रखो, यदि यह कार्य सिद्ध करना चाहते हो तो ईश्वर के सम्मुख करबद्ध होकर प्रार्थना करो व वायदा करो कि हम अपने कथनानुसार नेक नीयती से इसके प्रति दृढ़ संकल्प रहेंगेः-

हे आद् पुरुष, निरंकार, ज्योति स्वरूप, पारब्रह्म परमेश्वर ! हम ब्रह्मविद्या द्वारा यह जान गए हैं कि आप ही जगत को रच, उसे अग्नि तत्व द्वारा प्रकाशित करते हैं यानि सबको ज्ञान प्रकाश से प्रकाशित करने वाले हैं। सबको आगे ले जाने वाले प्रभो ! जो आपकी पर्वत की धारा के समान, संसक्त (किसी की ओर अनुरक्त) न होती हुई विचित्रा,

अद्भुत, ब्रह्ममयी ज्ञानधारा, आदिकाल से निरन्तर ज्ञान दान कर रही है, हे सबको बसाने वाले, सबमें रहने वाले, प्रत्येक पदार्थ के ज्ञाता, सर्वज्ञ भगवान ! हमें वह उत्तम बोध देने वाली, सर्वजन हितकारिणी वेदरूप कल्याणमति प्रदान करो ताकि हम न केवल युवा अवस्था के भक्ति भाव पर बने रह पाएं, वरन्, समदर्शिता अनुसार सबको बराबर समझते हुए, उनसे आत्मीयता का व्यवहार भी करें। इस तरह हम शारीरिक बन्धनों व जगत के विषयों से मुक्त बने रह, इस जगत में जो भी करने आए हैं, उस कार्य को निष्कामतापूर्वक, सफलता से परिपूर्ण कर, अपने निज घर को लौट विश्राम प्राप्त कर सकें। हे प्रभो ! हमारी इस पुकार को सुनो जी, ताकि हम सब रोते हुए हँस पड़ें और अपने घर में बसने के योग्य पात्र बन, परमानन्द को प्राप्त हो सकें।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरान्त सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियनत्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 14 जून 2015 का सबक

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्म-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

सजन दयालु श्री रामचन्द्र जी के मुख के शब्द

साजन जी असां क्या बताऊँ
क्या सुनाऊँ सुनने में जो आता है।
सुनो-सुनो ओ साजन जी,
साडा एहो दिल चाहता है,
साडा एहो दिल चाहता है।।

जेहड़ा निष्काम रस्ते ते आ जाता है,
ओ दीदार महाराज जी दा पाता है।

जेहड़ा सच-सच वर्त्ताव दिखाता है,
ओ दीदार महाराज जी दा पाता है-
ओ दीदार महाराज जी दा पाता है।।

जेहड़ा सच वर्त्ते सच वर्त्त वर्त्तावे,
ओ मेल महाराज जी नाल खाता है।
तिनां कालां दी पहचान ओ करके,
त्रिकालदर्शी हो जाता है,
त्रिकालदर्शी हो जाता है।।

सच ओ बोलचाल सच ओ खान पीन,
जेहड़ा सच दा सौदा करता है।
बेफ़िकरा दिन रात ओ राहवे,
ओ किसे कोलों नहीं डरता है-
ओ किसे कोलों नहीं डरता है।।

सजनां नूं सच्चाई धर्म दे,
दो मन्त्र समझाओ।
सच सच दा उच्चारण करके,
सच दा शब्द पढ़ाओ सच दा शब्द पढ़ाओ।।

जेहड़ा उठत बैठत स्वप्न जाग्रत
सच सच उच्चारण करता है।
ओ दर्शन पा पा महाराज जी दे, महाराज जी
दे संग ओ रहता है-
महाराज जी दे संग ओ रहता है।।

सच्चा व्यापारी ओ तर गया,
झूठ डुब्बे विच मंझधार।

सच किनारे ओ जा लगा,
झूठ डुबिया अधविचकार झूठ डुबिया अधविचकार।।

झूठ पहरेवा लहाणा जे सजनों,
जेहड़ा करदा जे औखा।
सच दा पहरेवा पाना जे,
जेहड़ा करदा ओ सौखा,
जेहड़ा करदा ओ सौखा।।

सच ओ मौज उड़ावे,
झूठ ओ ठोकरां खावे।
ठोकरां खा-खा उठ-उठ के ओ,
फिर ओ सजन पछतावे फिर ओ सजन पछतावे।।

इस कीर्तन के माध्यम से परमेश्वर हम सबको समझा रहे हैं कि जो इन्सान निष्काम रास्ते पर आ जाता है वही मेरा दीदार यानि दर्शन पा सकता है। इसी रास्ते पर बने रह जो भी सच का वर्त्त-वर्त्ताव दिखाता है, वही मेरे साथ मेल खा, तीनों कालों की पहचान कर त्रिकालदर्शी हो जाता है। तभी तो वे हमें सच बोलचाल, सच खान-पीन व सच का ही व्यापार करने का सुझाव दे रहे हैं ताकि हम ईश्वर के हुक्म अनुसार निर्भयता से जीवन जीने के योग्य बन सकें और जीवन का प्रत्येक क्षण बेफ़िकरी से यानि चिंता रहित व्यतीत करें।

अतः सजनों सच्चाई-धर्म के मन्त्र को खुद समझो व अपने परिवारजनों को सच का यह शब्द पढ़ाओ। इस प्रकार अपनी सुरत को शब्द के संग जोड़े रख, उठते-बैठते, सोते-

जागते, अन्दरूनी व बैहरूनी वृत्ति में, एक उपासक की भांति, भक्ति-भाव से सच का उच्चारण करते हुए, अपने निज स्वरूप में बने रहो। इस संदर्भ में याद रखो कि जहाँ सच का वर्त्त-वर्त्ताव करने वाला सच्चा व्यापारी जीवन में मौज उड़ाते हुए अंत में भवसागर से पार उतर जाता है, वहीं झूठ का चलन अपनाने वाला, आजीवन ठोकरें खाते हुए, पछतावे की अग्नि में जलता है और अंततः मंझधार में डूब जाता है। यह सब सुनने के पश्चात् आप सब क्या चाहते हो डूबना चाहते हो या तरना चाहते हो?

तरना चाहते हैं।

क्यों, डूबने से डर लगता है?

हाँ जी।

तो झूठ, चतुराईयाँ, चोरियाँ व ठगियाँ करने से भी डरो और इस दुःखदाई कठिन अवस्था से बचे रहने हेतु, सच का पहरेवा पहन सरलता से जीवन जीना सीखो।

आइए अब जानते हैं कि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में विभिन्न युगों में प्रचलित भक्ति-भावों का वर्णन करते हुए क्या कहा गया है:-

त्रेते विच होय सेवक स्वामी, द्वापर होय भक्त भगवान।
कलुकाल गुरु चेला कहावे सतवस्तु साजन सजन महान।।

तिन काल गुजरे तिन अवस्था, सतवस्तु दा इकट्‌ठा करो सामान।
सजन शब्द अफुर अवस्था, अपना आप लवो पहचान।।

अर्थात् विभिन्न युगों में प्रचलित बाल अवस्था के बन्धनमान भक्ति-भावों के अंतर्गत जहाँ त्रेता में सेवक-स्वामी का, द्वापर में भक्त-भगवान का प्रचलन था वहीं कलियुग में आडम्बर युक्त कर्म-काण्ड करने वाले इंसानों ने उस भक्ति भाव को गुरु-चेले का रूप दे दिया। सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार अब विभिन्न कालों में बदलते हुए इन भक्ति भावों का प्रचलन नहीं चलेगा क्योंकि सतयुग में सम अवस्था होती है। अतः आवश्यकता है परस्पर सजन-भाव का व्यवहार करते हुए, अन्दरूनी व बैहरूनी दोनों वृत्तियों में अफुर बने रहने की। इससे अंतःकरण रूपी दर्पण स्वच्छ हो जाएगा व अपनी असलियत का बोध हो जाएगा।

इसी संदर्भ में आओ अब क्रमशः इन-भक्ति भावों को सविस्तार क्रमशः जानते हैं।

सेवक-स्वामी

जानो स्वामी वो होता है जिसे हर वस्तु पर सब प्रकार के और पूरे अधिकार प्राप्त होते हैं यानि परमात्मा। सेवक वह होता है जिसके पास अपना कुछ न हो व जो स्वामी द्वारा प्रदत्त कार्य की सिद्धि से प्राप्त होने वाले फल पर अपना आधिपत्य नहीं जमाता। वह तो सब कुछ परमात्मा के हुक्म अनुसार, उसी के निमित्त लगाने हेतु सदा तत्पर रहता है व इस हेतु तन-मन-धन कुर्बान करने से भी नहीं घबराता। इस प्रकार वह सेवक होने के धर्म पर निष्कामता से बना रहता है। ऐसे निष्काम सेवकों की रक्षा परमात्मा आप करते हैं व वे ही उसे कार्य सिद्धि की हिम्मत का पुरुषार्थ बख़्शते हैं। त्रेता

में प्रचलित सजन श्री शहनशाह हनुमान जी का भक्तिभाव इस उच्च कोटि के भक्तिभाव का सर्वश्रेष्ठ उदाहरण है, जिन्होंने अन्दरूनी वृत्ति में समभाव की ताकत से व बैहरूनी वृत्ति में समदर्शिता की भावना से युक्त होकर, सेवक धर्म की मर्यादा का निर्भयता व बहादुरी से पालन करते हुए, निष्काम भाव से परमात्मा के हर हुक्म को यानि मुश्किल से मुश्किल कार्य को बुद्धिमत्ता और पूर्ण श्रद्धा व विश्वास से कुशलतापूर्वक सिद्ध कर दिखलाया और अमरपद को प्राप्त हुए।

परन्तु समय तबदील होने के साथ-साथ सेवक-स्वामी के भक्तिभाव का अर्थ भी परिवर्तित हो गया। अधिकतर लोगों के हृदयों में समभाव का स्थान द्वि-भाव ने ले लिया। नित्य के स्थान पर निमित्त को व ज्ञान के स्थान पर ज्ञानी को महत्त्व दिया जाने लगा।

फलतः जो श्रेष्ठ थे यानि जिन्हें ऋषि-मुनि, सन्यासी व धर्माचार्यों की उपाधि प्राप्त थी उनमें से कई अहंकारी मिथ्या ज्ञान के प्रदर्शन के कारण स्वामी बन गए और जो उनकी सेवा व खिदमत करते थे वे सेवक कहलाए। इस पद्धति के कारण वड-छोट, मान-अपमान आदि का कामनायुक्त भाव पनपने लगा और स्वतन्त्र भक्ति के स्थान पर बंधनमान करने वाली भक्ति यथा श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पाद सेवन, अर्चन, वन्दन, दास्य, सख्य और आत्मनिवेदन के रूप में प्रचलित हो गयी। यहाँ से कुदरती वेद-विदित सत्य ज्ञान के लुप्त होने का सिलसिला आरम्भ हुआ जिसके प्रभाववश इन्सानों के लिए सन्तोष, धैर्य, सत्य-धर्म, एकता व एक अवस्था में बने रहना कठिन हो गया और द्वैतवाद यानि ब्रह्म और

आत्मा/जीवात्मा में अन्तर मानने का भेद-भाव वाला सिद्धान्त प्रचलित हो गया। जैसे ही इस सिद्धान्त के अनुयायी बढ़ने लगे तो त्रेता युग, द्वापर युग में परिवर्तित हो गया और भक्त-भगवान के रूप में भक्ति-भाव का चलन आरम्भ हुआ।

आइए अब भक्त-भगवान के भक्ति-भाव के रूप को समझते हैं:-

भगवान अर्थात् परमात्मा का कोई रूप या अवतार यानि महिमायुक्त पुरुष जो ऐश्वर्य आदि से युक्त हो। परमात्मा या किसी अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति के प्रति श्रद्धा तथा अनुराग रखने वाला भक्त कहलाता है। स्पष्ट है कि यह भक्ति-भाव भी द्वि-भाव युक्त होता है और इसके अंतर्गत भी सर्गुण रूप में ईश्वर के रूप, श्रृंगार व सौन्दर्य की महिमा गाकर उसके रंग-रास का वर्णन किया जाता है। इस प्रकार यह भक्ति-भाव निज असलियत व्यक्तित्व से हट, किसी के आचरण आदि का अनुकरण कर, उसी का अनुयायी बनने की बात है।

इस भक्ति-भाव के अंतर्गत भी छोटे-बड़े, मान-अपमान, तेरी-मेरी इत्यादि के भावों को बढ़ावा मिलता है। इससे चित्त की शुद्धता भंग होने व ख़्याल में नकारात्मकता पनपने का सिलसिला आरम्भ हो जाता है। इन्सान स्वार्थपर हो जाते हैं जिससे मन को साधे रखना यानि उस पर अकुंश रखना कठिन हो जाता है और ध्यान अस्थिर हो जाता है। ऐसा होने पर मनुष्यत्व में बने रहना कठिन हो जाता है और मन में दुराचारिता वाले भाव घर करने लगते हैं। यही भाव संकल्प के झुखने व इन्सानों के रोने के हेतु होते हैं। इसी कारण

मानव के कुकर्म-अधर्म के रास्ते पर अग्रसर होने का सदा भय बना रहता है। इस भक्तिभाव के अन्तर्गत ध्यान-साधना द्वारा निष्काम रास्ते पर बने रहना कठिन हो जाता है।

तात्पर्य यह है कि निष्कामता का भाव छूटने से इन्सान का सन्तोष व धैर्य बल सम अवस्था में नहीं बना रह पाता और उसके लिए सच्चाई-धर्म के रास्ते पर यथा बने रहते हुए परोपकार प्रवृत्ति में ढलना कठिन हो जाता है। इससे इन्सान की पकड़ से वह भक्ति मार्ग यानि मोक्ष प्राप्ति का वह साधना पथ जिसमें परमात्मा के प्रति भक्ति की प्रधानता हो वह छूट जाता है। परिणामस्वरूप देवालयों का निर्माण शुरू होता है। अनेक संस्कृतियाँ बनती हैं।

यहाँ तक कि वेदों के भी भिन्न-भिन्न प्रकार से अर्थ निकाले जाते हैं। यह असमंजसमय स्थिति होती है जिसके फलस्वरूप पक्षपात व निरर्थक बातें शुरू हो जाती हैं। ऐसा होने पर मानवों का भिन्न-भिन्न प्रकार के मनगढ़ंत भक्ति मार्गों पर अग्रसर होना स्वाभाविक हो जाता है। इससे विरोधाभास पनपता है और इन्सान द्वेष में अन्धा हो, दो स्वभावों में यानि अन्दर से कुछ और बाहर से कुछ और प्रदर्शित करता है। यह द्वि-द्वेष ही परस्पर नफ़रत, लड़ाई-झगड़ों व युद्धों का कारण बनता है और इन्सान कई सत्ताओं द्वारा शासित होने पर दुविधा को प्राप्त होता है। निःसंदेह यह तीनों गुणों यानि सत्व, रज और तम में से दो यथा राजसिक व तामसिक की प्रधानता से युक्त होने की अवस्था होती है। इसी अवस्था से युक्त होने के कारण मानव मोह रूपी अज्ञान में फँस मनुष्यता विपरीत कई प्रकारों का व्यवहार करता है। याद रखो जब

ऐसे इन्सानों की गणना बढ़ जाती है तो युग परिवर्त्तन हो जाता है और आगमन होता है कलियुग का। कलियुग में गुरु-चेले के बन्धनमान भक्ति-भाव का चलन आरम्भ हो जाता है।

आओ अब इस गुरु-चेले के भक्तिभाव के बारे में जानते हैं:-

जानो गुरु का अर्थ है कोई मन्त्र या दीक्षा देने वाला पूज्य, प्रतिष्ठित व्यक्ति या अध्यापक। दीक्षा लेने वाला चेला या अनुयायी, गुरु का दृढ़ समर्थक होता है। गुरु-चेले की प्रथा के अंतर्गत धार्मिक गुरुओं द्वारा शिष्य बनाने की अपनी-अपनी पद्धति होती है व गुरुओं द्वारा शिष्यों को अपने-अपने मतों की ओर खींचने का आकर्षण कई तरीकों से चलता है। इस पद्धति अनुसार अधिकतर गुरु दूसरों की कमाई पर निर्भर रहते हैं व इस हेतु उनमें चेलों को अपने पास बुलाकर या फिर उनके पास जाकर भेंट आदि लेने की रीति या प्रथा चलती है।

इस पद्धति को अपनाने वाले अधिकतर चेलों का सिद्धान्त, गुरु और उसकी हर आज्ञा को, (चाहे वह धर्मानुकूल हो या अधर्मपूर्ण) सबसे बड़ा मानना होता है। इससे कई ढोंगी गुरुओं द्वारा शिष्यों को मूर्ख बनाकर अपना स्वार्थ पूरा करने की प्रवृत्ति पनपती है। यही नहीं कई गुरु तो कलुकाल के धोखे में अपनी पूजा-मानता तक करा, अपने चेलों को मूर्ख बनाते हैं। तात्पर्य यह है कि इन उस्तादी गुरुओं का सत्य ठीक ढंग से समझना कठिन होता है। यह चलन अपने आप में परमात्मा से विमुखता और शरीरधारियों के मोह बन्धन में

फँस, अज्ञानता के प्रभाव से बोझिल होने की बात होती है। इसी प्रथा का लाभ उठा, आज इस जगत में, गुरु होने का आडम्बर करने वाले अनेक ढोंगी या धूर्त्त सिर उठा हरकत में आ चुके हैं। स्पष्ट है कि चेले के रूप में इस बँधनमान भक्ति-भाव के जाल में फँसने वाले इन्सान गुरुओं का प्रभुत्व स्वीकार, अपनी स्वतन्त्रता व आत्मविश्वास खो बैठते हैं। इस प्रकार आत्मीयता का भाव छूट जाने के कारण वे इन्सान इतने कमज़ोर व आश्रित हो जाते हैं कि इस बन्धन की बेड़ी को तोड़ना फिर उनके लिए कठिन हो जाता है।

यहाँ समझने की बात यह है कि वास्तव में इन गुरुओं के पास अपना कुछ नहीं होता। वे तो कुदरती चार वेद व छः शास्त्रों में से, जो भी, जितना भी, जिस तरह से भी, समझ आता है, उस ज्ञान के खुद मालिक बन, अपनी मनमत अनुसार उपदेश देते हुए पूज्य व्यक्तियों की गणना में बने रहने की चेष्टा करते हैं। इस तरह सम्पूर्ण मानव जाति अनेक धर्मों में बँट जाती है और मंदिर, मस्जिद, समाज, गुरुद्वारों आदि का निर्माण होता है। इस तरह अनन्त सुख से वंचित मानव, रंग मस्त या राग मस्त हो, क्षणभंगुर सुख में उलझने लगते हैं। इसी कारण पृथ्वी अत्याचार से भर जाती है।

यही आज की दुःखदाई अत्यन्त कठिन परिस्थिति है जोकि यह सूचित करती है कि इतनी शैक्षणिक व्यवस्था, शासन व्यवस्था तथा धार्मिक नेताओं आदि के होते हुए भी मानवों के लिए इंसानियत में बने रहना दुष्कर हो गया है और परस्पर

बढ़ती हुई स्वार्थपरता के कारण मानवीय नैतिक मूल्यों का निरंतर ह्रास होता जा रहा है। यही कारण है, व्यक्ति-परिवार-समाज व देश एक-दूसरे से अलग-थलग होते जा रहे हैं और सम्पूर्ण विश्व अत्यन्त विकट यानि संकटमयी स्थिति में है।

इस तथ्य से यह स्पष्ट होता है कि अत्याचारों से बोझिल मानव ही, शांति की प्राप्ति हेतु, आत्मिक उन्नति करने के लिए, भिन्न-भिन्न प्रकार के बाल अवस्था के भक्ति-भाव जैसे सेवक-स्वामी, भक्त-भगवान व गुरु-चेले जैसे भक्तिभाव अपनाते हैं जिनमें भौतिक सुख-सुविधाएँ छोड़ना कठिन हो जाता है। इन्हीं भक्ति-भावों में उलझा इन्सान यह भूल जाता है कि आत्मा ईश्वर के प्रतिनिधि के रूप में कुछ कर्त्तव्य और उत्तरदायित्व निभाने हेतु शरीर को धारण करती है और उन्हें सिद्ध करने के लिए शरीर से काम लेती है।

इस प्रकार निर्धारित कर्त्तव्य का पालन करने हेतु प्रत्येक मानव का उत्तरदायित्व पूर्वतः निश्चित होता है। जो इस उत्तरदायित्व को ठीक से नहीं निभाता जल्दी ही उसकी शिनाख्त यानि पहचान हो जाती है और उसके विरूद्ध कर्मगति के रूप में क्रिया होती है। क्रिया का परिणाम प्रतिक्रिया होती है। फलस्वरूप विरोधाभास पनपता है और कर्त्तव्यविमूढ़ इन्सान छल-कपट करते हुए स्वार्थ के अवलड़े रास्ते पर चढ़ जाता है।

अतः याद रखो कि इंसान के लिए कर्मभूमि या गृहस्थ आश्रम से मुख मोड़ एकांत में जाकर बैठने का कोई विधान नहीं है। इसके लिए इसी संसार में बने रहते हुए अपनी

योग्यता का परिचय देना होता है और इस परीक्षा में फ़र्स्ट का नतीजा दिखाने के लिए अपना पूरा समय देना होता है व पूरा ध्यान रखना होता है। तात्पर्य यह है कि ईश्वर के प्रतिनिधि बनकर, उस ईश्वर का हुक्म मानते हुए, अपनी क्षमता व सामर्थ्य का परिचय देना होता है तभी परमेश्वर परमपद जोकि जीवन का सर्वोच्च लक्ष्य है उस पर आसीन करते हैं।

इसी परिप्रेक्ष्य में सजनो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार, अगर हम इन बन्धनमान भक्ति भावों से मुक्त रह युवावस्था के भक्ति भाव के चलन में ढलना चाहते हैं तो हमें शब्द ब्रह्म विचार पकड़ना होगा। तभी हम अपनी बुद्धि को मनुराज से स्वतन्त्र कर जगत में ऐसे ठगने वाले अन्यायकारियों के चंगुल से बच, सतयुग वासियों की तरह न्यायसंगत, स्वाभिमान युक्त, संकल्प रहित, जीवन जीने योग्य बन सकते हैं यानि सत्यता अनुरूप जीवनयापन करते हुए, सत्यनिष्ठ व धर्मपरायण कहला सकते हैं।

याद रखो, हमें अपनी ही नेक कमाई खाने योग्य बनना है यानि दूसरों के सुन्दर जीवन चरित्र पढ़ने में ही रत नहीं रहना अपितु उनसे प्रेरणा लेकर सत्कर्म द्वारा अपने जीवन चरित्र को उज्ज्वल व पावन बनाना है। याद रखो तभी हम हर प्रकार के बन्धन से मुक्त, अपनी स्वतन्त्र अवस्था में यथा बने रह सकते हैं।

इस सन्दर्भ में बाल अवस्था के भक्ति भावों को छोड़, युवावस्था के भक्ति भाव अपनाने की आवश्यकता को समझाते हुए सजन श्री शहनशाह महाबीर जी कह रहे हैं कि:-

'गुरु है बन्धन, चेला है बन्धन,
ओ बन्धन है जे पख परिवार
इस बन्धन तों छुटना चाहो,
सजनों शब्द पकड़ो ब्रह्म विचार'

सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में वर्णित इस संदेश के अनुसार हमें समझदारी से अपने स्वरूप में बने रहना है व 'विचार ईश्वर है अपना आप' के तथ्य अनुसार सतयुग का चलन अपनाना है। इसके अतिरिक्त हमें यह भी याद रखना है कि अपने कर्त्तव्य निभाने के लिए इस भूमण्डल में जो अधिकार और साधन कुदरत ने हमें प्रदान किए हैं उनका प्रयोग हमें मनमत अनुसार नहीं अपितु परमेश्वर के हुक्म अनुसार करना है यानि विभिन्न सांसारिक सम्बन्धों के साथ विचरते हुए वह चलन अपनाना है जो ईश्वर को पसंद है। ऐसा इसलिए कह रहे हैं क्योंकि किसी भी दुनियावी सम्बन्ध की अपेक्षा ईश्वर ही हमारे सबसे अधिक निकट है व एकमात्र उसी द्वारा दर्शाया चलन ही सत्य अनुकूल होने के कारण सर्वश्रेष्ठ है।

निश्चित ही उसी एक द्वारा बताए सर्वोत्तम चलन का अनुकरण कर सब वड-छोट, अपने-पराए, अमीरी-गरीबी जैसे भेदभाव से उबर एकरस एकता, एक अवस्था में बने रह, आनन्दमय जीवन जी सकेंगे और विजयी हो सकेंगे। अतः ऐसा सुनिश्चित कर हमने इस धरती की व्यवस्था को इतना उत्तम बनाना है जितना ईश्वर देखना चाहते हैं। इसके लिए कोई भी अनुचित चलन अपनाकर या दर्शा कर ईश्वर के प्रति किसी भी प्रकार का विद्रोह नहीं करना और

ईश्वर की आज्ञा व प्रसन्नता प्राप्त करने हेतु उससे निकटता बनाए रखनी है। याद रखो उस ईश्वर के संग बने रहकर ही उसके हुक्म को समझ सकोगे व उसका पालन करते हुए आनन्दमय बने रह पाओगे। तभी तो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है:-

जिवें प्रसन्न राहवे ओ मेरा साजना,
ओ साजन नूं प्रसन्न रखना
ओ साजन नूं प्रसन्न रखना नी ओ
हृदय में राहवे एहो उमंग, हृदय में राहवे एहो उमंग,
के साजन नूं प्रसन्न रखना,
ओ साजन नूं प्रसन्न रखना नी ओ

इसी परिप्रेक्ष्य में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार सजन श्री शहनशाह हनुमान जी के वचनों की पालना करने वाला कोई विरला ही उनके द्वारे की चाल पकड़ सकता है। इस कठिन चाल के अनुसार नीतियों का वर्त्त-वर्त्ताव करते हुए मनुष्यत्व की मर्यादा में बने रहना होता है जो अपने आप में कोई मुश्किल बात नहीं है। इसमें केवल समभाव-समदृष्टि अनुरूप सबको बराबर मानते हुए, निष्काम भाव से एकरस, समदर्शिता अनुरूप व्यवहार करना होता है। युग पुरुषों का आदर्श जीवन चरित्र इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। याद रखो नासमझी में आकर इसके विपरीत चलन विकार-वृत्तियों में फँसने या उनके प्रभावों को आजीवन झुखते-रोते हुए भोगने की बात है। इसीलिए हमारे लिए बनता है कि हम इस द्वारे के निर्धारित नीति-नियमों को ध्यान से समझें व उनकी

पालना करने में ही अपना हित मानें। इसलिए सबके सांझे सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ की वाणी को समझो और वड-छोट के प्रभाव से उठ समर्पित भाव से सतवस्तु के उसूलों को पकड़, सतवस्तु के वचन इस्तेमाल करो और केवल सत्य से ही प्यार रखो। ऐसा सुनिश्चित करने पर मन का खोट साफ हो जाएगा और हृदय रूपी सचखण्ड में रूप, रंग, रेखा रहित अपने नित्य स्वरूप का बोध होते ही संयोग-वियोग, रोग-सोग, ख़ुशी-ग़मी आदि में भी सम अवस्था में बने रह पाओगे। इस प्रकार जगत में विचरते हुए जगत से न्यारे बने रहोगे व सर्व सर्वज्ञ उस बेअन्त ईश्वर परब्रह्म परमेश्वर का आभास कर पाओगे। इस अवस्था में स्थिर बने रहने हेतु नितोनित आत्मनियन्त्रण द्वारा अपने स्वभावों पर पकड़ रखनी आवश्यक है।

इसलिएः-

'एक दा करो अजपा जाप,
फिर ब्रह्म शब्द दा पाओ प्रकाश,
एहो सजनों पकड़ो इतिहास,
फिर ब्रह्म स्वरूप है अपना आप' ।।

तो क्या आप सब अपने ब्रह्म स्वरूप में बने रहना चाहते हो?

हाँ जी

तो आओ सब मिलकर करबद्ध हो परम कृपालु परमेश्वर से प्रार्थना करें-

हे परमेश्वर ! हम जानते हैं कि आप कृपा के सागर हो। तभी तो आप हमें ध्यान-कक्ष अर्थात् समभाव-समदृष्टि के

स्कूल से आत्मिक ज्ञान प्रदान कर अपने शरीर व भौतिक जगत पर शासन करने के योग्य बना रहे हैं। हे ईश्वर ! इस प्रयत्न द्वारा हम जान गए हैं कि आध्यात्मिकता व सांसारिकता के मार्ग अलग-अलग हैं। आध्यात्मिकता छूटने के कारण ही यानि आत्मिक प्रकाश से वंचित रहने के कारण ही हम भौतिकता में डूब जाते हैं व हर कदम पर निराशा प्राप्त करते हैं। हे ईश्वर ! इस निराशा से उबारने हेतु ही आप हमें यह सत्य समझा रहे हैं कि आध्यात्मिक व्यवस्था का हमारी सम्पूर्ण जीवन व्यवस्था से सम्बन्ध है अर्थात् आत्मा और शरीर दोनों की माँगें अलग-अलग होते हुए भी इनका परस्पर योग स्थापित कर हम प्रतिरोधी चलन से अपना बचाव कर सकते हैं। अतः हे बख़्शनहार ! आप हमें सुमति बख़्शो ताकि हम भ्रमितबुद्धि समभाव-समदृष्टि की युक्ति को अपना कर, पूरी श्रद्धा और निष्ठा से आपके हुक्म का पालन करने के योग्य बन सकें और फ़र्स्ट का नतीजा दिखा सकें।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरान्त सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियन्त्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 21 जून 2015 का सबक

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्म-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

अभी तक सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार हमने जाना कि जो जो कुदरती ग्रन्थ और पुस्तकें युग युग में आ रही हैं उन ग्रन्थों में दो भक्तियाँ लिखी हुई हैं। एक तो है बाल अवस्था की युक्ति और भक्ति और दूसरी है युवा-अवस्था की युक्ति और भक्ति। इन दोनों भक्तियों की कोई विरला सजन पहचान कर सकता है। सजनों सुनो, बाल अवस्था की भक्ति है नाम चलाना और ध्यान लगाना। यह बुद्धि थोड़ी अनजानपने के कारण नचनी टपनी होती है यानि चंचल होती है। सजनों सुनो, युवा अवस्था की भक्ति है, समभाव

समदृष्टि की युक्ति। इस में एक तो बल की प्राप्ति होती है और दूसरा शक्ति ताकतवर हो जाती है। फलस्वरूप बुद्धि स्थिर हो जाती है, चित्त प्रसन्न रहता है और इन्सान में आत्मविश्वास पनपता है।

इसी सन्दर्भ में आगे बढ़ते हुए हम समझते हैं कि बाल अवस्था के भक्ति भाव अनुसार परमात्मा/इष्टदेव/गुरु आदि के प्रति श्रद्धा तथा अनुराग यानि प्रेम या आसक्ति रखने वाला भक्त जो कामनायुक्त होता है यानि सदा कुछ पाने की प्रार्थना करता है वह भक्ति-भाव की मुख्य धारा जैसे युवावस्था की भक्ति यानि समभाव-समदृष्टि से विभक्त हो जाता है। इस विभाजन द्वारा वह स्वार्थपर व्यक्ति मन में द्वि-भाव के प्रभाव से अन्धा, भक्ति के यथार्थ भाव का कोई अंश लेकर, अलग रास्ते पर कई तरीकों से अग्रसर हो जाता है या भक्ति-भाव को खंडित कर किसी अन्य मनगढ़ंत भक्ति-भाव का चलन अपनाना व औरों से अपनवाना शुरू कर देता है।

इसी कारण समभाव-समदृष्टि उसकी पकड़ से छूट जाती है और उसके लिए एक भाव होकर मिलजुल कर एकता से रहना व एकजुट होकर चलना दुष्कर हो जाता है। इस संदर्भ में सेवक-स्वामी, भक्त-भगवान, गुरु-चेला का चलन हमारे सामने ही है। इससे ऊपर उठ हमें सतयुग के चलन के अनुसार एकता व एक अवस्था के हेतु आत्मभाव पर सत्यता से स्थिर रहना है। यह सदा आत्मतुष्ट रहने की व जगत में निर्वैर, निर्लेप, निर्दोष, निर्भय व नित्य भाव से जीवन व्यतीत करने के उपरान्त, अपनी अजरता-अमरता व परमपद को प्राप्त होने की बात है। यहाँ अपनी जाँचना करो

कि क्या हम निर्वैर, निर्लेप, निर्दोष, निर्भय व नित्य भाव पर मज़बूत बने रह पाते हैं?

नहीं जी।

तो समझ लो कि हम बाल अवस्था के भक्ति-भाव में फँसे होने के कारण, राग-द्वेष व मान-अपमान में जकड़े हुए हैं। ऐसे में परमपद कैसे प्राप्त कर सकते हैं?

मौन।

जान लो कि बाल अवस्था के मनगढ़ंत भक्ति-भाव अपनाने वाले व्यक्ति के अन्दर अनायास ही सांसारिक विषयों के प्रति आसक्ति यानि राग, मोह, ममता आदि के भाव प्रधानता से घर कर जाते हैं और परस्पर झूठ, चोरी, ठगी व वैर-विरोध का वातावरण पनपता है। इस प्रकार किसी के प्रति आसक्ति वाले इन भक्ति-भावों से स्वार्थपरता पनपती है। फलतः लेने की इच्छा के कारण, मानव मन में अज्ञान धारणा के कारण, संकल्पों के उठने का सिलसिला आरम्भ होता है।

इससे मानव की सन्तोष, धैर्य रूपी शक्ति कमज़ोर पड़ती है। ऐसा होते ही उसके स्वभावों का टैम्प्रेचर सम नहीं रहता। इस प्रकार वह भ्रमित बुद्धि इन्सान सत्य धारणा से गिरता है और धर्म उसकी पकड़ से छूट जाता है। यहाँ तक कि वह झूठ व अधर्म का रास्ता अपनाकर, कुछ भी प्राप्त करने के लिए छीना-झपटी व अनेक प्रकार के अनर्थ करने से भी नहीं सकुचाता। कई दफा तो अपने साथ दूसरों को भी ले डूबता है। ऐसे शक्तिविहीन मानवों को अपने अधिकार में लेकर यानि बहकाकर मानव रचित भक्ति-भावों से जोड़ना या

तोड़ना आसान हो जाता है। याद रखो ऐसा कमज़ोर व्यक्ति कभी भी अनुराग रहित अवस्था को प्राप्त कर सन्तोष, धैर्य, सच्चाई व धर्म पर किसी प्रकार भी नहीं बना रह सकता। यहाँ सब आत्मनिरीक्षण करो कि इस प्रयत्न द्वारा क्या हम सवलड़े रास्ते पर अग्रसर हो, अक्लमंद बनने जा रहे हैं या कवलड़े यानि ठोकरों भरे रास्ते पर अग्रसर हो बेअक्ल हो रहे हैं?

मौन।

सबकी चुप्पी से सिद्ध होता है कि सभी कठिन रास्ते पर बढ़ रहे हैं। तो क्या यह शारीरिक-मानसिक रूप से स्वस्थ होने की निशानी है या अस्वस्थता की?

अस्वस्थता की।

अगर सभी यह जानते हो तो फिर अपने जीवन के प्रति सुचेत क्यों नहीं रहते और जगत में विचरते हुए मन को ईश्वर में लीन क्यों नहीं रखते? क्यों कामनायुक्त होकर शारीरिक गुरुओं के पीछे भागते फिरते हो। इस परिप्रेक्ष्य में जान लो कि माँगने वाला, देने की सामर्थ्य जुटा, एक विरक्त इन्सान की तरह जीवन नहीं जी सकता। जबकि इसके विपरीत परोपकार प्रवृत्ति इन्सान किसी वस्तु से अपना अधिकार पूरी तरह से हटा, सदा के लिए किसी को उसका स्वामी बनाने में ही गर्व समझता है। इसीलिए वह इस संसार में सहजता से ईश्वर के निमित्त समर्पित भाव से सब कुछ कर पाने में सफल हो जाता है। इसी में ही उसको जीवन के आनन्द की अनुभूति होती है।

हमें इस सत्य को गहराई से समझना होगा और वेद-शास्त्रों व सब धर्म-ग्रन्थों में जिस युवावस्था के भक्ति-भाव का युक्तिसंगत वर्णन है, उसे मनुष्य की अनिवार्य आवश्यकता मान, एकरसता से अपनाना होगा। इस संदर्भ में मत भूलो कि भक्ति-शक्ति को धारण करने वाला ब्रह्मरूप मानव ही ईश्वर के हुक्म को जान, पहचान व उसकी पालना करने का पराक्रम दिखाने के योग्य होता है। युग-युग में रचित शास्त्रों में अनेक श्रेष्ठ भक्तों का वर्णन इसकी मिसाल है व हमारे लिए प्रेरणा का स्रोत है। इसलिए हमारे लिए भी बनता है कि हम सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ से प्राप्त होने वाले, जीवन उपयोगी ईश्वरीय हुक्म रूपी विचारों को ध्यान से सुनें, मानें व बिना वाद-विवाद के प्रवान करते हुए उन्हीं अनुसार सदाचार युक्त व्यवहार में बने रहने हेतु ध्यान से आत्मनियन्त्रण रखें।

स्मरण रहे समभाव-समदृष्टि की युक्ति को अपनाकर ही, विभाजित मानव जाति, एकता के सूत्र में बँध, संगठित रूप से, शक्तिशाली बन सकती है। इस संदर्भ में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में वर्णित इस महत्त्वपूर्ण संदेश को मत भूलो कि शक्ति सदा विचारवान के साथ ही बनी रहती है और अविचारी अपनी प्राप्त शक्ति भी खो बैठता है यानि जीवन हार बैठता है। इस तरह उसका एक श्रेष्ठ इन्सान बने रहने के प्रति सारा यत्न विफल हो जाता है। अतः शक्ति धारण करने के लिए सब के सब अपने मन से कलुकाल के भाव-स्वभावों को जड़ से उखाड़, बाहर निकाल फेंको और धर्म पर बने रहते हुए, फर्ज अदा की तरफ से जीत पा, यम की

सजा से बच जाओ। इस प्रकार सत्य को धार, वैसा वर्त्त-वर्त्ताव करते हुए, सदा मानव-धर्म पर डटे रहो व परमार्थ बन निष्कामता से परोपकार कमाओ। इस संदर्भ मे भक्ति-शक्ति को धारने हेतु याद रखो :-

धर्म मत हारना रे, धर्म के ऊपर सजनों तन-मन धन सब वारना रे।

इस संदेश को ईश्वर का हुक्म मानकर सदा यादगीरी में रखना है और सत्यता से तद्नुकूल आचरण कर उस परमपिता के सपुत्र बनकर दिखाना हैं। क्या सब ऐसा करने के लिए तैयार हो?

हाँ जी।

तो हकीकत में उस परमेश्वर साजन को दिल से अपना पिता मान लो और उसके संग बने रहो यानि अपने मन को उसमें लीन रखो। यही संसार में उत्तम व सही ढंग से जीवन जीने का तरीका है। याद रखो जो इस प्रकार अपने परमपिता के साथ योग बनाए रख पाता है उसी को अपना यथार्थ समझ में आता है। अतः किसी भी आसक्ति व मोहबन्धन के कारण इस सत्य के प्रति कमज़ोर मत पड़ो।

निःसंदेह इसी मानव-धर्म पर सुदृढ़ बने रहने के लिए, जीवन काल के चार आश्रमों में से, ब्रह्मचर्य आश्रम के अंतर्गत ही, आत्मिक ज्ञान अनुसार, कंचन भक्ति द्वारा कंचनता में बने रहने का विधान है ताकि हमारा ख़्याल अपने सच्चे घर में ठहरा रहे। लालन-पालन के दौरान यही भक्ति-भाव बच्चों के अन्दर भरना होता है ताकि वे बड़े होने तक मनुष्यत्व अनुरूप

नैतिकता में ढल जाएं और अच्छे इन्सान के रूप में माता-पिता की शान बढ़ाएँ।

इस सन्दर्भ में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में भक्ति की महत्ता बताते हुए कहा गया है कि 'भक्ति चरण हिन आपदे कोई विरला लवे पछान' अर्थात् ईश्वर की समीपता या आश्रय में बने रहना ही सदा सुरत के शब्द गुरु के चरणों में बने रहने का प्रतीक होता है। इसी यत्न द्वारा ही इन्सान के लिए सन्तोष-धैर्य को धारण कर मानवीय ज्ञान व गुणों को प्राप्त करना व उन पर बने रहना सहज हो सकता है और उसकी कंचनता बनी रह सकती है।

इसी तरह ही वह अपने धर्म रूप मूल स्वाभाविक गुण पर सुदृढ़ता से बने रह, एक उपासक की तरह, नैतिक व्यवस्था को भौतिक व्यवस्था से उच्चतर मानते हुए, उन्हीं विश्वासों के आधार पर आचार-व्यवहार अपना सकता है। फलतः वह इन्द्रियनिग्रही निष्काम भाव से जगत में विचरते हुए परोपकार प्रवृत्ति अपना सकता है।

अतः इस उत्तम अवस्था को प्राप्त करने के लिए आवश्यक है कि हम अफुरता से अपने मन को ईश्वर में लीन रखना सुनिश्चित करें और भक्ति के बल व शक्ति के चानणे द्वारा तेजस्वी व प्रतापी बन अपने मन में उठने वाले दूषित नकारात्मक भावों पर विजय प्राप्त कर हृदय प्रतिबिम्बित सतवस्तु को पहचान जाएँ। यही होगा हृदय में सतवस्तु का राज होने का प्रतीक यानि इलाही रंग में रंगने की बात।

तभी तो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है।

सतवस्तु दा राज हुण हो गया
वेखसी कुल जहान, सतवस्तु दा राज हुण हो गया

याद रखो जो भी इस संसार सागर से पार उतर, अपने स्थान को पाना चाहता है, उसे निश्चित रूप से भक्ति-शक्ति धारण कर, दिव्य-दृष्टि का सबक ले त्रिकालदर्शी बनना होगा। इस तरह उस ईश्वर के साथ निगाह जोड़, सुरत को सांसारिकता से पलटा खिला, निष्काम रास्ते पर बने रहते हुए, मृतलोक को जीतना होगा। यह होगा संसार में विचरते हुए निर्लिप्त बने रहना और सांसारिक भँवर में फँसने से बचे रहना यानि नित्य सत्य को यथा प्रकाशित कर अमरता को प्राप्त होना। इस सन्दर्भ में जो इस परम पुरुषार्थ द्वारा अपनी शक्ति को पहचान लेगा उसे किसी का डर नहीं रहेगा अर्थात् वह जगत में निषंग होकर विचर सकेगा और भक्ति-शक्ति धारण कर सर्गुण-निर्गुण में विचरता हुआ सम अवस्था में बना रहेगा।

सारतः हम कह सकते हैं कि भक्ति-शक्ति को धारण कर इन्सान जगत में रहते हुए भी उससे निर्लेप रह सकता है। इस तरह वह फिर सर्गुण-निर्गुण में अफुरता से स्थिर बने रह, कर्त्ता-अकर्त्ता नाम कहलाता है और रूप, रंग, रेखा, रहित अपने प्रकाश को पाकर परमधाम का नज़ारा देख पाता है। ऐसा होने पर नौजवान युवावस्था आ जाती है। इस अवस्था को प्राप्त होने पर किसी प्रकार के जप-तप व भजन-बन्दगी की आवश्यकता नहीं रहती। खुला प्रकाश होता है

और एक निगाह, एक दृष्टि द्वारा जनचर-बनचर, जड़-चेतन में ईश्वर की सर्वव्यापकता का दर्शन कर, जगत हितकारी बनना सहज हो जाता है। याद रखो यह है सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में वर्णित विचार शब्द को पकड़ने की महत्ता को समझना। जिसने इस महत्ता को समझ विचार शब्द को पकड़ लिया उस की दुनियां में शान बढ़ती है। अतः शब्द विचारों को प्राप्त करने के योग्य बनो क्योंकि जो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार शब्द विचार यहाँ से बताए जा रहे हैं उन शब्द विचारों को पकड़, हम हर रोग व विकृति से छुटकारा पा, अपने संकट हरने व सुख-शान्ति प्राप्त करने के लिए, अपने मन को वश में रख सकते हैं।

याद रखो ऐसा काबिल इन्सान बनने के लिए हमें छल-कपट, झूठ, चतुराइयाँ, निंदा-चोरी आदि जैसे स्वभावों को त्यागना होगा व सजन श्री शहनशाह हनुमान जी के वचनों की पालना करते हुए एक संतोषी व धैर्यवान व्यक्ति की तरह सच्चाई-धर्म के रास्ते पर सम्भल कर बने रहते हुए जीवन का हर कार्य प्रसन्नतापूर्वक, निष्काम-भाव से करने के स्वभाव में ढलना व मज़बूती से विश्राम अवस्था में बने रहना होगा। निःसंदेह तभी हम विचार शब्द को धारण कर, सहनशक्ति द्वारा गदा रूपी शांति-शक्ति के हथियार को हाथ में धारण करने के अधिकारी बन पाएंगे और इन्सानियत में ढल, घर सतयुग बना आत्मपद की प्राप्ति कर लेंगे। याद रखो ऐसा होने पर जीवन में कभी भी रोने का दिन नहीं आएगा और हम अगले वर्ष चैत्र के यज्ञ पर नाम-ध्यान, भक्ति-शक्ति व प्रेम का शगुन ले अफुरता से अपना गृहकार्य समयबद्ध सम्पन्न कर फ़र्स्ट का नतीजा दिखा पाएंगे।

अंततः सजनों भक्ति-शक्ति को सही ढंग से धारण करने हेतु, जो भी अब तक इस विषय में, यहाँ से बताया गया है, उसे अपने ही कल्याण का हेतु मानकर, उसके प्रति एकरस यत्नशील बने रहने की आवश्यकता है। इस आवश्यकता पूर्ति द्वारा ही हम निज स्वरूप की पहचान कर, आत्मानन्द को प्राप्त कर जगत में रोशन नाम कहा सकते हैं। इस कार्य सिद्धि हेतु श्री साजन परमेश्वर क्या कह रहे हैं ध्यान से सुनोः-

श्री साजन जी के मुख के शब्द

शहनशाह हनुमान बलवान है, उच्ची ओन्हां दी शान है।
उस दाते दा बेटा ओ रैंहदा क्यों हैरान है उस दाते दा
बेटा ओ रैहंदा क्यों हैरान है।
परउपकारी जिन्हां दा नाम है, परउपकारी जिन्हां दा नाम है।
उस दाते दा बेटा ओ रैहंदा क्यों हैरान है।
उस दाते दा बेटा ओ रैहंदा क्यों हैरान है।
(अब सजन दयालु श्री रामचन्द्र जी कह रहे हैं)
असां संग रहूं तुहाडे, तुसां संग रहो असाडे।
इको रूप कहाने हां, असां संग तुहाडे रैहने हां।
इको रूप कहाने हां, असां संग तुहाडे रैहने हां।
भक्ति जेहड़ा सजन लैंदा है फड़, शक्ति लैंदा धारण कर।
जेहड़ा वचन करे प्रवान, ओहदे कोलों भक्ति बड़ी बलवान।
जेहड़ा वचन करे प्रवान, ओहदे कोलों शक्ति बड़ी महान।
जैदे कोलों शक्ति है ताकतवर, वैरी दुश्मन और बनचर।
उस सजन नूं किसे दा नहीं डर।
जेहड़ा पकड़े अपने आप नूं इन्सान,

ओहदे कोलों भक्ति है बड़ी बलवान।
जेहड़ा पकड़े अपने आप नूं इन्सान,
ओहदे कोलों शक्ति है बड़ी महान।
भक्ति सजन प्रबल फड़,
फिर महाराज जी दा दर्शन कर।
जिन्हां सजनां ला लिया ध्यान,
ओहदी भक्ति है बड़ी बलवान।
जिन्हां सजनां ला लिया ध्यान,
ओहदी शक्ति है बड़ी महान।
समभाव समदृष्टि फड़,
बेखौफ़ा बेख़तरा विचर।
सजन शब्द है बड़ा महान,
जैंदे कोलो भक्ति है बड़ी बलवान।
सजन शब्द है बड़ा महान,
जैंदे कोलो शक्ति है बड़ी महान।
शहनशाह हनुमान बलवान,
उच्ची है जे ओन्हां दी शान।
है अमर ओन्हां दा नाम,
हैन ओ शक्तिवान।
है अमर ओन्हां दा नाम,
हैन ओ शक्तिवान।
जिन्हां शक्ति नूं जान लिया,
जिन्हां शक्ति नूं पहचान लिया।
ओ फिरदे ने मालो माली,
ओ फिरदे ने मालो माली।
खालस सोना खोट न राहवे,
ओ चाल चले निराली।

शब्दः- भक्ति सच धर्म दी कर,
फिर इन्सान नूं मौत दा न रिहा डर।
शक्ति दा हथियार हाथों में फड़,
बेख़ौफा बेख़तरा जगत में विचर।

अंततः सजनों भक्ति-शक्ति पर अब तक हुई बातचीत को सबने समझना है और सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में विदित इस संदेश के अनुसार किसी शरीर या तस्वीर की भक्ति करने के स्थान पर केवल सच-धर्म की भक्ति करनी है। यही समभाव-समदृष्टि की युक्ति हमे सिखलाती है। अंत में इस सन्दर्भ में हम आप से एक प्रश्न पूछना चाहते हैं, क्या पूछें?

हाँ जी।

क्या सत्यता से इसका उत्तर दोगे?

हाँ जी।

क्या आप मरना चाहते हो?

नहीं जी।

यदि यह सत्य है तो क्यों नहीं अभी तक समभाव-समदृष्टि की युक्ति यानि युवावस्था की भक्ति द्वारा समभाव नज़रों में कर, समदर्शिता अनुसार व्यवहार करने व उस पर बने रहने की शक्ति धारण की।

मौन।

आपका मौन ज़ाहिर कर रहा है कि आप मरना तो नहीं

चाहते परन्तु बढ़ तो मरने की तरफ़ ही रहे हो। यह क्या है? क्या मरने से डरते हो?

हाँ जी।

मरने से डरना भी चाहिए क्योंकि मरण के बाद फिर जन्म होता है। जन्म के बाद फिर मरण होता है। इस चक्रव्यूह से स्वतन्त्र वही रह पाता है जो समभाव द्वारा अजरता-अमरता के नित्य भाव में स्थिर व स्थित रह पाता है। वही शक्तिशाली इन्सान निर्वैर, निर्भय, निर्दोष, निर्विकार अवस्था में सदा एकरस बना रह पाता है। अतः इन्सानों यदि मृत्यु से बचना चाहते हो तो अपने आपको उस ओर बढ़ने से रोको और इस बात पर सोते-जागते गहराई से विचार करते हुए आत्मसुधार करो। अन्यथा जीवन की अन्तिम श्वास के समय पछताना पड़ेगा। किसी को भी जीवन में ऐसा पछतावा न हो, इस हेतु आओ उस ईश्वर के आगे सच्चे दिल से प्रार्थना करें:-

हे परमेश्वर ! हम जान गए हैं कि 'ईश्वर है अपना आप प्रकाश व ईश्वर है अजपा जाप।' कदम-कदम पर इसी विचार पर स्थिर बने रहने हेतु, अपने आप को पकड़ते हुए ही हम खालिस सोना हो परोपकारी नाम कहा सकते हैं व मृतलोक पर फ़तह पा सकते हैं। आप के संग बने रहने पर ही हम रोते इन्सान हँस सकते हैं व अफुर अवस्था प्राप्त कर तीन वक्त का अखंड पाठ नियम व नीति अनुसार निर्विघ्न करने में कामयाब हो सकते हैं। हे ईश्वर ! हम जानते हैं कि युवावस्था की प्रबल भक्ति द्वारा ही हमारी शक्ति ताकतवर हो सकती है। इस प्रकार हम कुरस्ते पड़े हुए सजनों के लिए

अधर्म का रास्ता छोड़, सत्य-धर्म के निष्काम रास्ते पर चलते हुए परोपकारी नाम कहाना सहज हो सकता है। अतः हम युवावस्था की भक्ति यानि समभाव-समदृष्टि की युक्ति पर परिपूर्णता से बने रहने का सामर्थ्य जुटा पाएँ, वैसा पुरुषार्थ दिखा पाने के योग्य बनने के लिए हम पर कृपा करो, कृपा करो, कृपा करो जी। हे परमेश्वर ! जीवन उद्धार के इस महान कार्य को इसी जीवन में सिद्ध करने हेतु हमें समुचित बल व बुद्धि प्रदान करो ताकि हम अपने हृदय को सदा विशुद्ध व मन को वश में रखते हुए भ्रम-रहित अपने निज यथार्थ स्वरूप में बने रहने का पराक्रम दिखा सकें। इस तरह हम अकर्त्ता भाव से आप की सब आज्ञाओं का पालन करते हुए, संकल्प रहित सच्चाई-धर्म के निष्काम रास्ते पर सावधानी से डटे रहें। तभी हम आपके सुपुत्र कहला, सर्गुण-निर्गुण के खेल निर्लिप्तता से खेलते हुए, अटल राज्य को प्राप्त करने में सफल हो सकेंगे। अंततः हम प्रार्थना करते हैं कि हमारा मार्गदर्शन करते रहना ताकि हम इसी जन्म में अपने जन्म की बाज़ी को जीत लें।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरान्त सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियन्त्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 28 जून 2015 का सबक

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्मा-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इन्सान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शान्ति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

आओ अब कुदरत को समझते हैं। क्या सारे इस हेतु तैयार हैं?

हाँ जी।

तो सारे कुदरत में आकर बैठो यानि शारीरिक 'मैं' को त्याग कर अफुर हो जाओ। तैयार हो सारे, हाँ जी। तो ध्यान से सुनो-

गत सबकों में हमने जाना कि भक्ति-शक्ति धारण किए बिना दुःख की निवृत्ति मुश्किल है। यदि हम सुखी होना चाहते हैं

व अपने जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करना चाहते हैं तो हम सबके लिए बनता है कि सजन श्री शहनशाह महाबीर जी के वचन प्रवान करें। वे ही हमें तीन वक्त के अखण्ड पाठ के रूप में दु:ख अवस्था से उबरने की औषधि प्रदान कर सुख में ला रहे हैं। अतः शुकर करें कि उन्होंने हम जैसे नाकाबिल तुच्छ जीवों को समभाव-समदृष्टि के स्कूल में दाख़िल किया है। जानो कि समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई आरम्भ करके दाता सजन श्री शहनशाह महाबीर जी ने एक मनुष्य को मनुष्यता में बने रहने व नेकी से जीवन जीने के लिए कुदरती पर्चा पेश किया है जिसका विधिवत् वर्णन सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में है।

इसलिए हमारे लिए बनता है कि कुदरत की रमज़ को पूर्णतया जानने के लिए सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में से सजन श्री शहनशाह हनुमान जी की युक्तियों को समझें व उन्हें धारण कर अमल में लाने हेतु अविलम्ब तत्पर हो जाएँ। याद रखो केवल इसी यत्न द्वारा ही हम समभाव-समदृष्टि के सबक अनुरूप मानवीय विचारधारा अपना पाएंगे। जानो कुदरत की हर वस्तु सबकी साँझी होती है तभी तो सतवस्तु में कोई राजा व कोई रंक नहीं होता। सबको कुदरत की सब वस्तुओं पर समान अधिकार प्राप्त होता है। इसीलिए तो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में लिखा है:-

ए ग्रन्थ कुदरती सतवस्तु दा आ रिहा,
तूं मैं किसे दा सवाल नहीं
ए ग्रन्थ सब दा है ओ साँझा,
ऐथे वड-छोट दा कोई प्रभाव नहीं।।

याद रखो वड-छोट, तेरी-मेरी का सवाल जब से पैदा होता हैं तब से ही देशों का विखंडन व मानव जाति का विभाजन आरम्भ होता है। ऐसी अवस्था में ही कोई गुरु तो कोई चेला, कोई सेवक तो कोई स्वामी व कोई भक्त तो कोई भगवान बन, बाल अवस्था के भक्ति-भावों में फँस जाता है। इस प्रकार अलगाववाद का चलन आरम्भ होता है। अतः सबने याद रखना है कि यह ग्रन्थ कुदरत की देन है। अतः इस कुदरती ग्रन्थ की विचारधारा को हर किसी ने एकरस अपनाना तो है, पर मालिक नहीं बनना।

अब कुदरत की बनत–खुद को देखो और अपने इन्सान होने के सत्य को जानो व मानो। ध्यान दो, यदि इस सत्य को मानोगे तो ही समभाव पर बने रह समदृष्टि द्वारा इन्सानियत को अपने व्यवहार में उतार पाओगे और इस प्रकार अपने इन्सान होने का सत्य प्रगट कर सकोगे। अतः इन्सान होने के नाते समभाव अनुरूप बने रहो और याद रखो सतयुग में सब कुदरत प्रदत्त इन्सानी विशेषताओं से युक्त श्रेष्ठ इन्सान होते हैं। आओ अब जाने कि इस सन्दर्भ में सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ क्या कह रहा है-

कुदरत ने तैनूं इन्सान बनाया,
इस जगत ते तां तू आया
उस ईश्वर दी है करामात,
अपने जन्म नूं ना कर घात।
अपने जन्म नूं ना कर घात।
माता सजन जी दे गर्भ विच,
उस ईश्वर ने तेरा अंग-अंग सजाया

सूरज चाँद दा डिट्ठा प्रकाश,
अपने जन्म नूं न कर घात,
अपने जन्म नूं न कर घात।
उस ईश्वर दे तूं गुण गा लै,
उस ईश्वर दा ध्यान लगा लै।
उस ईश्वर दा सिमरन कर के,
एहो धन दौलत चलेगा साथ।

अर्थात् यह ग्रन्थ हमें सन्देश दे रहा है कि यदि कुदरत ने हमें इन्सान बनाया है तो इस सत्य पर हमें आजीवन धर्मसंगत बने रहना है। इन्सानियत के विपरीत अर्थात् समभाव-समदृष्टि के प्रतिकूल चलन अपनाकर हमने अपने जीवन पर कदापि घात नहीं लगानी। अपितु इस हेतु अपने इन्सान होने के सत्य को याद रखना है और अपने मन को कुदरत के वाली ईश्वर में लीन रख कामना रहित हो जाना है। इस प्रकार हृदय विदित वेद शास्त्रों का सत्य ज्ञान प्राप्त करने के योग्य बनना है व विचार ईश्वर है अपना आप पर खड़े हो, निर्विकारी नाम कहाना है। याद रखो इसी तरह अपनी यथार्थता में बने रह पाओगे। आगे सुनो कि सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ हमें क्या समझा रहा हैः-

ओ है कुदरत दा वाली,कुदरत तुहाडे दर दी सवाली,
ओ है कुदरत दा वाली।
कुदरत दे वाली ने कुदरत उपजाई,
कुदरत ओ कुदरत, कुदरती आई।
कुदरत ओ सारी हरियाली, ओ है कुदरत दा वाली।
चार वेद कुदरती आये, छः शास्त्र कुदरत ने रचाए।

अर्थात् जब कुदरत भी उस ईश्वर के दर की सवाली है यानि ईश्वर से सब कुछ प्राप्त करती है तो हम क्यों इधर-उधर से प्राप्त करने के यत्न में दर-दर की ठोकरें खाते हैं। हमें भी चाहिए कि हम भी हृदय में अंतर्निहित कुदरती ज्ञान को धारण कर कुदरत से ही सब कुछ प्राप्त करें व उसे अमल में ले आएं।

अब कुदरत की रमज़ से परिचित कराते हुए सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में जो कहा गया है वह ध्यान से सुनो:-

श्री हनुमान जी के मुख के शब्द

शब्द:- चरण धोवे जनता मेरे साजन जी दे

श्री साजन जी उत्तर देते हैं

आप हो पिता आप हो दाता,
फिर मैं तो बालक इन चरणां दा हुआ।

श्री महाबीर जी उत्तर दे रहे हैं

ओ फिर कौन पिता और कौन दाता हुआ।

सर्व दिस्सो सारी नगरी ऊपर
अनेकां दा फिर एक हुआ,
जैं अपना आप पहचान किया।

श्री साजन जी कह रहे हैं

समझन विच नहीं पाई ओ जांदी,
दाता जी बात तुम्हारी।

कौन समझे कौन समझ सके,
हो तुसां जगत हितकारी।

समझन विच नहीं पाई ओ जांदी,
दाता जी बात तुम्हारी।

कुदरत कमाल साडी,
कुदरत विशाल साडी।

कुदरत दा करे वर्ताव,
कुदरत मिसाल है साडी,
कुदरत मिसाल है साडी ।

कुदरत है साज मेरा,
कुदरत लिबास मेरा,
कुदरत अजीब दिखाई।

कुदरती रौशनी आई,
कुदरती रौशनी आई।

कुदरत विश्वास मेरा,
कुदरत इतिहास मेरा,
कुदरत बनत बनाई।

कुदरत नाल यारी लाई,
कुदरत नाल यारी लाई।

कुदरत जमाल मेरा,
कुदरत नौ निहाल मेरा,
कुदरत रमज़ दिखाई।

कुदरत समझ में आई,
कुदरत समझ में आई।

कुदरत करामात है,
कुदरत ही ओ दात है,
कुदरत कमाई दिखाई

कुदरती जित उसने पाई,
कुदरती जित उसने पाई।

कुदरत ही राम रहीम,
कुदरत ही कृष्ण करीम।

कुदरत ही दसपातशाही,
कुदरत ही दसपातशाही।

अनेक दा फिर मैं एक दिस्सां
कुदरत ने ही जित पाई।

कुदरत ने ही जित पाई,
कुदरत ने ही जित पाई।

दोहाः- कुदरत रूप रंग न रेखा, कुदरत जगत सबाई
कुदरत आद अन्त है, कुदरत कुदरती रौशनी पाई

श्री साजन जी कह रहे हैं

बस सीस मेरा है इन चरणों दे ऊपर,
फिर आप तो हो सीस ताज जी।

आप हो दाता जी मेरे,
फिर आप हो अटल राज जी।

श्री रामचन्द्र जी श्री साजन जी को कह रहे हैं

बस त्रिलोकी दा राज असां दे दित्ता,
असां बक्ष दित्ती सारी राजधानी

अज त्रिलोकी दा दे दित्ता ख़िताब सजनों

फिर साजन हो गये ने राजन
और महाराजन सजनों

फिर कौन बोले ते कौन बोल सके,
ते कौन है बोलने वाला।

आशा है कि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में विदित इस कीर्तन के माध्यम से सबको कुदरत का सारा विस्तार समझ में आ गया होगा। अब जब कुदरत के विषय में सारी बातचीत हो रही है तो हम सबसे पूछना चाहते हैं कि क्या कुदरत को कोई देख सकता है यानि क्या कुदरत दिखाई देती है?

मौन।

जब ऐसा कहा गया है कि कुदरत रूप, रंग, रेखा में नहीं है और वह ही आद-अंत, सूरज-चाँद और सारा जगत है, तो हम केवल उसके नज़ारे को ही क्यों देख सकते हैं कुदरत को क्यों नहीं?

मौन।

इस सन्दर्भ में जानो कि कुदरत यानि प्रकृति विश्व की रचना, संचालन व नियमन करने वाली ईश्वरीय महाशक्ति है। यही जनचर-बनचर, जड़-चेतन को रूप देने वाली कुदरत रूपा शक्ति हर वस्तु में अन्तर्निहित होते हुए भी गुप्त रहती है और इस ब्रह्माण्ड की सूक्ष्म से सूक्ष्म क्रियाविधि का संचालन कर उसे नियमित करती है।

इस प्रकार दिखाई देने वाले विभिन्न रूप ही उसकी पहचान हैं। वास्तव में इस जगत में जो कुछ भी रचता है, घटित होता है व परिवर्तित होता है, वह सब ईश्वरीय शक्ति द्वारा ही होता है यानि ईश्वर सब कुछ करते हुए भी अकर्त्ता बना रहता है। इसलिए अहं भाव से बचे रहने हेतु यही चलन ही हर इन्सान को अपनाना आवश्यक है। कुदरत को ईश्वरीय माया भी कहते हैं। अतः इस तथ्य को समझ, कुदरत को अपनी बनत का आधार व संचालन शक्ति मानते हुए, स्वयं को महाशक्तिशाली समझो और कुदरत की रमज़ जान इसके मायावी प्रपंचों से बचे रहो और अपने सत्य स्वरूप की पहचान करो।

इस संदर्भ में जानो कि प्रकृति को भौतिक अर्थात् दृश्य जगत का कारण रूप मूल तत्व माना जाता है। इस दृश्य जगत में जड़ पदार्थ (पर्वत, नदी आदि) तथा मनुष्य, पशु, पक्षी, जलचर, वनस्पतियाँ इत्यादि यानि कीड़ी से लेकर हाथी तक व ब्रह्मा से लेकर तृण तक सब सम्मिलित हैं। सृष्टि की विविधता प्रकृति की आश्चर्यजनक देन है व प्रकृति का अनन्त सौन्दर्य दर्शनीय अवश्य है परन्तु धारने योग्य नहीं। याद रखो कुदरत के नियमानुसार, अपनी श्रेष्ठता में बने

रहने हेतु, हर वस्तु में ईश्वरीय अर्थात् उसका मूल प्राकृतिक गुण विद्यमान होता है जिसे उस वस्तु का स्वाभाविक गुण कहते हैं। उदाहरण स्वरूप धर्म समभाव अनुरूप एक मानव का मूल प्राकृतिक गुण है मानवता। इस गुण का वर्त्त-वर्त्ताव करके ही मानव आनन्दमय बना रह सकता है।

अतः प्रत्येक मानव के लिए इस विषय में ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक है। तभी वह आत्म निरीक्षण करते हुए कदम-कदम पर आत्मनियन्त्रण द्वारा सतर्क बना रह सकता है और आत्मसुधार कर एक सुसंस्कृत मानव कहला सकता है। अतः एक इंसान का अपने इस प्राकृतिक गुण से अपरिचित रहना या किसी अन्य वस्तु का प्राकृतिक गुण अपनाकर तद्नुसार अपना स्वाभाविक रूप बनाना उसके लिए अशुभ व दुराचारिता का प्रतीक होता है।

यह ख़्याल के जगत में आसक्त होने के कारण, मिथ्या स्वभाव अपनाकर इधर-उधर उलझने व भटकने की बात होती है। ऐसा इन्सान सदाचारिता से हट, बुरा चलन अपनाकर यानि काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार में फँसकर अपने निज व्यक्तित्व रूपी स्वरूप से विमुख हो जाता है यानि ईश्वर प्रदत्त प्राकृतिक स्वभाव व सौन्दर्य खो, कुरूप हो जाता है। अशुद्ध अंतःकरण वाला ऐसा इंसान जीवन जीने के कुदरती नियमों व विधियों का पालन करने में असमर्थ होता है। ऐसा पाप कर्म करने वाला अपवित्र व भाग्यहीन इन्सान अपने व सबके लिए अमंगलकारी होता है।

हम में से कोई भी ऐसा न बने इस हेतु हमारे लिए आवश्यक है कि हम सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में विदित यानि जाने हुए

ज्ञान का बोध करने के लिए पूरी निष्ठा व सावधानी से यत्नशील बने रहें। तभी हम पदार्थ को ग्रहण करने वाली मन की वृत्ति द्वारा, कुदरती विषय या बल की तथ्यपूर्ण या विशेष जानकारी प्राप्त कर उसे सत्यता से धार पाएंगे। जान लो कि कुदरत का सत्य जानने व समझने आदि की प्राकृतिक शक्ति यानि विवेक बुद्धि प्रत्येक व्यक्ति में अंतर्निहित है।

इसी शक्ति द्वारा ही हम न केवल अच्छे-बुरे व सत्य-असत्य की पहचान कर सकते हैं अपितु कुदरत का ज्ञान भी प्राप्त कर सकते हैं। यही नहीं उस शक्ति के बल से ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर आत्मबोध भी कर सकते हैं यानि निज यथार्थ स्वरूप को जान सकते हैं व अनुभूति और स्मृति द्वारा उसे बुद्धि में धारण कर आत्मतत्व अनुसार युवावस्था के भक्तिभाव को एक तपस्वी की तरह इन्सानियत के रूप में जीवन जीने का सिद्धान्त या ध्येय भी बना सकते हैं। इससे स्पष्ट होता है कि एक इन्सान के लिए इन्सानियत अनुरूप जीवन जीने हेतु ईश्वर प्रदत्त, विवेक शक्ति का प्रयोग करना अति आवश्यक है। अतः मन-वचन-कर्म द्वारा जो भी करो इस विवेकशक्ति द्वारा उस करनी के अंतिम परिणाम को भली-भांति समझ कर ही करो और सत्य-धर्म पर बने रहो।

अतः मानो कि ब्रह्मज्ञान जानने योग्य है व उसे अंतर्निहित प्राकृतिक शक्ति द्वारा प्राप्त किया जा सकता है। हमारे लिए बनता है कि हम भौतिक ज्ञान प्राप्ति तक ही सीमित न रहें अपितु अंतर्निहित ब्रह्मज्ञान प्राप्त कर ब्रह्ममय जीवन जीने के योग्य भी बनें। याद रखो कि ब्रह्म केवल ज्ञान से जाना जा सकता है, न कर्म से और न ज्ञान-कर्म के मिश्रण से। अतः

यह आवश्यक है कि हम अपनी अंतर्दृष्टि या ज्ञान रूपी नेत्र खुले रखें। इससे मन में स्वतः ब्रह्म ज्ञान का उदय होना आरम्भ हो जाएगा और हम उसी निज ज्ञान स्वरूप में बने रह सबसे विद्वान व बलवान कहलाएंगे। इस प्रकार नित्यता के भाव से उसी ज्ञान में निष्ठा रखते हुए निर्भयता से न्यायसंगत इस जगत में विचरते हुए निर्लिप्त बने रह पाएंगे।

इस परिप्रेक्ष्य में सदा याद रखो कि केवल पुस्तकीय ज्ञान प्राप्त करने वाला इन्सान ज्ञानमूढ़ कहलाता है और ज्ञानी होने पर भी उसके द्वारा मूर्खों जैसा आचरण और व्यवहार दर्शाने पर उसे पठित मूर्ख कहते हैं। वह आत्मा, परमात्मा और प्रकृति से सम्बन्धित उत्तम ज्ञान के आदान-प्रदान के कार्य में रुचि नहीं रखता इसलिए सदाचारी नहीं बन पाता। अतः हमारे लिए बनता है कि हम समभाव-समदृष्टि के स्कूल से उपलब्ध होने वाले आत्मिक ज्ञान को स्मृति-कोष में क्रमबद्ध धारण करें व प्राप्त ज्ञान व तथ्यों का संशय रहित हो, अपने जीवन में नियमित रूप से उपयोग करते हुए सदा आनन्द को प्राप्त करें। जानो कि क्षोभ या विकार रहित सजन ही शान्त चित्त व स्वस्थ बना रह अपने मूल प्राकृतिक गुणों पर टिका रह सकता है और ऐसा सदाचारी व्यक्ति ही अपने संगी साथियों को भी परमार्थ के मार्ग पर अग्रसर होने की प्रेरणा दे सकता है।

श्री साजन परमेश्वर, यथार्थ से भटके हुए, हम भ्रमित बुद्धि सजनों को, सुझाव दे रहे हैं कि सजन श्री शहनशाह महाबीर जी के द्वारे पर आना अपना सौभाग्य समझो और उनके संग बने रहना सुनिश्चित करो। उन विशेष बुद्धि व तेजधारी को

जानो, पहचानो और उन्हीं के जीवन जीने की कुदरती कला को अपने जीवन का चलन बनाने हेतु उन्हीं द्वारा प्रदत्त युक्ति से अपने मन व बुद्धि को सींचो ताकि बुद्धि का विकास हो। इस हेतु सतवस्तु का कुदरती जो सत्यज्ञान का असीमित भंडार है, उसे भली-भांति पढ़ो, समझो व चरितार्थ करो। इससे मन और बुद्धि दोनों का योग हो जाएगा। इस तरह आत्मतुष्टि होने पर इन्सानियत में बने रहना सहज हो जाएगा।

याद रखो जो इस स्कूल की पढ़ाई में पास हो गया वही महाबीर जी की संगत होगी। इसलिए अपने सुधार हेतु अपने स्वभावों का सत्यता से आत्मनिरीक्षण करो और सच-सच गलतियां पकड़कर उन्हें फिर मत दोहराओ, झूठ बोलने के स्थान पर आत्मनियन्त्रण रखो। अपनी मनमत आधारित विचारधारा छोड़ दो और समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार विचारधारा अपनाओ। उस पर अटल बने रहो व उसी का प्रचार करो। जान लो यह अत्यन्त हिम्मत का काम है। विचार करो कि क्या ऐसा करने का साहस दिखा सकते हो?

हाँ जी।

तो जीवन में अब जब भी सुख-दुःख आए तो उसमें विचलित न होना। इस हेतु चाहे कितने ही कष्ट-क्लेश या अपमान क्यों न सहने पड़ें, हँस कर सहन कर लेना। जान लो कि अब कलुकाल हटने वाला है, सतवस्तु आने वाली है। अपने बचाव के लिए व सतवस्तु का नज़ारा देखने के लिए समभाव का सबक पकाना व अमल में लाना अपनी आवश्यकता

मानो। यह कुदरती फ़रमान मानो। याद रखो ऐसा सुनिश्चित करने पर इन्सानियत में आ जाओगे और मौत का भय नहीं रहेगा। विचार शब्द के महामन्त्र द्वारा एक-एक कदम पर अपनी तुलना करनी है ताकि कोई भी ऐसा कदम न उठे जिससे समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई का उल्लंघन हो जाए।

इसलिए- समभाव देखो जगत जहान।
ओथे जात पात न ग़रीबी अमीरी।
एहो दृष्टि सजनों राहवे महान।

समभाव-समदृष्टि अनुसार सबको एक जैसा देखना और सबके साथ एक जैसा व्यवहार करना आरम्भ कर दो और सब एक ही रंग में रंग जाओ क्योंकि आप संसारी परिवार से भिन्न परमार्थी परिवार से सम्बन्ध रखते हैं। इसलिए आवश्यक है कि हम इन अनमोल वचनों रूपी इस कुदरती श्रृंगार को पहन कर प्रसन्न हो जाएँ और अपने दुखमय जीवन को सुखमय बनाकर सभी गुलाब की तरह खिल उठें और विचार शब्द को पकड़ पूरी समदृष्टि दिखाएं। जानो कि कुदरत के वाली की कुदरत ने ही यह जगत रूपी खेल रचाया है और कुदरत प्रदत्त गुणों या विचारधारा में यथार्थता से आत्मतुष्ट बने रह सकते हैं। इस प्रकार हमारे लिए अकर्त्ताभाव से हर काम ईश्वर के निमित्त करना सहज हो सकता है। याद रखो आत्मपद की प्राप्ति हेतु कुदरती स्वभाव में बने रहना सुनिश्चित करो।

सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है-

**कुदरत ने इन्सान बनाया, ओहदे विच इक जीव बना के
आत्मपद दी खोज करो, अपनी इन्सानी दिखा के।।**

इसलिए प्रबल विचार में आओ और ईश्वर की कुदरती कला को समझो। ईश्वर सर्वकला भरपूर व परिपूर्ण होते हुए भी सब कलाओं से परे है। जानो किसी वस्तु का बहुत छोटा अंश कला कहलाता है। कला का अर्थ है निपुणता, जो मानव का गुण है। यह निपुणता ही एक मानव की विशेषता कहलाती है। इसी विशेषता द्वारा ही वह किसी को प्रभावित कर सकता है। दूसरों को प्रभावित करने की उसकी यह क्षमता उसका सामर्थ्य कहलाती है।

इस सामर्थ्य को प्रकट करने के पीछे युक्ति होती है। युक्ति अनुसार जब आत्मसुधार की तरंग चलती है तो जान लो वह कार्य विशेष सिद्ध हो जाता है। इस प्रकार कला का ज्ञान प्राप्त कर कला को धारण करने वाला कलाधारी यानि ईश्वर कहलाता है। जानो कि कुदरती कला से यानि समभाव-समदृष्टि की युक्ति से ही सब अपने लगते हैं व एकता एक अवस्था प्राप्त की जा सकती है। इसलिए हमारे लिए बनता है कि कुदरती रंग में रंगे रहने हेतु सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ को पढ़-समझ कर कुदरत के संग बने रहें।

कुदरत के साथ इस तरह एक रूप हो जाएँ कि वही हमारा प्यार हो अर्थात् इस कुदरती ग्रन्थ की वाणी को आत्मसात् करने को ही हम वास्तविक प्रीत मानें। इस प्रकार शब्द विचार पर बने रह कुदरत की रमज़ को जान, उसके साथ पक्की यारी लगा लें यानि कुदरती गुण ही हमारे व्यवहार का सिंगार हों। इस तरह बदन से खोट निकाल ख़ालिस सोना

हो जाओ और जगत में चमक दिखाओ। इसी में ही अपनी शान मानो और सत्यनिष्ठ व धर्मपरायण बन कर अपना नाम रोशन करो। हर युग में ऐसा पराक्रम होता आया है। यह कोई नई बात नहीं है। याद रखो कष्ट-क्लेश सहकर भी कुदरती विचार द्वारा कुदरती आचार-व्यवहार में बने रहने वाले इन्सान का हृदय ही शान्ति को प्राप्त होता है और वह ही सत्य-धर्म पर बने रहते हुए ईश्वर के साथ प्यार निभा सकता है।

इसीलिए सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में वर्णित है-

कुदरती विचार आई, हृदय विच शान्ति पाई
खुश हो रहे श्री राम रघुराई,
विचार नाल होन लगा कैसा ओ प्यार जी,
कैसा ओ प्यार जी।।

अन्त में हमारी सभी से प्रार्थना है कि अपने, अपने परिवारजनों व कुल समाज में सुख, शान्ति व एकता का वातावरण स्थापित करने के लिए सभी ऐसा ही करो व निष्काम भाव से सबको ऐसा करने के लिए प्रेरित कर परोपकारी नाम कहाओ। यही सबसे उत्तम परोपकार है। इस अनुसार खुद को साध लो।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 05 जुलाई 2015 का सबक

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्म-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

आओ अब सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार कुदरत की महत्ता, महानता व एक इन्सान के लिए कुदरती विचारधारा में बने रह, निष्कलंक व आनन्दमय जीवन जीने की आवश्यकता को समझते हैं:-

श्री साजन जी के मुख के शब्द

ओ है कुदरत दा वाली,
कुदरत तुआडे दर दी सवाली,
ओ है कुदरत दा वाली ।

कुदरत दे वाली ने कुदरत उपजाई कुदरत ओ कुदरत,
कुदरती आई।
कुदरत ओ सारी हरियाली,
ओ है कुदरत दा वाली।।

चार वेद कुदरती आए,
छः शास्त्र कुदरत ने रचाये ।
इन्हां विचों इन्सानों अलफ नूं पा लीजियो।।

अलफ़ अक्षर नूं जप जप के
ईश्वर दी पहचान कीजियो।
उन्हां दी सूरत है ओ कैसी निराली,
ओ है कुदरत का वाली।।

आद अक्षर युवा अवस्था दिखावे
शक्ति वल्लों ताकतवर हो जावे।
छुट गया अक्षर फिर 'ये' नूं ओ पावे
सर्गुण असलियत अपनी पहचान कीजियो।
असलियत दी पहचान कर
होया जगत दा वाली ओ है कुदरत का वाली।।

मूल मन्त्र है जे ओ आद अक्षर,
आद अक्षर इक रस हो के चलाया।
सर्गुण दा नज़ारा उस सजन ने पाया,
फिर महाराज जी ने 'ये' चलवाया।।

'ये' चला फिर निर्गुण पा लीजियो।
फिर शक्ति है जे ओ ताकतवर ओ सजनों
जीवन अपना बना लीजियो, ओ है कुदरत दा वाली।।

फिर निर्गुण मे एक रूप निगाह आया
हर अन्दर इक रूप सुहाया।
परमधाम में ओ कुदरत दा वाली चमके।
जैंदी है सूरत निराली ओ प्रकाशे कुदरत दा वाली।।

फिर निर्गुण मे एक रूप निगाह आवे,
ओ हर अन्दर इक रूप सुहावे ।
परमधाम में प्रकाशे कुदरत दा वाली।
सर्व चमके जैंदी सूरत निराली ओ सूरत निराली।।

शब्दः- हम प्रकाशित हां प्रकाश रिहा हां जग सारा।
जब जब भीड़ भक्तों पर आई,
उन्हां लिया हमारा सहारा।।
आदि अन्त प्रकाश हमारा,
बिन सूरजो प्रकाश हमारा।
सूरज चाँद नहीं कोई तारा,
प्रकाश ही प्रकाश हमारा।
प्रकाश ही प्रकाश नाम कहाते हैं,
हम परमधाम में रहते हैं।।

इस कीर्तन के भावार्थ से स्पष्ट होता है कि कुदरत के वाली ने ही कुदरत उपजाई है। चार वेद और छह शास्त्र भी कुदरती आए हैं, जिनमें बताया गया है कि आद् अक्षर के अजपा जाप द्वारा ही हृदय को प्रकाशित रखा जा सकता है। अतः खुद को व अपने बच्चों को इसके प्रति जाग्रत रखो क्योंकि तभी शारीरिक-मानसिक रूप पर स्वस्थ रह सकोगे। याद रखो यही एकमात्र निज असलियत ज्योतिस्वरूप में बने रहने का विधान है।

आद् अक्षर का महत्त्व बताते हुए इस कीर्त्तन में यह भी कहा गया है कि इसके निरन्तर जाप से व्यक्ति ओजस्वी बनता है और तेज व प्रकाश के प्रभाव से सदा युवावस्था को प्राप्त रहता है। यही सतयुग का चलन है। तभी हर प्राणी उस समयकाल में नौजवान युवावस्था में बना रहता है।

इस तरह युवावस्था की भक्ति यानि समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार वह आद् अक्षर के अजपा जाप द्वारा अपनी अंतर्दृष्टि को प्रकाशित रख, हर प्राणी में कुदरत के वाली का ही नज़ारा देखता है और अपनी असलियत की पहचान करके सर्गुण-निर्गुण में समान रूप से विचरते हुए परमधाम में स्थित रहता है। सजनों इस कीर्त्तन से प्रेरणा ले हमें भी इस कुदरती नियम-नीति की पालना की महत्ता को समझना है और अपने बच्चों की पालना तद्नुरूप करनी सुनिश्चित करनी है। तभी हमारा बचाव हो सकेगा और परमधाम में स्थित रहने के लिए हमें कोई मेहनत नहीं करनी पड़ेगी। यह होगा जगत में विचरते हुए भी उससे निर्लेप रहना।

इस सन्दर्भ में इस श्रेष्ठ परम पद पर स्थित रहने के लिए सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार हर व्यक्ति के लिए अपनी उत्तम प्रकृति यानि मनुष्यता में बने रहने का विधान है। निःसंदेह इस हेतु ध्यानपूर्वक सावधान रहने की आवश्यकता है कि किसी भी कारण यानि कामनाओं व वासनाओं के वशीभूत हो हम में किसी प्रकार की ऐसी कोई विकृति न पनपे जिससे हम अपने मूल गुण का यथा प्रयोग करने में अपने आप को असमर्थ पाएँ और इस प्रकार काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार के वशीभूत हो, मानवता

विपरीत दानवता वाला चलन अपना बैठें व जीवन लक्ष्य से भटक जाएं। याद रखो ऐसा होने पर जीवन में नैतिक विचारों का कोई स्थान ही नहीं रहेगा और स्वार्थ सिद्धि के लिए रिश्तों की मर्यादाओं का उल्लंघन कर, कुकर्म-अधर्म यानि पाप कर्म करने में प्रवृत्त हो जाओगे। इस प्रकार चरित्रहीन, अनैतिक व दुराचारी होने के कारण परमार्थ छूट जाएगा और सांसारिकता में फँस जीवन गँवा बैठोगे।

अतः आवश्यक है कि सांसारिक विषयों के प्रति आसक्ति के प्रभावों से बचे रहने हेतु सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में विदित ब्रह्म विचारों से निरन्तर मेल बनाए रखें। इस तरह परिपूर्णता से अपना निर्माण कर अपनी कथनी और करनी को अपनी मूल प्रकृति यानि मनुष्यता अनुरूप परस्पर एकरस बनाए रखते हुए, जीवन उद्देश्य की पूर्ति के लिए निष्काम भाव से कार्य करें। यह मन से मोह का ताप मिटा, संयोग-वियोग के प्रभावों से मुक्त रह, शारीरिक, मानसिक तथा आत्मिक स्वस्थता व शान्ति के निमित्त, नित्य भाव से उचित जीवन जीने की बात है।

याद रखो इस अवस्था में एकरसता से स्थिर रहते हुए, जीव के लिए, ब्रह्म और जगत के साथ तालमेल बनाए रख, अफुरता व स्वतन्त्रता से यानि संकल्प रहित, जीवन जीना आसान हो जाता है। ऐसा सन्तोषी अपनी वर्तमान स्थिति में ही पूरा सुख अनुभव करने की मानसिक अवस्था में स्थिर बने रह विपरीत परिस्थितियों में भी सदा धीर बना रहता है और हर हालत में आंतरिक शान्ति व आनन्द का अनुभव करता है। यह होता है सभी चिंताओं या परेशानियों से मुक्ति

पाकर, पूर्ण रूप से सब कुछ करने की शक्ति से युक्त बने रहना व सबका सजन कहलाना। ऐसा होने पर समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार सजन-भाव के व्यवहार में सुदृढ़ता से बने रहना स्वतः सहज हो जाता है। अतः निष्काम रास्ते पर बने रहने के लिए सजनों हर उलझन व रूकावट को बहादुरी से पार करने हेतु आत्मविश्वासी बनो।

इस हेतु हमारे लिए बनता है कि हम, कुदरत प्रदत्त समभाव के प्रतीक, अपने मनुष्यता रूपी गुण, मानवता से प्यार करें व ईश्वर के हुक्म की पालना करते हुए, सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में वर्णित विचारों का समदर्शिता से, न्यायसंगत वर्त्त-वर्त्ताव करें। इस तरह खुद मानव धर्म पर अटल बने रह, अपने बच्चों व अन्य सबको भी कामना रहित सच्चाई-धर्म के रास्ते पर अग्रसर करते हुए निष्काम भाव से परोपकार कमावें। याद रखो हमारे खाने-पीने, हँसने-बोलने के तरीके से कुदरती शिष्टाचार यानि सत्य का प्रचार हो व हम दोष रहित बने रह आत्मा-परमात्मा और प्रकृति के स्वरूप का तथा उनसे सम्बन्धित तत्वों यानि धर्म, मोक्ष आदि विषयों का निरूपण करने के योग्य बनें। इस प्रकार विभिन्न रूपों यानि आकारों के साथ विचरते हुए व उनका उपभोग करते हुए हम विवेकशक्ति के प्रयोग द्वारा, नित्य भाव में बने रह, निर्विकारी व निर्लेप बने रहें। यही तो होती है आत्मतुष्टि की यानि आत्मा के प्रसन्न होने की अवस्था।

इस संदर्भ में यह भी जान लो कि सजन श्री शहनशाह हनुमान जी ही कुदरती साइंस के सबसे महान साइंसदान हैं और भाग्यवश उन्हीं के द्वारे पर होने के कारण हमें सदा

उनका संग प्राप्त रहता है। यह सत्य हमें याद रखना होगा और अपने जीवनकाल में उन्हीं द्वारा बताई जीवन-शैली अनुसार इस जगत में निषंग विचरना सुनिश्चित करना होगा।

तो क्या सबको यह मंज़ूर है?

हाँ जी।

तो ध्यान से सुनो कि सजन श्री शहनशाह महाबीर जी विशेष बुद्धि वाले व तेजधारी हैं। कलियुगी बुद्धिहीन जीवों में से कोई विरला इन्सान ही उन्हें पहचान सकता है। उनकी सुन्दर अंग-भंगिमा व मुखमण्डल की शोभा अवर्णनीय है। सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में विदित व प्रकाशित उनकी कुदरती युक्तियाँ एक मानव के लिए मनुष्यत्व अनुरूप सिद्धान्तों, उद्देश्यों व दृष्टिकोण अनुसार जीवन जीने का ज्ञान रूप साधन हैं। इन युक्तियों अनुरूप चलन अपनाने वाला इंसान सामंजस्यवादी दृष्टिकोण अपनाकर सदा एकरस बना रहता है यानि उसमें परस्पर किसी प्रकार की विपरीतता व विषमता नहीं पनपती। ऐसा स्थिर बुद्धि, मृदुभाषी, संतोषी व धीर इन्सान उच्च बुद्धि, उच्च ख़्याल व सजनता का प्रतीक होता है। अतः सजनो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार हमारे लिए आवश्यक है कि हम कुदरत प्रदत्त विवेकशक्ति रूपी विशेष गुण के प्रयोग द्वारा मनुष्यत्व अनुरूप जीवन जीने के योग्य बनें।

आगे यह भी जान लो कि सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ श्री साजन जी का जीवन चरित्र है। इस कुदरती ग्रन्थ में पहले

वैराग, दासी भाव, सात सिंगार, फिर सोलह सिंगार पाकर दास भाव की रचना हैं। यही नहीं इस ग्रन्थ में विदित कुदरती साइन्स के तजुरबों द्वारा श्री साजन जी ने कईयों की शरीर रूपी मशीनरियों के काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार रूपी पुर्जे निकाल कर संतोष, धैर्य, सच्चाई, धर्म के पुर्जे लगाकर, ख़्याल को पलटा खवा कर शरीर रूपी मशीनरी को जोड़ा और वे मशीनरियाँ ठीक की। अब ध्यान कक्ष यानि समभाव-समदृष्टि के स्कूल का निर्माण कर हम सबकी व हमारी भावी संतानों की शरीर रूपी मशीनरियाँ ठीक रखने का युक्तिसंगत प्रबन्ध किया जा रहा है। हम सब इस प्रबन्ध से लाभ उठा अपना जीवन सँवार सकते हैं और कुदरती बधाई के काबिल बन सकते हैं। याद रखो कलियुग में ऐसा पराक्रम दिखाने वालों को सारी ख़लकत देखेगी व हैरान होगी।

अतः हम सबके लिए बनता है कि हम समय रहते ही अविचार जो कुसंग के कारण मनुराज ने रची है उसे छोड़ कर, विचार जो महाराज जी के मुख की वाणी है उसे धारण कर विचारवान बनें। याद रखो सजनों विचार ही कुदरती आई हुई है और विचार ही सजनों जीत और फ़तह है। इसलिए जिस सजन ने विचार के साथ कुल दुनिया में और जनचर-बनचर, जड़-चेतन में एक प्रकाश समझ लिया उसकी फ़तह ही फ़तह है। इस तरह विचार को धारण कर निष्काम रास्ते पर चलने वाले के सभी संकट दूर हो जाते हैं व वह सब कुछ प्राप्त कर लेता है। इस प्रकार वह स्वार्थ की तरफ से सुखी हो जाता है और परमार्थ की तरफ से भी प्रभु से मेल खा जाता है।

इस परिप्रेक्ष्य में सजनो यह भी जान लो कि कलियुग जा रहा है और सतयुग आ रहा है। सजन श्री शहनशाह हनुमान जी के सबसे श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान होने के नाते, यह महान युग परिवर्तन का कार्य कुदरत ने उन्हीं को ही सौंपा है। अतः समय की महत्ता को समझते हुए, समय रहते ही सजन श्री शहनशाह महाबीर जी द्वारा युक्तियों के रूप में दर्शाई जीवन शैली को, जीवन उद्धार के लिए अपने मन-वचन-कर्म में उतार लेने में ही बुद्धिमत्ता मानो। इस हेतु मन को दर्पण मानो व आज तक अपनाए अच्छे-बुरे चलन का आत्मनिरीक्षण करते हुए, आत्मनियन्त्रण द्वारा, सतयुगी इन्सान बनने हेतु आत्मसुधार करो।

इस प्रकार उन युक्तियों पर यथा बने रहने के काबिल बनो तथा उन विचारों के प्रति श्रद्धा और विश्वास रखते हुए, उन्हीं के अनुसार जीवन व्यवहार का रूपान्तरण करो। निःसंदेह तभी श्रेष्ठ मानव कहला, अपना जीवन लक्ष्य प्राप्त कर सकोगे। यह मन से खोट निकाल, ख़ालिस सोना होने व अपनी मुखाकृति की शोभा बढ़ाने का सबसे आसान तरीका है। जानो ऐसा होने पर एक तो हम सबको प्रिय लगेंगे, दूसरा जीवन में कुछ भी कर गुज़रने के लिए दूसरों का मुँह नहीं ताकेंगे यानि सर्वसम्पन्न व स्वतन्त्र हो जाएंगे। क्या सभी ऐसा बनना चाहते हो?

हाँ जी।

तो उस रक्षक के द्वारे पर श्रद्धापूर्वक बने रहने में ही अपना हित मानो व उन परोपकारी पर पूर्ण विश्वास रखते हुए अपने

हृदय को उनके वचनों से सींचने में व उन्हें अमल में लाने के प्रति कमज़ोर मत पड़ो।

अंततः सजनों याद रखो यही एकमात्र तरीका है पुनः सदाचारी व समृद्धशाली बनने का तथा अफुर अवस्था में बने रहने का। जान लो कि सजन श्री शहनशाह महाबीर जी ही कुदरत के खेल को जानते हैं। अतः वे चार-वेद, छः शास्त्रों के ज्ञाता ही, अपनी कारीगरी द्वारा, हम अचेतन अवस्था को प्राप्त इन्सानों के अन्दर, इन्सानियत में ढलने हेतु जान फूँक, पुनः चेतन अवस्था में खड़ा कर सकते हैं। इसलिए केवल उनसे प्रीत करने तक ही सीमित मत रहो अपितु उनकी युक्तियों को अपने जीवन का सिद्धान्त मान, उन पर सुदृढ़ता से डटे रहना सीखो। इस हेतु उत्तम सुमति सजन श्री शहनशाह हनुमान जी से प्रार्थना करो कि हम नादानों को सुमति बख़्शें।

इस संदर्भ में याद रखो कि जो इन्सान ईश्वर के संग अपने ख़्याल को जोड़े रख कुदरती भाव-स्वभाव में बने रहने में सक्षम होता है उसकी व्यावहारिक छवि अति सुन्दर व आकर्षक होती है। उसी संगत की रंगत के प्रभाव से वह सभी के आकर्षण का केन्द्र होता है। इस प्रकार वह युवावस्था का प्रतीक, उत्साही, पराक्रमी, अद्‌भुत कार्य करते हुए मानसिक तौर पर विश्राम अवस्था में बना रहता है। यही कारण है कि सर्वांगीण उन्नति कर वह सुख-समृद्धि को प्राप्त कर सकता है। तभी तो कहा गया है कि जब कुदरत का रंग यानि समभाव योग द्वारा मानवता इंसान के दिल-दिमाग़ में अच्छी तरह से घर कर जाती है और उसके

चलन में उतर जाती है तो उस मानव का मन सन्तोष को प्राप्त होता है और वह सदैव धीरता से शान्त अवस्था में बना रह, हर कर्म सफलता से सिद्ध कर पाता है। किसी भी कारण उसका मानसिक संतुलन नहीं बिगड़ता। फलस्वरूप इन्सान का हृदय पूर्णतः प्रकाशित रहता है व आनन्द की प्रतीति बनी रहती है।

संक्षेपतः मानव को उसकी मूल प्रकृति से परिचित कराने के पश्चात् हम तो यही कहेंगे कि अपने निज स्वरूप व मानवीय गुणों के साथ यारी लगाओ और उन शोभावर्धक गुणों के प्रभाव से अपने हृदय का वातावरण इतना सुन्दर व आकर्षक बना लो कि आपकी मधुर वाणी व पुण्य कर्म आपके अनुपम व वास्तविक श्रृंगार हो जाएँ। ऐसा पराक्रम दिखाने हेतु अपने कुदरती नित्य स्वरूप को जानो, मानो और कुदरती नियम व नीति अनुसार स्वभावों का बाणा पहन अपने मानव होने का सत्य सिद्ध करो। इस प्रकार सच्चाई-धर्म के रास्ते पर बने रह आप निष्काम भाव से परोपकार कमाते हुए सदाचारी कहलाओ व यश कीर्ति के पात्र बनो। हम सब ऐसे पात्र बन पाएँ, उसके प्रति अपने आगे बढ़ते हुए कदमों का आत्मनिरीक्षण करना होगा कि :-

1. क्या हम ख़्याल ध्यान वल, ध्यान प्रकाश वल जोड़े रख, अपना हृदय प्रकाशित रख, निज असलियत स्वरूप का बोध करने के योग्य बन सके हैं?

2. क्या हम मन को संकल्प रहित स्थिति में साधे रख पा रहे हैं?

3. क्या हमारे स्वभावों के टेम्प्रेचर का घटना-बढ़ना समाप्त

हो चुका है?

4. क्या हम गृहस्थ आश्रम सतयुग बना चुके हैं?

5. क्या हमारा तीन टाइम का अखण्ड पाठ ठीक है और हम अपने ब्रह्मस्वरूप में स्थित रह पाते हैं?

अग़र नहीं तो हमें सम्भलकर आत्मनियन्त्रण द्वारा आत्मसुधार करने की आवश्यकता है ताकि हम कुदरत के वाली सर्वव्यापक भगवान का सर्व-सर्व दर्शन करते हुए आत्मीयता से निष्कलंक जीवन जीने के योग्य बन सकें।

शुभ कामकानाओं सहित।

दिनाँक 12 जुलाई 2015 का सबक

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्म-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

अभी तक कुदरत के बारे में हमने जो भी, जितना भी जाना उसकी जीवन उपयोगिता को ध्यान में रखते हुए हमारे लिए बनता है कि हम सत्यनिष्ठा से केवल उसी कुदरती रंग में रंगे रहने में अपना व सबका हित मानें व उसी अनुरूप समभाव-समदृष्टि के सबक अनुसार परस्पर सजनभाव का व्यवहार करते हुए मानवता मे बने रहें। इसी कुदरती विचारधारा को ही अपने जीवन का असली लक्ष्य मानें व राग-द्वेष के बन्धन में फँस किसी मनगढ़न्त विचारधारा को भूलकर भी न अपनाएँ। जानो कि एक अज्ञानी व कमज़ोर इन्सान ही मनगढ़ंत

विचारधारा के अनुरूप चलन अपनाता है और इन्सानियत से गिर जाता है। यह भूल कर भी मत करो क्योंकि ऐसा होना आत्मघाती क्रिया/कर्म करने के समान है। यह हर परिस्थिति में, प्रत्येक मनुष्य के लिए ध्यानपूर्वक मनुष्यत्व में बने रहते हुए अपार शक्तिशाली होने की बात है क्योंकि इसके प्रयोग द्वारा वह सहजता से विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन श्रेष्ठ पद को प्राप्त करने का पात्र बन सकता है।

सजनो अगर हम नेकनीयती से अपना शुभचिंतक बनना चाहते हैं तो हमें अपने स्वरूप में स्थित रहते हुए हृदय वेदविदित सद् विचारों के अनुरूप सज्जनता युक्त आचार-व्यवहार की महत्ता को समझकर उस पर सुदृढ़ता से बने रह, अपने बच्चों व औरों का मार्गदर्शन करने के लिए अपने आप को इस प्रकार ध्यान से साधे रखना होगा। अपने निज असलियत ज्योति स्वरूप में स्थित रहने के लिए हमें आत्मा विच परमात्मा यानि नित्यता के भाव पर दृढ़ बने रहना होगा। कहने का तात्पर्य यह है कि शरीर के स्थान पर नित्य या अजर-अमर आत्मस्वरूप का बोध रखते हुए उसे ही निज यथार्थ स्वरूप मानना होगा और आत्मभाव से इस जगत में सबके साथ विचरना सुनिश्चित करना होगा। इससे हृदय सदैव प्रकाशित रहेगा व अन्तर्दृष्टि हृदय निहित वेद-विदित ज्ञान को ग्रहण कर अंतर ब्रह्माण्ड की रचना को जान व समझ सकेगी।

अतः सजनो अपने यथार्थ ईश्वर स्वरूप को परमेश्वर का अंश होने का सत्य बोध रखते हुए वैसा ही मानो। इस प्रकार जानो

कि जिस तरह परमात्मा सर्वव्यापक, सर्वज्ञ व सर्वशक्तिशाली है, उसी तरह 'मैं' आत्मा में भी उस परमात्मा का अंश होने के नाते वे सभी शक्तियाँ विद्यमान हैं। याद रखो यही तरीका है शारीरिक नश्वरता के भाव से उबर सर्वशक्तिमान परमेश्वर की तरह सर्व एकात्मा का आभास करते हुए नित्यता के भाव से इस जगत में विचरने का। इसी तरह आत्मज्ञान प्राप्त कर सदा उस सृष्टिकर्त्ता के संग बने रह ओजस्वी, तेजस्वी प्रकाशमय अवस्था में बने रह सकोगे और पूर्ण चेतनता से इस जगत में आनन्दपूर्वक विचर सकोगे।

जानो कि परमेश्वर ने इस सम्पूर्ण सृष्टि की संरचना करते समय प्रत्येक वस्तु में सौन्दर्य का निर्माण किया इसीलिए हम मनुष्यों के लिए बनता है कि हम अपने मन, वचन, कर्म द्वारा सुसंस्कृत गुण व स्वभाव यानि सौन्दर्य को प्रकाशित करने वाली विचारधारा में यथा बने रहें। इसके विपरीत जिस किसी भी विचारधारा से हमारी वाणी का, व्यवहार का व चरित्र का सौन्दर्य भंग हो उसका अनुशीलन भूलकर भी न करें। याद रखो ऐसा सुनिश्चित करने पर ही समभाव नज़रों में कर संकल्प रहित अवस्था में बने रह इस जगत में विचर पाओगे। ऐसा इसलिए कह रहे हैं कि जब कुदरत ने सृष्टि के आरम्भिक काल में मनुष्य का निर्माण किया तो उसके सही ढंग से संचालन के लिए, उसे मनुष्यता रूपी गुणों से सुसज्जित किया और सोऽहम् अर्थात् "मैं ईश्वर हूँ" के भाव से मृतलोक में आनन्दपूर्वक जीवन जीने का निर्देश दिया। इस प्रकार इस मृतलोक में भेजते समय उस ईश्वर ने मानव को सदा इसी अनुभूति में बने रहने का आदेश दिया ताकि वह

एक रूप होकर, समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार इस जगत में विचर सके।

सभी जान लो कि इस हेतु ही यानि निष्कामतापूर्वक सब कार्यव्यवहार करते हुए, अपने असलियत स्वरूप में स्थित बने रहने के लिए ही सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में नाम-अक्षर की औषधि का तीन खुराकों के रूप में सेवन करने का विधान है। यह मनुष्य के लिए सम्पूर्णतया सात्विकता में बने रह सर्वरूपेण स्वस्थ रहने की बात है। यहाँ यह भी जान लो अक्षर चलाने यानि अजपा जाप से हृदय में प्रकाश होता है और नाम द्वारा उस प्रकाश में ईश्वर जो 'मैं' हूँ वह अपना असलियत स्वरूप निगाह में रहता है। इस प्रकार हम ताकतवर बन अपने मानवीय विचारों अनुसार अपना व्यवहार साधे रख सकते हैं। यह होता है निर्भयता व निर्लिप्तता से न्यायसंगत इस जगत में विचर पाने की योग्यता प्राप्त कर पाना। अतः नाम-अक्षर की महत्ता को समझते हुए हर पल हर घड़ी अफुरता से नाम अक्षर चलाना सुनिश्चित करो ताकि हर क्षण अपने असलियत स्वरूप का बोध बना रहे और हम नित्यता के भाव अनुसार जीवनयापन कर सकें। इस सन्दर्भ में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार यह भी जान लो कि नाम-अक्षर चलाने का विधान अपने असलियत स्वरूप का बोध रखते हुए, नित्य उसी भाव में बने रहने से है। जब इस अवस्था में इंसान स्थिर हो जाता है तो उसके लिए कामना से मुक्त रह सतवस्तु के चलन अनुसार अपने मन को संकल्प रहित रख पाना व जप-तप आदि के फुरने से छुटकारा पा निष्काम भाव से परोपकार के निमित्त सब कुछ करना सम्भव हो जाता है।

जान लो कि सतयुग में संकल्प नहीं होता। उस युग में समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार बने रहने के कारण मन बुद्धि का योग बना रहता है इसलिए कामना के अभाव के कारण उनका मन स्थिर व बुद्धि निश्चयात्मक होती है। इसीलिए वे आत्मतुष्ट इन्सान जीवन में जो भी करते हैं निष्काम भाव से सर्वहित के लिए करते हैं। पर जैसे ही उनके मन में किसी प्रकार की अच्छी या बुरी कामना घर कर जाती है तो उसकी प्राप्ति उद्देश्य का रूप लेती है। इसी को ही मन में उठने वाले संकल्प कहते हैं। यह इंसान के निष्काम भाव से हट स्वार्थपरता की ओर होने वाले मानसिक झुकाव का व सच्चाई-धर्म के रास्ते से हट राग-द्वेष के चलन में उलझने का प्रतीक होता है। इन संकल्पों की सिद्धि हेतु जो भी कर्म होता है उसका अच्छा या बुरा फल सुख-दुख व जन्म-मरण में फँस कई जूनों में भटकने के रूप में प्राप्त होता है।

इसलिए हमें याद रखना है कि मन में कुछ भी अच्छा या बुरा प्राप्त करने की इच्छा जन्म-जन्मांतरों के सुख-दुःख का कारण बनती है। यह सिलसिला त्रेता युग से आरम्भ होता है और बढ़ते-बढ़ते कलियुग में हर मानव के मन में अविद्या के कारण संकल्प-विकल्प की तरंगें इस तरह असंतुलित कर देती हैं कि उसके लिए अपने निज स्वरूप से परिचित रहना ही असंभव हो जाता है। मन की इस अवस्था से बनी दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थितियों से हम सब वाकिफ़ हैं व उन्हीं के प्रभावों से झुखते-रोते हुए जीवन व्यतीत करते हुए एक-दूसरे से अलग-थलग पड़ गए हैं। याद रखो इसी कारण ही हमारे लिए निष्काम रास्ता अपनाना असम्भव हो रहा है। इसलिए हमारे लिए बनता है कि इच्छा रहित बने रह हमें परिपूर्ण

अवस्था में साधे रखने वाले हेतु यानि संतोष व धैर्य पर मज़बूती से बने रह जो भी कर्म करें सभी परमेश्वर के निमित्त ही करें। जानो कि यही सत्यनिष्ठ व धर्मपरायण बने रह परोपकार कमाते हुए यश-कीर्ति प्राप्त करने का एकमात्र अचूक तरीका है।

सभी जानते हैं कि जब तक मनुष्य ने इसी रीति व नीति से संकल्प रहित जीवन जिया वह समयकाल सतयुग कहलाया। परन्तु मनुष्यों के मन में संकल्प उठने की क्रिया आरम्भ होते ही जैसे-जैसे मनुष्य, धर्म आचरण से दूर होता गया वैसे-वैसे मानव समाज की सात्विकता कम होने लगी और नैतिक पतन आरम्भ हो गया। परिणामस्वरूप इन सात्विक गुणों पर रज-तम का काला आवरण छाने लगा यानि सत्य व्यवहार का स्थान असत्य व्यवहार लेता गया। इस प्रकार काल प्रवाह के साथ पहले त्रेता युग आया फिर द्वापर युग और अब जो चल रहा है उसे कलियुग कहते हैं। कलियुग में सात्विक गुणों का स्थान अनेकानेक दुर्गुणों जैसे काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार के प्रभाव से छल-कपट, द्वि-द्वेष व वैर-विरोध आदि ने ले लिया। इसी कारण सोऽहम् भाव का स्थान अहं भाव ने ले लिया और इस प्रकार जिन स्वभाव-दोषों की उत्पत्ति त्रेता युग में आरम्भ हुई थी वही स्वभाव-दोष आज अधिकतर मनुष्यों का स्वाभाविक चलन बन गया है जिस कारण वह कुदरत प्रदत्त चारित्रिक सौन्दर्य खो बैठा है। कहने का तात्पर्य यह है कि जो मानव सृष्टि के प्रारम्भिक काल में सदाचारी था वह आज इतना दुराचारी हो गया है कि आत्मनियन्त्रण रख आत्मीयता में बने रहना उसके बस की बात नहीं है।

इसलिए हमें भक्ति-शक्ति की ताकत द्वारा कुदरत को वश में रखने की युक्ति अपनानी होगी और याद रखना होगा कि

यथार्थ में हम सर्वव्यापी परमेश्वर का अंश अजर-अमर आत्मा ही हैं यानि हमें कोई मार नहीं सकता। इस नश्वर शरीर की बनत तो कुदरत ने हमारे लिए इस जगत में सहजता से भ्रमण करने की ख़ातिर अपनी सामर्थ्य के अनुसार बनाई है। इसलिए हमारे लिए मूल मन्त्र आद् अक्षर के निरंतर अजपा जाप द्वारा अपने हृदय को सदा आत्म प्रकाश से प्रकाशित रखना बनता है ताकि हम अपने मन-मन्दिर में सुशोभित परमेश्वर के सत्य का बोध कर सकें व हृदय निहित वेदों का ज्ञान प्राप्त कर उसी सत्य पर स्थिरबुद्धि बने रहें। याद रखो तभी हम आत्ममय अवस्था प्राप्त कर अपनी सुरत यानि ख़्याल को कंचन रख वैरागियों की तरह जगत में पूर्ण चैतन्यता से विचरने का पराक्रम दिखा सकते हैं व शारीरिक विषयों की आसक्ति से भी बचे रह सकते हैं। इस प्रकार इन्द्रियनिग्रही बन सुगमता से भक्ति-शक्ति धारण कर अफुरता से अजपा जाप द्वारा अपने अंशी में ध्यान स्थिर रखते हुए उसी के विचारों पर स्थिर बने रह प्रेम व मस्ती से जीवन व्यतीत कर सकते हैं। इस हेतु सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है:-

सरस्वती कंचन होवे, नाम ते ध्यान होवे।
भक्ति ते शक्ति होवे, प्रेम ते मस्ती होव।
एहो दिल मँगदा, प्रेम ते मस्ती होवे।।

सम होवे संतोष होवे, धैर्य ते विचार होवे।
वैराग वाली डोर होवे, सुरत चरणां दे कोल होवे।
एहो दिल मँगदा, सुरत चरणां दे कोल होवे।।

रघुवर जी दयाल होवे, नाल बलधार होवे।
हृदय विच उमंग होवे, महाबीर प्यारा संग होवे।।

एहो चढ़या रंग होवे, जगत देख के दंग होवे।
एहो दिल मँगदा जगत देख के दंग होवे।।

इस तरह हम आत्मविश्वास व आत्मनिर्भरता द्वारा अपने जीवन के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए जो भी साधन आवश्यक हैं उन्हें विधि के विधान अनुसार विधाता से प्राप्त कर विश्राम अवस्था में बने रहें। निश्चित ही तभी हम जगत पर निर्भर न रहते हुए, इस मृतलोक में स्वतन्त्रता से जीवन व्यतीत कर पाएंगे और निष्कामता से अपने असली घर की ओर प्रस्थान कर परमपद को प्राप्त कर पाएंगे। अतः ये सब जानने के पश्चात हमारे लिए बनता है कि हम समभाव नज़रों में कर समदर्शिता अनुसार सत्य-धर्म पर सुदृढ़ता से बने नित्यभाव से जीवन जिएँ :-

तो क्या सारे इस हेतु तैयार हैं।

हाँ जी।

तो हिम्मत जुटाना और जो आचार-विचार अभी आपको बताया जाए उस पर मज़बूत बने रहना:-

1. ब्रह्म विद्या द्वारा प्राप्त ज्ञान से अपना बलवर्द्धन कर, उसी विचारधारा अनुसार चलन अपनाकर निराशा, आलस्य और पौरुषहीनता से बचें व अपने निर्धारित कर्त्तव्यों अनुसार सभी कार्य करना सुनिश्चित करें।

2. युवावस्था की भक्ति यानि समभाव-समदृष्टि की युक्ति द्वारा स्वयं को ताकतवर मानें और इस प्रकार निर्भय व स्वतन्त्र बने रहें। किसी के अधीन होकर कदापि

कुकर्म-अधर्म न करें।

3. अपने अन्तःकरण को निष्पाप व शुद्ध रखते हुए अपने शाश्वत नित्य स्वरूप में स्थित बने रहें। इस तरह पूर्ण संतोष का अनुभव करते हुए, धैर्य पूर्वक सच्चाई-धर्म के मार्ग पर बने रह सदैव निष्काम कर्म करें।

4. ब्रह्मचारी यानी ब्रह्म के अनुशासन अनुरूप आचरणशील रहते हुए परस्पर सज्जनता पूर्ण व्यवहार करें।

5. आत्मा की अजरता-अमरता पर पूर्ण विश्वास रखें व परमात्मा के प्रति पूर्ण श्रद्धावान बने रहें। शारीरिक विषयों में आसक्त होने की भूल न करें। याद रखें कि शरीर नाशवान है इसलिए मृत्यु व कष्ट क्लेशों से भयभीत न हों।

6. बाह्य आडम्बरों के स्थान पर एकाग्रता से अपने सूक्ष्म चेतन तत्व में बने रहें। शारीरिक, बौद्धिक व मानसिक विकारों से बचे रह पूर्ण स्वस्थता यानि युवावस्था को प्राप्त हों।

7. द्वि-द्वेष रहित हो समचित्त बने रहें। सर्वहित को ध्यान में रखकर आपस में प्रेम रखें व संगठित होकर कार्य करने के लिए याद रखें कि जहाँ स्वार्थ के चिन्तन से मन विकार ग्रस्त होता है वहीं आत्मभाव में बने रहने से आपसी एकता पनपती है। याद रखें कि यह निर्विकार अवस्था प्राप्त करने के लिए आवश्यक है।

8. केवल सत्य ही धारें, बोलें व वर्त्त-वर्त्ताव में लाएँ। याद रखें सत्य के प्रभाव से एक तो वाणी प्रभावशाली बनती है दूसरे उसमें मधुरता और विनम्रता झलकती है। इसलिए निर्भयता से जगत में विचरने, सम्बन्धों को ठीक ढंग से निभाने व सदा सत्य की रक्षा के लिए कुछ भी त्यागने से न सकुचाएँ। यह धर्मपरायण बनने व अपना जीवन-लक्ष्य प्राप्त करने के लिए आवश्यक है।

9. इन्द्रियों व मन को नियन्त्रण में रखने के लिए मन और बुद्धि की समता बनाए रखें व विवेकशील बने रहें। यह सभी प्रकार के रोगों व विकारों से बचे रह सज्जनभाव अनुरूप सम्मानपूर्वक जीवन जीने के लिए आवश्यक है। याद रखें कि इसी नियन्त्रण के परिणामस्वरूप सात्विक आहार-विहार व ज्ञानधारणा सुनिश्चित कर हम अपनी मनःस्थिति संतुलित रखते हुए काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार व ईर्ष्या आदि से बचे रह सूक्ष्मदर्शी व दूरदर्शी बन सकते हैं। यह अहिंसा का सिद्धान्त अपनाने एवं हीन भावना व संकीर्णता का त्याग कर गंभीरता के गुण को धारण करने की बात है।

10. मानव धर्म की मर्यादा में बने रहें एवं कामनाओं के चक्रव्यूह में फँस निषिद्ध कर्म न करें। यह मानसिक चिंताओं, शोक-संताप व पापकर्मों से बचे रहने के साथ-साथ गृहस्थ के फ़र्ज-अदा को हँसकर पूरा करने की बात है। याद रखें कि धन का संचय लोभ में फँसाता है व छल-कपट द्वारा दूसरों के धन-सम्पत्ति

पर अधिकार की कामना इन्सान के नैतिक पतन का कारण बनती है ऐसा न हो इसके लिए आवश्यकता और इच्छा में अन्तर करना सीखें। अपनी हैसियत में बने रह, अपने धन को स्वार्थ सिद्धि हेतु व्यय करने के साथ-साथ परमार्थ के कार्यों में लगाना न भूलें।

11. अकर्त्ता भाव से सब कर्म धर्मसंगत करते हुए कर्मफल से बचे रहें। इस हेतु निष्काम कर्म का महत्त्व स्वयं समझें व सबको समझाएँ ताकि हममें से कोई भी शारीरिक हौं-मैं के प्रभाव से सांसारिकता में उलझ मनमत अनुसार ईश्वरीय हुक्म से विमुखता का चलन न अपना बैठे।

12. सर्वव्यापक, सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान परमेश्वर को ज़र्रे-ज़र्रे में अनुभव करते हुए उसी के प्रति पूर्ण श्रद्धा व विश्वास रखें व ईश्वरीय अनुशासन का सत्यनिष्ठा से पालन करते हुए सबके साथ सज्जनता का व्यवहार करने में प्रवीण बनें।

13. परमपिता परमेश्वर की गोदी में पूर्ण समर्पण भाव से बने रह गृहस्थ आश्रम सतयुग बनाने व परमपद प्राप्त कर अपना व अपने परिवार का कल्याण सुनिश्चित करने हेतु हम ध्यान-कक्ष से प्राप्त होने वाली शाश्वत ब्रह्मविद्या को प्राप्त कर उसे विधिवत् अमल में लाने के योग्य बनें व बिना किसी वाद-विवाद इन्हीं विचारों पर समर्पित भाव से एकरस बने रह शुभ लाभ प्राप्त करें।।

याद रखो यदि हम आद् अक्षर के अजपा जाप द्वारा अपना हृदय प्रकाशित रख सोऽहम् यानि अपने ज्योतिस्वरूप 'मैं

ईश्वर हूँ' अनुरूप आत्मभाव पर स्थिरता से बने रहेंगे तो हमारे लिए उपर्लिखित विचारधारा अनुरूप चलन अपनाना किसी भी प्रकार से कठिन काम नहीं रहेगा।

इसलिए हिम्मत बढ़ाओ और इसी विचारधारा को अपना लो व अच्छे व नेक इंसान बन परमपद को प्राप्त करो।

अन्ततः हम सबसे प्रार्थना करते हैं कि अपने यथार्थ ज्योतिस्वरूप में बने रह मानवता अनुरूप चलन अपना निष्कामभाव से कर्म करते हुए परोपकार कमाने हेतु ब्रह्मविचारों को आत्मसात् करने में कोई कमज़ोरी मत दिखाना। जानो और याद रखो कि यही एक श्रेष्ठ मानव की तरह जीवन जीने व कुल सृष्टि को सतयुगी आचार-व्यवहार अपनाने के प्रति प्रेरित करने का तरीका है।

शुभकामनाओं सहित।

जब अंश हूँ मैं प्रभु तेरा, तो फ़रक कहाँ हैं तेरा मेरा।
हम एक हैं हम एक हैं, हम एकता के प्रतीक हैं।।

तूं सर्व में है तो क्या हुआ, मैं शरीर में हूँ तो क्या हुआ।
मैं तेरी सत्ता का ही रूप हूँ, तूँ अनूप है मैं अनूप हूँ।।
जब अंश हूँ मैं प्रभु तेरा, तो फ़रक कहाँ हैं तेरा मेरा।।

न जन्म में हूँ न मरण में हूँ, हुआ नाश मेरा कभी नहीं।
मैं तेरी तरह ही तो अजर हूँ, मैं तेरी तरह ही तो अमर हूँ।।
जब अंश हूँ मैं प्रभु तेरा, तो फ़रक कहाँ हैं तेरा मेरा।।

जो भी देखता है इस तरफ़, उसे नज़र आ जाते हो तुम।
वहाँ मैं अलग होता नहीं, होते तो हो इक तुम ही तुम।।
जब अँश हूँ मैं प्रभु तेरा, तो फरक कहाँ है तेरा मेरा।।

अंश आद में ही बना रहे, अंश आद से ही सजा रहे ।
यही सत्य हो, यही सत्य है, यही सत्य हो, यही सत्य है।।
जब अंश हूँ मैं प्रभु तेरा, तो फ़रक कहाँ हैं तेरा मेरा।।

जब अंश हूँ मैं प्रभु तेरा, तो फ़रक कहाँ है तेरा मेरा।
हम एक हैं हम एक हैं, हम एकता के प्रतीक हैं।।
जब अंश हूँ मैं प्रभु तेरा, तो फ़रक कहाँ है तेरा मेरा।।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरान्त सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियनत्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 19 जुलाई 2015 का सबक

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्मा-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

आओ अब परमपिता परमेश्वर की महाशक्ति माता स्वरूप कुदरत को पूर्ण रूप से वेद-शास्त्र अनुसार समझें व मानवता अनुरूप कुदरती गुणों पर बने रहें। जानो कि सृष्टि के प्रारम्भ में स्वयम्भू परमात्मा से जिस दिव्य वाणी का प्रादुर्भाव हुआ उसे वेद कहते हैं इसलिए वेद विदित ज्ञान को कुदरती नित्य वाणी मानो। इस कुदरती, अपौरुषेय सत्य को, प्रमाणित करने वाले ज्ञान को, अफुर होकर समाधि द्वारा, आत्मतत्व से एकाकार होकर पाया जाता है। इसीलिए वेदों

को आत्मसाक्षात्कार द्वारा प्राप्त ज्ञान का आदि भंडार कहते हैं। इनकी शिक्षाओं में छिपे वे अपरिवर्तनीय मूल तत्व हैं जो हर काल, समय व परिस्थिति में लागू होते हैं। यह मान्यता है कि परमात्मा ने सृष्टि के प्रारम्भ में ही मनुष्य के लिए वेद के रूप में आवश्यक ज्ञान का प्रकाश कर दिया था जिससे संसार की समस्त गतिविधियाँ चलीं।

मानसिक रूप से एक अवस्था के परिणामस्वरूप सर्वत्र सुख-शांति, आनन्द और एकता बनी रही। वर्तमान परिस्थितियों में भी यह सत्यज्ञान पूर्णतः व्यावहारिक व विज्ञान सम्मत है।

तभी तो कहा गया है कि भूत, वर्तमान व भविष्य सम्बन्धी सम्पूर्ण ज्ञान का आधार हृदय विदित वेद हैं और सत्य का अनुशीलन करने हेतु इस ज्ञान की अनुभूति, चेतना के उच्चतम स्तर पर बने रहकर ही की जा सकती है। इसके विपरीत चेतना के इस सर्वोच्च स्तर से गिर जाने के कारण ही इन्सान आत्मिक ज्ञान प्राप्त करने व जीवन में उसका प्रयोग करने में नाकाबिल हो जाता है। यही उसके इन्सानियत से गिर नीच पाप कर्म करने का मुख्य कारण होता है।

जानो कि सत्य व ज्ञानरूप में हमारे अंतःकरण में संपूर्ण जगत विद्यमान है। बाहर तो मात्र प्रतिबिम्ब स्वरूप में उस जगत की छाया है यानि फुरने के रूप में उसका पसारा है। याद रखो जो मनुष्य जगत के इस सत्य से परिचित होकर संसार में विचरता है उसी का ख़्याल व ध्यान अपने

असलियत स्वरूप में स्थिर रह पाता है और वह बुद्धिमान व बलवान जगत विहार के दौरान स्वधर्म पर निर्लिप्तता से सुदृढ़ बना रह पाता है। अतः हम कह सकते हैं कि जगत में विचरने के लिए 'ब्रह्म, प्रकृति व शरीरधारी आत्मा' इन तीनों का ही अत्यधिक महत्त्व है।

ध्यान दो, हृदय विदित ब्रह्म के ज्ञान अनुरूप जब हम इस भौतिक-जगत को देखते हैं तो सर्वत्र उसी परम सत्ता की विद्यमानता का अनुभव कर, आत्मज्ञान द्वारा उस परब्रह्म की पहचान कर पाते हैं। इस प्रकार ब्रह्ममय, ब्रह्मज्ञानी संपूर्ण सृष्टि को तत्वरूप से जान जाता है और यह मान लेता है कि आत्मरूप में हम सभी अंश, उसी एक परमपिता परमात्मा के वंशज हैं इसलिए आत्मभाव में यथा बने रहना ही अपने असलियत ज्योतिस्वरूप में स्थित व स्थिर बने रहने की बात है।

यही नहीं इसके अतिरिक्त वह केवल परमात्मा के तेज के संयोग से चलने वाले विश्वचक्र को अपनी मनःशक्ति से देखकर यह समझ लेता है कि परमात्मा ही प्रत्येक प्राणी को प्रेरणा प्रदान कर रहा है। व्यक्ति जब जड़-चेतन सृष्टि को इसी आत्मतत्व में अनुभव करता है तथा सभी प्राणियों में इसी आत्मतत्व को समाहित अनुभव करता है तब वह किसी भी प्रकार भ्रमित नहीं होता।

जब व्यक्ति यह सत्य जान लेता है कि यह आत्मतत्व ही समस्त प्राणियों में प्रकट हुआ है, तो उस एकत्व की अनुभूति में वह मोह व शोक रहित हो जाता है। साथ ही ब्रह्म विद्या

उसे ऐसी सद्‌बुद्धि प्रदान करती है कि वह आत्मतुष्ट संकल्परहित अवस्था में बने रह, आत्मभाव अनुरूप परस्पर प्रेमपूर्ण आचार-व्यवहार करने लगता है। यही तो होता है निष्काम रास्ते पर चलते हुए परोपकार प्रवृत्ति में बने रहना। याद रखो पदार्थज्ञान पदार्थ के साथ नष्ट हो जाता है किन्तु चेतना से उत्पन्न आत्मिक ज्ञान शाश्वत है।

इस ज्ञान को समझने के लिए श्रद्धा व विश्वास सहित स्व-अनुभूति की क्षमता को विकसित करना आवश्यक है। जानो कि यह वाद-विवाद या तर्क-वितर्क का विषय कदापि नहीं है। आओ अब ब्रह्म-वाणी अनुसार कुदरत से सम्बन्धित कुछ मुख्य बातों को समझने का प्रयास करें व उस वाणी से बाल्यावस्था से ही अपने बच्चों को, परिवार और समाज को यथा परिचित कराने के योग्य बनें :-

1. यह जानो कि सभी उत्पत्तिशील पदार्थों का स्वामी एक ही परमात्मा है। परमात्मा व्यक्ति नहीं शक्ति है। वह शक्ति सत्य व ज्ञानरूप ब्रह्म के रूप में समस्त लोकों में विद्यमान है। वह ही समस्त प्राणियों को धारण करने वाला व उनका पोषण करने वाला है। चारों दिशाएँ उसी एक ब्रह्म की ही हैं। स्वर्गलोक, पृथ्वीलोक व अन्तरिक्ष उसी ब्रह्म के शरीर हैं तथा पृथ्वी पर जीवन प्रक्रिया उसी के अनुशासन से चलती है। वह सब पर समान रूप से अपनी कृपा बनाए हुए है।

2. सर्वव्यापक परमात्मा के सृष्टि संचालन सम्बन्धी कार्यों को (प्रजनन, पोषण व परिवर्तन की क्रिया को) ध्यान से समझने की आवश्यकता है क्योंकि इनमें अनेकानेक नियमों

व अनुशासन का पालन किया जाता है। परमात्मा के अनुशासन का उल्लंघन करने वाले लोग इस जगत में शरीर के नश्वर भाव से जीते हैं यानि शारीरिक इन्द्रियों की शक्ति पर निर्भर रहते हैं और जीवन भर अज्ञान से घिरे रहते हैं। इसीलिए उनके लिए अपने जीवनकाल में अपने ईश्वरीय स्वरूप अनुसार नित्य भाव में बने रह निर्वैर, निर्भय, निर्दोष व निर्विकार अवस्था में बने रहना कठिन होता है।

3. परमात्मा आत्मज्ञान के प्रेरक और बलदाता हैं, मृत्यु भी उन्हीं के अधीन है। वही इस पृथ्वी सहित सभी लोकों को भी धारण किए हुए है। इस सृष्टि की उत्पत्ति कैसे हुई, इसकी रचना किसने की, ये सभी वही एकमात्र परमेश्वर ही जानते हैं जो परमधाम में रहते हैं।

4. पंचतत्वों (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश) से निर्मित यह सृष्टि अविनाशी है। जो कुछ उत्पन्न हो चुका है व उत्पन्न होने वाला है वह भी अपने कारणरूप से कभी नष्ट नहीं होता है। परम सत्ता द्वारा इसी प्रकार विविधतापूर्ण सृष्टि को प्रकट या विलीन करने का क्रम चलता रहता है।

5. मनुष्य इस आधार रूपा माता प्रकृति यानि कुदरत से ही उत्पन्न हुआ है एवं निरन्तर पोषित हो रहा है। मनुष्य का शरीर प्रकृति के पंचतत्वों से ही निर्मित है। कुदरत को भलीभाँति समझने के लिए मानव जीवन में पंचतत्वों की महत्ता से परिचित होना भी आवश्यक है।

6. जानो कि पृथ्वी पर उत्पादक तेजस के सिंचन से

अनुशासनबद्ध सृजन प्रक्रिया प्रारम्भ होती है यानि उसी से पदार्थों की संरचना का क्रम प्रारम्भ होता है। कुदरती दिव्य शक्ति ही इस शरीर व आत्मा को जोड़े रखती है। वही इस शरीर रूपी घर में अजर-अमर होकर निवास करती है और वही सनातन शक्ति प्रकृति के कण-कण में आद् से विद्यमान है। वह अकेले ही जनचर-बनचर, जड़-चेतन प्रत्येक प्राणी का पालन कर रही है।

7 भूमि हमारा पालन-पोषण व संरक्षण करती है तथा रोगनाशक औषधियों को धारण करती है, अतः आवश्यक है कि भिन्न-भिन्न स्वभाव, गुण व कर्म वाले सभी मनुष्य सामंजस्य पूर्ण व एकता के भाव से पृथ्वी पर रहें क्योंकि स्वार्थपूर्ण व महत्वाकांक्षाओं से ग्रस्त लोग मातृभूमि को पुष्ट व विकसित नहीं कर सकते।

8. याद रखो कि कुदरत द्वारा निर्मित शरीर या विराट प्रकृति में जब कोई भी टूट-फूट होती है तो बिना किसी जोड़ने वाले पदार्थ की सहायता के वह उन अंगों को पुनः जोड़ देती है। इस प्रकार शरीर के रक्तस्राव या प्रकृति के ऊर्जा-प्रवाहों के नष्ट होने से पहले ही प्राकृतिक रूप से उनका उपचार हो जाता है।

9. सूर्य को जगत का जन्मदाता माना जाता है क्योंकि सूर्य में पदार्थ की पूर्णता दिखाई देती है। प्रभात कालीन सूर्य, प्राणियों को स्वास्थ्य-प्रद पोषक तत्व प्रदान करता है तथा सभी कर्मों को करने के लिए हमारी बुद्धि को प्रेरित करता है। प्रभातबेला में हमें प्राण रूपी जीवनी शक्ति का संचार प्राप्त

होता है। हम सभी उस जीवनी शक्ति को नित्य-प्रति प्राप्त करते हैं। प्रकृति प्रदत्त वायु से हमारे प्राणों की व सूर्य से हमारी नेत्र-ज्योति की रक्षा होती है। इसीलिए ज्ञानी मनुष्य इस तथ्य से परिचित होते हुए सूर्योदय से पहले उठकर सूर्य रश्मियों में सन्निहित प्राणतत्व रूपी रत्नों के लाभ से कृतकृत्य (धन्य) होते हैं और स्वस्थ जीवन प्राप्त कर संतानों के लाभ से युक्त होकर धन-संपदा और दीर्घायु प्राप्त करते हैं।

10. सूर्य की सूक्ष्म किरणों का प्रवाह पृथ्वी से आकाश की ओर तथा आकाश से पृथ्वी की ओर निरंतर गतिशील हैं। यह प्रवाह पृथ्वी के किसी भी अर्द्ध भाग (हैमिस्फेयर) को छूते हुए निकल जाता हैं जिसके प्रभाव से जीवन-तत्व प्रकट हो जाता है। जानो कि किसी भी ऊर्जा-स्रोत से उभरने वाले ऊर्जा प्रवाह अपने स्रोत से जुड़े रहते हैं। वे ऊर्जा प्रवाह जब किसी पदार्थ या प्राणी तक पहुँच जाते हैं, तो वे उन पदार्थों या प्राणियों द्वारा धारण किए जाते हैं और उन्हीं प्राणियों के अंगों के तन्त्र बनने के लिए ऊर्जा-स्रोत के बंधन से मुक्त हो जाते हैं।

11. सूर्य का ओज, ताप व प्रकाश हमारे शरीर में त्रिधातुओं (वात, पित्त और कफ) को पुष्ट करता है। इस प्रकार सूर्य अपने एक ही ओज को तीन प्रकार से हमारे शरीर में प्रसारित करता है। सूर्य-ऊर्जा से शरीर में विशेष प्रकार के पदार्थ का निर्माण होता है जिस पर हमारी शारीरिक स्वस्थता निर्भर करती है।

12. प्रकृति उर्वरक उत्पादक है और हमें अनेक प्रकार के

पोषक पदार्थ स्नेहपूर्वक देती है। पृथ्वी में गुरुत्वाकर्षण शक्ति है जिसके द्वारा वह हमारे रोगों का निदान कर पुनः ऊर्जा प्रदान करती है इसीलिए प्रातःकाल की ओसकणों से युक्त घास पर व पृथ्वी पर नंगे पैर चलने का विधान है।

13. सूर्य व बादल दोनों मिलकर पृथ्वी को उत्पादक शक्तियों से भर देते हैं। बादल वर्षा द्वारा भूमि को गीला करते हैं और भूमि प्राणी जगत के लिए धन-धान्य अर्थात् अनाज, औषधियाँ व वनस्पतियाँ उपजाती है। इस प्रकार सूर्य की विभिन्न गुण-धर्मों वाली किरणें वर्षा के जल में मिलकर पृथ्वी को पोषक तत्वों से भरपूर कर देती हैं जो भिन्न-भिन्न प्रकार के जीव, वनस्पतियों, खनिज पदार्थों व रत्नों आदि को विशिष्ट प्रकार के पोषण प्रदान करती हैं।

14. वृक्ष या अन्य वनस्पतियाँ जिस प्रकार प्रकृति के सूक्ष्म प्रवाहों से अपना आहार प्राप्त करके बढ़ती व पुष्ट होती हैं, उसी प्रकार मनुष्य को भी निरन्तर वह सूक्ष्म प्रवाह प्राप्त होता है। इस जीवन रूपी वृक्ष के जीवन-तत्व की आपूर्ति का आधार आकाश में उपलब्ध इष्ट का सूक्ष्म प्रवाह है।

यह अविनाशी जीवन-तत्व हमारे शारीरिक व मानसिक विकारों को नष्ट करने वाला है। अतः एकाग्रता से अपने भीतर इष्ट के सूक्ष्म प्रवाह का अनुभव करते हुए अपने शारीरिक, बौद्धिक व मानसिक विकारों को दूर कर स्वस्थ व पराक्रमी बनो क्योंकि पराक्रमी व्यक्ति से ही पराक्रमी सन्तान की उत्पत्ति होती है। अन्यथा शक्तिहीन व्यक्ति प्रकृति प्रदत्त सृजन की क्षमता में असफल ही रहता है।

15. वैज्ञानिक मानते हैं कि सूक्ष्म ऊर्जा रूपी कणों की वर्षा निरन्तर सभी ओर से भूमण्डल पर होती है। यह सूक्ष्म ऊर्जा प्रवाह जीवन-तत्व की आपूर्ति का आधार है जिसके कारण तेजस्वी पुरुष व अन्य जीवधारी अपन खाद्यों, औषधियों और शारीरिक क्षमताओं के संयोग से गर्भाधान की क्षमता रखते हैं।

इसे सूक्ष्मदर्शी व दूरदर्शी विवेक बुद्धि द्वारा नियन्त्रित भी किया जा सकता है। सूक्ष्म ऊर्जा प्रवाह बल, तेज व आनन्द प्रदायक है। इस प्रकार कुदरत का यह कार्य प्राणी जगत के पोषण के लिए स्वयमेव ही होता है अतः सूर्योदय से पहले जागकर प्रकृति द्वारा प्रदान की हुई प्राणवायु व प्रातःकालीन सूर्यकिरणों से प्रकाश ग्रहण करो तथा आद् अक्षर व नाम के अजपा जाप की आवश्यकता को समझकर उसे नियम से करो।

16. परमात्मा ने सभी प्राणियों में प्राण शक्ति को भिन्न-भिन्न ढंग से धारण किया है। प्राणियों की निद्रावस्था में भी वे उनकी रक्षा के लिए जागते रहते हैं यानि प्राणियों के सोने पर भी प्राण (श्वास-प्रश्वास) सोते नहीं, श्वास प्रक्रिया चलती रहती है। प्राण प्रवाह ही शरीर के पाचन, रक्त संचरण आदि संस्थानों को गतिशील रखता है। रात्रि में हम संज्ञाशून्य निश्चेष्ट होकर सोते हैं और प्रातः पुनः सचेत हो जाते हैं, इस तरह हम प्रतिदिन नया जन्म लेते हैं अर्थात् कुदरत ही हमें आरोग्यवर्द्धक जीवन-शक्ति देती है।

17 जानो कि पृथ्वी पर प्राणियों द्वारा त्यागा हुआ मल व

कूड़ा-करकट आदि खाद बन जाते है जो भूमि की उपजाऊ शक्ति को बढ़ाते हैं और अन्न, वनस्पति व खाद्य पदार्थ आदि प्रचुर मात्रा में उत्पन्न होते हैं। वृक्ष व वनस्पतियाँ वातावरण में व्याप्त अशुद्ध वायु (कार्बनडाइ ऑक्साइड) को पुनः शुद्ध वायु (ऑक्सीजन) में बदल देते हैं इस प्रकार प्राणियों के उच्छिष्ट से वृक्ष-वनस्पति का तथा वनस्पति-वृक्ष आदि से प्राणियों के उत्पन्न होने का क्रम चलता रहता है। यही प्राकृतिक वातावरण के संतुलन का आधार है। इसीलिए प्राकृतिक वातावरण को स्वच्छ रखने का विधान है।

अतः सजनों सर्वरूपेण स्वस्थ बने रहने के लिए कुदरत ने जो विधान बनाया है उसका स्वयं तो पालन करो ही साथ ही इसका ज्ञान बाल्यावस्था से अपने बच्चों को भी कराओ। याद रखो कुदरती नियमों का पालन करने पर ही आपकी मन और बुद्धि का योग बना रह पाएगा और वियोग जो दुःख का कारण है उसका सामना नहीं करना पड़ेगा।

सजनो कुदरत के विषय में विस्तार से जानने के पश्चात हमें कुदरत के कार्य करने के ढंग से प्रेरणा लेने की आवश्यकता है। जिस प्रकार वायु, जल, मेघ, सूर्य का ताप व पृथ्वी की शक्ति आदि के संगठन से कुदरती विकास प्रक्रिया निरन्तर चलती है उसी प्रकार संगठित रूप से किए हुए मानवीय कर्म भी सिद्ध होते हैं क्योंकि कोई भी बाधा कार्य सिद्धि में विघ्न उत्पन्न नहीं कर पाती। स्पष्ट है कि बिखरी हुई शक्ति वाले शरीरों से कर्मों की सिद्धि नहीं होती। अतः हमें संगठित होकर पूर्ण लगन व एकता से समस्त कार्य करने के योग्य

बनना है। तभी हम एक भाव व एक विचार हो पाएंगे और हर कार्य करना हमारे लिए सरल हो जाएगा।

याद रखो कि अनेक प्रकार के पोषक पदार्थ देकर कुदरत हमारा पालन-पोषण व संरक्षण करती है। कुदरत के इस उपकार को जानकर, हमें उसके प्रति अपने कर्तव्यों का बोध होना चाहिए। पदार्थो में भोग-विलास तथा व्यर्थ वैभव प्रदर्शन करने से कुदरती शारीरिक, मानसिक व बौद्धिक संतुलन बिगड़ता है इसलिए हमें अहंकारवश अपनी प्रतिभा प्रकट करने के लिए माता स्वरूप प्रकृति का विनाश करने के स्थान पर प्रकृति से प्रेरणा लेकर निष्काम भाव से परोपकार प्रवृत्ति अपनानी चाहिए। हमारे लिए आवश्यक है कि प्रकृति द्वारा प्रदान किए हुए पदार्थों का प्रयोग कभी भी स्वार्थपूर्ण कार्यों में न करके केवल परमार्थ के लिए ही करें।

सदा याद रखें कि प्राकृतिक नियमों के उल्लंघन यानि मानवीय चेतना के विपरीत स्वार्थपूर्ण कार्यों के कारण मनुष्यों में विभिन्न प्रकार की मानसिक ग्रन्थियाँ बनती हैं जिनसे रोग उत्पन्न होते हैं और मनुष्यत्व को धारण करने में कठिनाई उत्पन्न होती है अतः स्वस्थ व शक्तिशाली बने रहने के लिए वैर-भाव मिटाकर कुदरती नियमों के अनुसार एकता व प्रेम से जीवन जीना सुनिश्चित करें। इस हेतु जानें:-

1. मनुष्य के अंतःकरण के चार विभाग हैं। मन, बुद्धि, चित्त व अहंकार। सफल मानव जीवन के लिए इनमें से प्रथम दो विभागों यानि मन और बुद्धि की समता अत्यन्त अनिवार्य है। मन व बुद्धि की समता से वाणी सत्ययुक्त व उपयोगी हो

जाती है और चित्त में ब्रह्मभाव का संस्कार वृद्धि पाता है, साथ ही शरीरी अहंकार के स्थान पर सोऽहम् के बोध से आत्मा में परमात्मा के सत्य का बोध करके व्यक्ति परम-लक्ष्य अर्थात् मोक्ष को प्राप्त करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि सर्वप्रथम आवश्यक है मन और बुद्धि की समता, दूसरा चित्त में ब्रह्म-संस्कारों की वृद्धि, तीसरे निज का बोध अर्थात् आत्मा में परमात्मा का अनुभव। ऐसी समुच्च्य एकाग्रता जब संभव हो जाती हैं तो व्यक्ति परम लक्ष्य प्राप्त करने का अधिकारी बनता है।

2. सजनो पारिवारिक एकता, सुख व शान्ति हेतु हमें ऐसे कर्म करने चाहिए जिनसे परस्पर प्रेम व स्नेह भावना बढ़े। पति-पत्नी में सदैव परस्पर स्नेह, पवित्र प्रेम व अटल विश्वास रहे। उनके हृदय व मन एक समान धारणा वाले हों। पिता-पुत्र परस्पर अनुकूल कर्म करें। आपस में मधुर व सुख देने वाली कल्याणकारी वाणी का व्यवहार करें। भाई-बहन, भाई-भाई व बहन-बहन आपस में विद्वेष पूर्ण कलह-क्लेश न करें।

3. परिवार के सभी सदस्यों के विचार एक जैसे हों। अपने से छोटों व बड़ों का समानता पूर्वक ध्यान रखते हुए प्रेमपूर्वक व्यवहार करने से परिवार में सदा वातावरण शान्त बना रहता है और परमेश्वर का संग बना रहता है। इस प्रकार वह परमेश्वर सत्यता से हमारे कार्यों में स्वयं प्रवृत हो जाता है और हम एक समान विचारों से संपादित होने वाले ज्ञान का प्रयोग कर सकते हैं।

4. जानो कि ईर्ष्यालु व्यक्ति संवेदनाहीन व क्रूर हो जाता है अतः अपने हृदय से ईर्ष्या-द्वेष के भाव को दूर कर दें। यह भी याद रखें कि क्रोध मित्रता में बाधक है, इससे मन एक नहीं हो पाते। क्रोधी व्यक्ति अनियंत्रित व अस्थिर मनःस्थिति वाला होता है जबकि क्रोध विहीन मन शांत बना रहता है। इस तरह प्रत्येक तथ्य का मनन करने वाला एक शान्त व संयमी व्यक्ति ही स्वयं संतुलित मनःस्थिति में रहते हुए सज्जनतापूर्ण आचरण द्वारा दुष्टता का विरोध कर सकता है व शत्रुओं को नियन्त्रण में रख सकता है।

5. संयम पूर्वक चित्त-वृत्तियों का निरोध करें। बिना अंकुश के वृत्तियाँ असंयत होकर अपना वैभव खो देती हैं क्योंकि उसके विचार, आचरण व कार्य नियमबद्ध नहीं रहते। याद रखो कि शक्तियाँ संयम व अनुशासन में ही फलित होती हैं यानि बिना संयम के धारण नहीं की जा सकतीं और संयम साधना करने वाले व्यक्ति को ही शक्ति प्राप्त होती है।

6. वैवाहिक जीवन में परिपक्व मानसिक व शारीरिक स्थिति बन जाने पर ही दंपतियों को आवश्यकता के अनुरूप संतान पैदा करने का निर्देश है। काम के वशीभूत हो व्यसन के लिए पत्नी के समीप न जाएँ। याद रखो संयमित व धैर्यवान व्यक्तियों की सन्तानें ही जीवन की चुनौतियों में सदा विजयी होती हैं।

7. स्वयं को वश में करने हेतु यदि यह प्रक्रिया सफल न हो रही हो तो बहकने वाली मनोवृत्तियों पर विशेष अंकुश लगाकर दमन-प्रक्रिया के द्वारा उनसे मुक्ति पाने का विशेष

प्रयत्न करें। भौतिक सुखों की अपेक्षा परम कल्याण यानि मोक्ष के मार्ग को प्रधान मानें और पुरुषार्थी बन विकारों रूपी अपने शत्रुओं का दमन करते हुए शांत चित्त बने रहें।

8. याद रखो कि पौष्टिक अन्न के सेवन से शरीर बलशाली बनता है व संयम से इन्द्रियों के विकार रूपी शत्रुओं का नाश होता है। (यहाँ प्राण, अपान, चक्षुरूप, रसरूप शत्रुओं का वर्णन इसलिए हुआ है कि हमारी जिह्वा रसरूप शत्रु व चक्षु दृश्यरूप शत्रु हो सकते हैं। प्राण व अपान से यहाँ तात्पर्य श्वास संयम से है।) शरीर में व्याप्त विष को समाप्त करने के लिए इतना शारीरिक श्रम करें कि उसके ताप से चर्बी गलने लगे। याद रखो कि भूख के अनुरूप औषधि मिश्रित सात्विक भोजन करने से विष का प्रभाव बढ़ने की अपेक्षा घट जाता है।

9. शारीरिक शक्ति से बहादुर कहलाने वाले व्यक्ति बाह्य जगत में तो विजयी हो जाते हैं, परंतु अपनी दुष्प्रवृत्तियों और अहंकार आदि के कारण उनके अन्दर निरन्तर अन्तर्द्वन्द्व चलता रहता है। फलस्वरूप ऐसे आत्म-पराजित व्यक्ति अपना जीवनलक्ष्य प्राप्त करने में असफल हो जाते हैं। याद रखो कि मलिन-बुद्धि व्यक्ति ही पाप-कर्मों में लिप्त होते हैं तथा विनाश को प्राप्त होते हैं किन्तु अपने आत्मबल व सज्जनता पूर्ण व्यवहार से एक आत्मज्ञानी सबको अपना मित्र बना लेता है।

10. सदा याद रखो कि पापकर्मों से अर्जित संपदा आकर्षक

तो लगती है, किंतु वह व्यक्ति, परिवार एवं समाज के पतन का कारण बनती है। याद रखो कि मनुष्य पाप तभी करता है जब उसे ईश्वरीय अनुशासन से विपरीत क्रियाओं में रस आता है। ऐसा भोगमय जीवन हमें नश्वरता की ओर ले जाता है किन्तु यदि सर्व हितकारी ईश्वरीय अनुशासन के पालन में हमें रस आने लगे, तो हमारे सारे कार्य निष्काम भाव से सम्पन्न होते हैं और हम अमरत्व प्राप्त करते हैं। अतः आत्म-बोध द्वारा संयमित जीवन की प्रेरणा लो क्योंकि अक्षर के निरन्तर अजपा जाप से प्रकाशित बुद्धि मनुष्य के भाव, विचार व कर्मों में एकरूपता आती है तथा व्यक्ति निर्विकार हो जगत में निर्भयता से विचरता है।

11. किसी को मित्र बनाते समय मर्यादाओं का ध्यान रखो केवल बल या धन-सम्पन्नता के आधार पर हीन वृत्ति या हीन कर्म वाले व्यक्तियों को मित्र नहीं बनाना चाहिए। याद रखो कि सज्जन पुरुष दूसरों का भी पोषण करने वाली, परमार्थ के संस्कारों से युक्त सम्पत्ति पाकर ही हर्षित होते हैं क्योंकि वे जानते हैं कि स्वार्थ सिद्ध करने वाली सम्पत्ति प्राप्त करने योग्य नहीं होती।

अभी हमने जाना कि परमेश्वर ने इस सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की रचना की है और वह परम तत्व सभी के भीतर प्रतिष्ठित है। जो व्यक्ति अज्ञान के अंधकार से घिरे होने के कारण, केवल वाद-विवाद, मात्र प्राण रक्षा या पालन-पोषण की चिंता में लगे रहते हैं वे परमेश्वर के सम्बन्ध में व्यर्थ विवाद करते हुए संसार में निरर्थक विचरण करते हैं।

वे परमात्मा का साक्षात्कार कर, अपना जीवन सार्थक नहीं कर पाते। इसलिए अपने मन, वचन व कर्म में एकता रखो। सजनो विचारों और कर्मों में तारतम्यता बनी रहे इसलिए संतोष, धैर्य धारण कर सच्चाई-धर्म के मार्ग पर कुदरती नियमों व नीति अनुसार चलना सुनिश्चित करो और निष्काम भाव से परोपकार करते हुए समचित्तता बनाए रखो। याद रखो कि हुक्म पर ठहरने से मनुष्य कर्मों में लिप्त नहीं होते। विकारमुक्त यानि कुकर्म-अधर्म से रहित जीवन जीने के लिए यही परम कल्याणकारी मार्ग है।

याद रखो जो व्यक्ति स्वार्थवश अपने निजी सुख के लिए दूसरों का या समाज का अहित करते हैं, वे परमात्मा की दृष्टि में दंड के भागीदार बन जाते हैं। उस ऋण से मुक्त होने के लिए उन्हें परमार्थपरक कार्य करने होते हैं। इसी जन्म में निष्काम कर्म द्वारा उनकी पूर्ति कर देने से परलोक या अगले जन्म में दंड नहीं भोगना पड़ता।

अन्ततः सभी सजनों से प्रार्थना है कि सभी भेद-भाव व राग-द्वेष रहित हो, सबके साथ प्राकृतिक नीति-नियमों यानि समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार सज्जनता का व्यवहार करें। सभी मिलजुल कर मित्रता के भाव से चलें, स्नेहपूर्ण जी-जी का व्यवहार करें। सभी के मन, बुद्धि व चित्त समान हों अर्थात् सब एकमत-एकभाव हों। सबके हृदय में एक समान भावनाएँ हों और एक जैसे स्वच्छ संकल्प व विचार हों ताकि हम सब संगठित होकर अपने जीवन-लक्ष्य को पूर्ण कर सकें।

इसी सन्दर्भ में मनुष्य यानि शरीरधारी जीव अपने इसी जीवनकाल में कैसे अपना असली जीवन लक्ष्य 'मोक्ष' प्राप्त कर सकता है, इस विषय पर सविस्तार बातचीत अगले सप्ताह से आरम्भ होगी। अपना यथार्थ शाश्वत सत्य जानने के लिए कि जीव क्या है? वह कैसे शरीर धार जगत में आता है? कैसे उसे इस जगत में कुदरती नीति-नियमों के अनुसार अकर्त्ता भाव में बने रह निर्लिप्तता से विचरना होता है, यह सारी बातचीत ध्यान से सुनना और अपना-अपना आत्मनिरीक्षण कर आत्मनियन्त्रण द्वारा आत्मसुधार करना। याद रखो जो भी अपने निजी यत्न द्वारा इस क्रिया में सफल होगा वह ही सांसारिकता से उबर 'विचार ईश्वर है अपना आप' अनुरूप मानसिकता में स्थिर रहते हुए भूमण्डल में निष्कलंक जीवनयापन कर पुनः परमधाम पहुँच पाएगा। इस हेतु हमारी सबके लिए शुभकामनाएँ।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरान्त सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियन्त्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 26 जुलाई 2015 का सबक

जीव
भाग-1

किश्ती तैयार किश्ती तैयार,
महाबीर दियां दासियां चढ़ो ते उतरो समुद्रो पार।

पंज तत्त घर अपने जाओ,
जीव वेचारे तों उतरम भार उतरम भार।

महाबीर दियां दासियां चढ़ो ते उतरो समुद्रो पार।

आओ अब मौत के भय से निर्भय हो कर जगत से पार उतरने के लिए प्रार्थना करें-

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्म-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

अब सब अपने यथार्थ को समझने व उसे अपनाने हेतु अफुर हो जाओ। सजनों अभी तक हमने प्रकृति के विषय में जाना। इसी क्रम में आगे बढ़ते हुए शरीरधारी आत्मा जिसे जीव कहते हैं और जिसके लिए पाँच तत्वों का शरीर धारण कर, मनुष्य रूप में जगत में मुसाफ़िरों की तरह निष्काम कर्म करते हुए, ईमानदारी से, यथार्थता से कैसे विचरने का विधान है उसे समझते हैं। याद रखो यह सब सत्यता से समझने के लिए हमें स्वयं कुदरत प्रदत्त आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने में प्रवीण होना होता है। आओ अब हम सत्यता से इसके प्रति अपना-अपना आत्म-निरीक्षण करें और अपनी कमियों को दूर करें।

क्या हम परमेश्वर से निष्काम यानि हर इच्छा से रहित होकर प्रीति करते है ? यदि हाँ, तो क्या सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ की वाणी सावधानी से पढ़ने-सुनने को हमारा मन सदा लालायित व तत्पर रहता है? अगर हाँ, तो क्या हमारे मन में उस सतवस्तु के वाली की वह सत्य वाणी पढ़ने व सुनने के उपरान्त उसे जानने हेतु प्रबल तरंगें उठती हैं और फिर क्या हम उस वाणी को अमल में लाने की चेष्टा करते हैं या नहीं? सब इस विषय में अपना नतीजा लो।

अगर नहीं तो जानो कि हम चाहे घर पर या सत्संग में उस कुदरती वाणी को पढ़ें और सुनें। हम सांसारिक फुरनों में गलतान होने के कारण उस परम पिता परमेश्वर की बात सुनी अनसुनी कर टाल देते हैं। यह सबसे बड़ी कमज़ोरी जड़ रूप में हमारे अन्दर घर कर गई है। अतः इस कमज़ोरी को जड़ से उखाड़ फेकों क्योंकि इसी कारण हम अज्ञान के

प्रभाव से दुःखो को प्राप्त करते हैं। इस प्रकार हम निज स्वरूप में बने रहने हेतु परमेश्वर के वचनों को हृदय में धारण कर उसी धर्म अनुकूल सत्यता से जीवन जीने का सौभाग्य खो बैठते हैं और दुर्भाग्य को प्राप्त होते हैं। याद रखो ऐसा करना परमेश्वर की वाणी का तिरस्कार करना है और सदाचारिता के प्रतीक 'विचार ईश्वर है अपना आप' के भाव से हट सांसारिकता में लिप्त हो दुराचारिता से भरा, जन्म-मरण के चक्र में फँसाने वाला रास्ता अपनाना है। ऐसा चलन अपनाने से हम अध्यात्म से विमुख हो अज्ञानवश, आत्मिक ज्ञान प्राप्ति के प्रति रूचि खो बैठते हैं। परिणामस्वरूप जन्म-मरण के चक्रव्यूह में फंस अपना सब गँवा बैठते हैं यानि अपने सच्चे घर के रास्ते से भटक मृतलोक में अटक अपनी आन-बान-शान तीनों ही खो बैठते हैं। जान लो यह पागलपन की निशानी है।

अगर आत्मनिरीक्षण द्वारा लगता है कि पाप कर्मों में उलझाने वाली ऐसी महान भूल हो रही है तो अपने आप को इस लापरवाही से रोको और परमेश्वर की वाणी को प्यार व अफुरता से ग्रहण करते हुए भरपूर सत्कार के साथ उसी अनुसार खुद व्यवहार करो व औरों को भी वैसा ही व्यवहार करने के प्रति प्रेरित करना सुनिश्चित करो। याद रखो यही दुराचारिता से बचने का एकमात्र रास्ता है।

अगर मंज़ूर है तो आओ अब समझते हैं कि मनुष्य चोले में एक जीव निर्भय, निर्वैर, निर्द्वन्द्व, निर्दोष व नित्य यानि अपनी अनुपम कीर्तिशाली अवस्था में बने रह, एक अतिथि की तरह मृत्यलोक का, निष्कलंकता से सफ़र तय कर,

निष्कंटक कैसे अपने घर परमधाम पहुँच विश्राम प्राप्त करता है इसके विषय में जानें:-

सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार :-

'कुदरत ने इन्सान बनाया, ओहदे विच इक जीव बना के
आत्म पद दी खोज करो, अपनी इन्सानी दिखा के'

आगे यह भी कहा गया है:-

माता सजन जी दे गर्भ विच आया,
उस ईश्वर ने तेरा अंग-अंग सजाया
सूरज चाँद दा डिट्ठा प्रकाश,
अपने जन्म नूं न कर घात अपने जन्म नूं न कर घात'

अर्थात् भौतिक विज्ञान के स्थान पर, आत्मपद की खोज कर, उसे प्राप्त करने वाले कुदरती विज्ञान को प्राथमिकता दो। इस हेतु हर हाल में इन्सानियत में बने रहो और गर्भ में आने के अपने उद्देश्य को सिद्ध करने के योग्य बनो।

प्रश्न- क्या आप जानते हो कि मनुष्य का अपना यथार्थ स्वरूप क्या है, और उसके मन, बुद्धि, अहंकार, स्वभाव व समस्त शरीर की क्रिया का आधार क्या होता है?

उत्तर- जी नहीं।

तो जानो आत्मा का संक्षिप्त रूप चैतन्य ही मनुष्य का अपना यथार्थ स्वरूप है। यही मनुष्य के मन, बुद्धि, अहंकार, स्वभाव व समस्त शरीर की क्रिया का आधार है।

प्रश्न- इस चेतन तत्व को क्या कहते हैं?

उत्तर- इस मूल चेतन तत्व को जीव या जीवात्मा कहते हैं जो ब्रह्म का सार भाग कहलाता है। इससे सिद्ध होता है कि जीव और ब्रह्म अलग-अलग नहीं अपितु एक हैं।

प्रश्न- जीव की विशेषता क्या है।

उत्तर- जीव इन्द्रियविशिष्ट यानि इन्द्रियों की विशेषता से युक्त अर्थात् रूप, रस, गंध, स्पर्श, शब्द आदि का अनुभव करने वाला है ।

प्रश्न- क्या अब जानना चाहोगे कि जीवात्मा क्या है?

उत्तर- जी हाँ।

माया के आवरण में ढकी हुई चेतन आत्मा को जीवात्मा कहते हैं। यह ही प्राणियों की चेतन वृत्ति का कारणस्वरूप पदार्थ है। यह नित्य, प्रति शरीर भिन्न और व्यापक है। यद्यपि जीवात्मा अनादि, अनंत तथा अव्यक्त है तथापि जगत की उत्पत्ति करने वाली माया के बलवती होने से कर्म के वश होकर अविद्या से स्वीकृत (अज्ञान से स्वीकार किए गए) गर्भ में प्रवेश करता है। गर्भ में जाकर यही जीवात्मा जानने वाला, स्वाद ग्रहण करने वाला, देखने वाला, गंध ग्रहण करने वाला, स्पर्श का बोध करने वाला, सुनने वाला, बोलने वाला, गमन करने वाला, रमण करने वाला तथा मलादि का त्याग करनेवाला होता है।

प्रश्न- तो क्या आत्मा ही जीव का आधार तत्व है?

उत्तर- जी हाँ, आत्मा ही जीव का आधार तत्व है क्योंकि जीव उसका ही सूक्ष्म रूप है।

प्रश्न- जीवात्मा का निवास स्थान कहाँ होता है?

उत्तर- शरीर में। शरीर को ही जीव गृह कहते हैं।

प्रश्न- शरीरधारी जीवात्मा को क्या कहते हैं?

उत्तर- प्राणी।

प्रश्न- जीवात्मा मनुष्य में किस रूप में विद्यमान रहता है?

उत्तर- चैतन्य रूप में।

प्रश्न- शरीर में जीवात्मा के रहने का केन्द्रीय स्थान क्या है?

उत्तर- हृदय। इसे ही जीव मन्दिर यानि मन मन्दिर भी कहते हैं।

प्रश्न- जीवों के रहने का लोक कहाँ है?

उत्तर- मृतलोक यानि पृथ्वी या भूलोक।

प्रश्न- प्राणियों के जीवन का पोषण कहाँ से होता है?

उत्तर- जीवमण्डल द्वारा।

प्रश्न- जीव कैसे क्रियाशील होता है?

उत्तर- जीवन प्राप्त करके। अतः जिस परमात्मा से जीवन प्राप्त हुआ है उसकी वाणी अनुसार विचारधारा अपनाकर उसका दिल से सत्कार करो ।

प्रश्न- जीवन क्या है?

उत्तर- जीवन वह वस्तु या तत्व है जो व्यक्ति का अस्तित्व बनाए रखने के लिए या उसे स्वस्थ बनाए रखने के लिए अनिवार्य हो और उसे धारण करना आवश्यक हो। यह जीव के जीवित होने का भाव है। जीवन ही प्राणशक्ति है।

प्रश्न- जीवन किसकी अद्‌भुत देन है?

उत्तर- यह परमात्मा की अद्‌भुत देन है।

प्रश्न- जीवनकाल किसे कहते है?

उत्तर- जीवात्मा के शरीर धारण करने के उपरान्त उस शरीर के जन्म से मृत्यु तक की अवधि को जीवनकाल कहते हैं।

प्रश्न- जीवन कैसे चलता है यानि जीव-जन्तु और वनस्पति किस प्रकार अस्तित्व में आते हैं?

उत्तर- जीवनशक्ति से ।

प्रश्न- जीवन शक्ति क्या है?

उत्तर- मनुष्यों, पशुओं और वनस्पतियों में विद्यमान वह शक्ति जिसके कारण मनुष्य आदि अपना विकास, भरण-पोषण, वंश-वृद्धि करते हैं और संवेदनों यानि इन्द्रियों द्वारा उपभोग में आए विषयों के ज्ञान का अनुभव कर पाते हैं।

प्रश्न- जीवन कौन सी शक्ति है?

उत्तर- जीवन अपने आप में उत्साह, सक्रियता व प्रसन्नता वर्धन करने की शक्ति है।

प्रश्न- जीवनशक्ति को धारण कर जीव के लिए प्राणियों के संसार में किस प्रकार विचरने का विधान है?

उत्तर- जीवनशक्ति को धारण कर जीव के लिए मानसिक सुदृढ़ता यानि साहस के साथ, एकाग्रचित्त द्वारा, संसार में विचरने का विधान है ताकि उसे कोई किसी प्रकार से चलायमान न कर सके।

प्रश्न- जीवन की नित्य प्रति की आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए मनुष्य क्या करता है?

उत्तर- मनुष्य अपने जीवनकाल में जीवन के वे सभी काम-धंधे, पेशे-व्यवसाय या वृत्तियाँ अपनाता है जिनसे जीवन का निर्वाह किया जाता है व जीवन लक्ष्य प्राप्त किया जाता है।

प्रश्न- जीवन जीने की शैली से अनभिज्ञ मनुष्य क्या भूल करते हैं?

उत्तर- वे अपने हृदय के निर्मल वातावरण को प्रदूषित कर अपना जीवन संकट में डाल लेते हैं।

प्रश्न- इस क्रिया से अपरिचित व्यक्ति को क्या परिणाम भुगतने पड़ते हैं?

उत्तर- इस क्रिया से अपरिचित हो, जीवन जीने वाला व्यक्ति समाज अथवा विश्व की विविधरूपता के कुप्रभावों से सदा कष्ट ही पाता है।

प्रश्न- जीवात्मा का एक शरीर से दूसरे शरीर में जाना क्या कहलाता है?

उत्तर- जन्म-मरण का चक्रव्यूह।

प्रश्न-जीवात्मा का प्रयोजन कब सफल होता है?

उत्तर- जब जीवात्मा जीवन धारण करने के मुख्य लक्ष्य की प्राप्ति कर लेता है तो जीवनमुक्त हो जाता है। जानो कि उपाधियुक्त यानि द्वि-द्वेष व अहं भाव से ग्रसित हो भेद की प्रतीति कराने वाला वस्तु-धर्म अपनाकर, जीवात्मा अपने को पृथक् समझता है। जब पूर्ण ज्ञान प्राप्त होने पर यह भ्रम मिट जाता है तो वह ब्रह्म स्वरूप हो जाता है। इस तरह मुक्त जीवात्मा परमात्मा के सत्यज्ञान से पवित्र होकर कर्म-बन्धन से मुक्ति पा जीवनकाल में ही परम मोक्ष की प्राप्ति कर लेता है।

इस विवेचना से स्पष्ट होता है कि शरीरधारी जीवात्मा के लिए आत्मा में स्थित ज्ञानस्वरूप परमात्मा द्वारा आत्मिक ज्ञान प्राप्त कर, उसी स्वाभाविक स्वरूप में बने रहते हुए, स्वधर्म स्वभावगत करने का व उसी अनुसार व्यावहारिकता सुनिश्चित करने का कुदरती विधान है। इसी विधान के अनुरूप प्रत्येक इन्सान को चलना होता है क्योंकि यह अपने द्वारा अर्जित या कमाया हुआ सत्य ज्ञान रूपी धन होता है। ऐसे धनवान का ईश्वरीय जगत रूपी कुटुम्ब के साथ एकता व सजनता का भाव बना रहता है और एक अवस्था बनी रहती है। तभी तो ऐसे व्यक्ति की बुद्धि निर्मल होती है और उसमें अहंकार का अभाव होता है। इससे मन नियन्त्रण में

रहता है और चित्त एकाग्र अवस्था में बना रहता है। यह आत्मीयता से विचरते हुए दिव्य वैभव प्राप्त कर आत्मचेतनायुक्त, विशुद्ध व निष्कपट अवस्था में बने रहने की बात है। ऐसा मानव स्वतः नियन्त्रण द्वारा, स्वयं स्पष्ट पूर्णता को प्राप्त हो, बिना किसी के नियन्त्रण, बन्धन व दबाव के, एकता व एक अवस्था में बने रह, स्वतन्त्र रूप से आत्मविश्वास के साथ जीवन जीता है। यह खुद पर खुद शासन करने की व ईश्वर के हुक्मानुसार, उसी के निमित्त अकर्त्ता भाव से सब कार्यव्यवहार करते हुए भी उसी में लीन रहने की बात है। यह जीव की अपने असलियत स्वरूप में स्थित रहने की अवस्था होती है।

अतः इस मृतलोक में हम परदेसियों के लिए बनता है कि हम स्वधर्म के अनुसार स्वभावों की ईश्वर प्रदत्त स्वदेशी पोशाक पहनकर इस जगत में बेखौफा-बेखतरा शान से विचरना सुनिश्चित करें। भूलकर भी मृतलोक के स्वभाव ग्रहण न करें क्योंकि ऐसा करना परवश होने की बात होती है और फिर ऐसे भटके हुए पराधीन जीव के लिए उस बन्धन से मुक्त होना नामुमकिन होता है। ऐसा करने पर ही स्वधर्मी कहला, अपना जीवन कर्त्तव्य निभाने उपरान्त हम अपने धाम को सहजता से वापिस लौट कर रोशन नाम कहा सकते है ।

सूक्ष्मतः जानो कि यही अपने व्यक्तित्व या अपनी प्रतिष्ठा का सम्मान कर, आत्मसम्मान में बने रहने व सतयुग की उत्तम संस्कृति अपना पाने के योग्य बनने की बात है। ऐसा होने पर मानव जो भी करेगा, एक उपासक की तरह, निष्काम भाव से मनुष्यता के अनुसार ही करेगा। इससे अपने आप ही

आदि काल से चली आ रही वेद-विदित समझ आने लगेगी और जीव अपने कुल की रीति पर बना रह सक्षमता से जगत में विचरता हुआ अपार वैभव, बल व आनन्द को प्राप्त रहेगा।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरांत सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियंत्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

जीव
भाग-2

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्मा-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इन्सान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शान्ति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

कहा जाता है 'जैसी करनी वैसी भरनी, आज नहीं तो निश्चित कल' अर्थात् जो आज बोया जाएगा वह ही कल प्राप्त होगा। अतः इस जगत में रहते हुए जो भी सोचो, जो भी बोलो व जो भी करो इस नियम को याद रखते हुए करो। इस प्रकार मन, वचन, कर्म द्वारा जो भी करो वह स्वतन्त्रता से, सत्य अनुरूप ही करो। याद रखो इसी तरह अपने हृदय का, परिवार का व समाज का वातावरण शुद्ध व शांत रख

सकोगे। कोई आपको रोकेगा-टोकेगा नहीं। याद रखो जो भी इसके विपरीत चलन अपनाता है वहीं रोक-टोक आरम्भ हो जाती है। जहाँ रोक-टोक होती है वहाँ इन्सान की सहनशक्ति जवाब दे जाती है और इन्सान अधीर हो परस्पर अनुचित व्यवहार करने लगता है। नतीजा टकराव होता है, विनाश होता है। इस विनाश को थामने के लिए ही धैर्य रखते हुए परिस्थिति को सम्भालना पड़ता है।

निःसंदेह यह करना सरल नहीं होता परन्तु दिल-दिमाग़ को व परिवारों को टूटने से बचाने के लिए सहनशक्ति द्वारा सब कष्ट-क्लेश बरदाश्त करते हुए, सजन-भाव में बने रह, परमार्थ के रास्ते पर स्थित रहना होता है। डगमगाना नहीं होता अपितु डटकर उस परिस्थिति का मुकाबला विवेकशीलता से करना होता है ताकि किसी को चोट भी न पहुँचे और अपनी भी हानि न हो। इस तरह अपने उद्देश्य के प्रति जागरूक रहना होता है और हर परिस्थिति में अपने ख़्याल को, मूल आद स्रोत में, मजबूती से टिकाए रखना होता है।

इससे स्पष्ट होता है कि जो जीव अपने जीवनकाल में अपार वैभव, बल व आनन्द को प्राप्त रहते हुए, मोह-माया के भ्रम जाल से स्वतन्त्र रह, अपने जीवन उद्देश्य को इसी जीवन में सिद्ध करना चाहता है उसे आत्मिक ज्ञान प्राप्त कर सदा अपने यथार्थ निर्विकारी स्वरूप में स्थित रहना होगा। इस हेतु उसे याद रखना होगा कि जगत का जीवन, पल भर में सृष्टि रचने व प्रलय करने की क्षमता रखने वाले परमेश्वर पर ही अवलम्बित है और उस सर्वज्ञ परमात्मा से कुछ भी छिप नहीं सकता। इसलिए इसके विपरीत कोई भी चलन न

अपनाना यानि अज्ञान के कारण न ही अपने कर्त्तव्यों की उपेक्षा करना और न ही सांसारिक अहंकार के नशे में, अच्छे या बुरे परिणाम का विचार किए बग़ैर कोई कार्य करना।

जानो यह असावधानी उस सिरजनहार व पालनहार परमेश्वर से विमुख हो उसके अनुशासन के विपरीत चलन अपनाने का प्रतीक होगी। याद रखो आत्मिक ज्ञान प्राप्ति द्वारा ही मन से पाप भावों का नाश कर, सच्चाई-धर्म के रास्ते पर स्थिर बना रहा जा सकता है और इस जगत में सब कुछ संकल्प रहित करते हुए, परोपकार प्रवृत्ति में ढला जा सकता है।

यही तो वह निष्काम रास्ता है जो मृतलोक से होता हुआ सीधा अपने घर परमधाम को जाता है। अतः आत्मिक ज्ञान प्राप्ति के लिए सब यत्नशील हो जाओ ताकि जड़ से पाप भावों का नाश हो जाए और आप एक महान इन्सान की तरह सुख-शांति से जीवनयापन कर सको। याद रखो आत्मज्ञानी बनने पर ही किसी दुर्बद्धि के घेरे में नहीं फँसोगे और हर प्रकार के भटकाव से बचे रह, सदाचार का रास्ता अपना पाओगे।

तो क्या हम मानें कि सभी इस जगत में दोषरहित जीवन-यात्रा सम्पन्न कर अपने सच्चे घर लौटने के लिए दृढ़ संकल्प हो?

हाँ जी।

अगर सभी का उत्तर हाँ जी है तो जान लो इस जगत में आने से पूर्व प्रत्येक जीव को अपने असलियत स्वरूप का बोध

होता है और वह सोऽहम् भाव से युक्त होकर इस संसार में निर्दोष जीवनयापन करने के लिए आता है। तभी तो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में जीव अपने आप पर क्या कह रहा हैः-

ईश्वर स्वरूप मैं आया,
ईश्वर ने मैनुं है सजाया
कर्मानुसार माता दे गर्भ विच आया,
कारियाँ दे कारीगर ने इन्सान बनाया
उस ईश्वर ने अंग अंग मेरा है सजाया।

सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार जानो कि पाँच तत्वों यथा जल, वायु, अग्नि, पृथ्वी और आकाश से बना हुआ शरीर रूपी चमड़ा जब परमात्मा के आत्मप्रकाश से प्रकाशित हो चैतन्य अवस्था को प्राप्त होता है तो यह कुदरती नज़ारा अत्यन्त सुन्दर लगता है। फिर जैसे ही उसमें से प्रकाश निकल जाता है तो उस चमड़े को भिट्टा मान जलाया जाता है व उसकी राख नदियों में बहाई जाती है। फिर वही पानी खेती मे जाता है जिससे फल, पत्र, पुष्प और अन्न उपजते हैं और उन्हें सब इन्सान खाते हैं। फिर स्त्री दी खाद और पति दा बीज बोया जाता है और इस प्रकार फुरने के अनुसार जनचर-बनचर, जड़-चेतन, कीड़ी से लेकर हाथी तक और ब्रह्मा से तृण तक सब उपजता है। इस सन्दर्भ में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है किः-

कुदरत ने तैनुं इन्सान बनाया,
इस जगत ते तां तूं आया,
उस ईश्वर दी है करामात,

अपने जन्म नूं न कर घात,
माता सजन जी दे गर्भ विच आया
उस ईश्वर ने तेरा अंग-अंग सजाया
सूरज चाँद दा डिट्ठा प्रकाश,
अपने जन्म नूं न कर घात।

अर्थात् कुदरत ने हमें इन्सान बनाया है, तभी हम इस जगत में आने के काबिल बने है। इसे ईश्वर की करामत व अमानत मानो और जन्म की बाज़ी को जीतने हेतु जगत की भूल-भुलइय्या यानि मनमत में फँस, ईश्वर से विमुख हो अर्थात् उसके अनुशासन के विपरीत चलन अपना कर अपने जन्म पर घात मत लगाओ। यह जीवन हारने की बात होगी। जानो कि जब हम जीव रूप में माता सजन के गर्भ में आए तो ईश्वर ने ही हमारा अंग-अंग सजाया। तभी हम पैदा होकर सूरज-चाँद का प्रकाश देखने के काबिल बने।

स्पष्ट है कि मनुष्य योनि मुश्किल से मिलती है और वह इन्सान सब कुछ पा सकता है जो आत्मिक ज्ञान प्राप्त कर उसको अमल में ला पाता है। अतः हमें समभाव-समदृष्टि की युक्ति द्वारा अपना सुधार कर, अपना उद्धार सुनिश्चित करना होगा ताकि हमारे शरीर के पाँच मूल तत्व अपने घर वापिस जाएँ।

इस प्रकार इस जीव के ऊपर से भार उतरे और वह जीवन उद्देश्य को सिद्ध कर, स्वतन्त्र हो अपने घर परमधाम पहुँच विश्राम को प्राप्त हो। ऐसा ही हो इस हेतु हमें पुरुषार्थी बन, अपने उद्धार के प्रति आगे कदम बढ़ाते हुए, ब्रह्म भाव अनुरूप शब्द विचार पर बने रहने का उद्यम दिखाना है।

कष्ट-क्लेशों से घबरा कर या किसी के फंदे में आकर इस रास्ते से न तो पीछे कदम हटाना है और न ही रुकना है।

इस सन्दर्भ में याद रखो कि जब जीव समभाव-समदृष्टि की युक्ति के अनुसार इस जगत में एकात्मा यानि ब्रह्मत्व के भाव से विचरता है तो उसको सर्व-सर्व ब्रह्म और आत्मा की एकता का अनुभव स्वतः होने लगता है। फिर वह समदर्शी इस जगत में कीड़ी से लेकर हाथी तक, ब्रह्मा से लेकर तृण तक जिधर भी देखता है हर वस्तु व हर दृश्य में उसी ब्रह्म को शोभायमान पाता है व उसी एक ही दर्शन में मस्त रहता है। इस प्रकार उसे चारों दिशाओं में, जगत से निर्लेप ब्रह्म की सत्ता के निवास व प्रकाश का बोध होता है और वह परिपूर्ण चेतन अवस्था में बना रह, सदा प्रसन्न रहता है।

ऐसी चैतन्य अवस्था को प्राप्त जीव समभाव पर स्थिरता से अपनी पकड़ बनाए रख पाता है और समान अवस्था व स्वभाव में बना रह, समदर्शिता की भावना से युक्त होकर, इस जगत में सत्यता से सबके साथ सजनतापूर्ण धर्मसंगत व्यवहार करता है। जान लो कि ब्रह्म-भाव के अनुसार क्रिया करने वाला वह जीव यह सत्य जानता है कि इस जगत का कर्ता-धर्ता ईश्वर है और उसी को ही सब कुछ करने का अधिकार है।

इसलिए वह ब्रह्मविद्या आत्मसात् कर, इस जगत में जो भी करता है केवल ईश्वर के हुक्म अनुसार, उसी के निमित्त अकर्ता भाव से करता है। इस प्रकार वह कर्मठ, हर कर्म, नैतिक या धार्मिक दृष्टि से कर्त्तव्य समझकर उसी के विधि-विधान अनुसार स्वाभाविक रूप से करता है। तभी तो अपने

असलियत स्वरूप में स्थित बने रह वह निष्कामी कर्मफल से मुक्त बना रहता है। इस अवस्था को प्राप्त करने हेतु ही सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है-

सम्भलो सजनो, सम्भलो हुण सम्भलो तो सही।
वक्त है जे अखीरी हुण सम्भलो हुण सम्भलो तो सही।

अर्थात् सब सम्भलकर अपनी असलियत को पहचान लो और अपने घर लौट जाओ क्योंकि-

जात किसे पुछनी नहीं, ओथे अमलां दे होनगे नबेड़े।।

यानि अंत समय किसी की जात, हस्ती व ओहदा नहीं देखा जाता अपितु कर्मों के अनुसार जीव कर्म गति को प्राप्त होता है। अतः हमारे लिए बनता है कि हम आत्मज्ञान को अमल में लाना सुनिश्चित करें अर्थात् ब्रह्म भाव में बने रह, अपने आप को इस तरह सँवारें कि हमारी वृत्ति-स्मृति, बुद्धि व भाव-स्वभावों का ताना-बाना निर्मल हो जाए। इस तरह हम जीवन में निष्कामता से पुण्य कर्म करने वाले नेक इन्सान कहला जीव को कर्मगति से मुक्त करें और अपना नाम रोशन करें। इसके प्रति सबने सचेत रहना है। जानो यह समभाव-समदृष्टि का प्रतीक बन, परमपद प्राप्त करने की बात है।

याद रखो ऐसा जीव यह सत्य जानता है कि परमेश्वर ही सर्व-सर्वत्र है व सर्व में एकरस जाप रहा है। यह होता है 'एक निगाह एक दृष्टि, एक दृष्टि एक दर्शन' यानि समभाव अनुरूप नज़रिये में ढलना। याद रखो उत्तम दृष्टिकोण वाला मनुष्य समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार, सजन-भाव अनुसार स्वयमेव मानवीय वर्त्त-वर्त्ताव करने व उस पर बने

रहने में सक्षम हो जाता है। अतः हमारे लिए बनता है कि इस सत्य को मानें कि ब्रह्म ही सर्व जीव-जन्तुओं में भास व प्रकाश रहा है और उसकी सत्ता व कृपा से जीवात्मा क्रियावन्त हो रहा है। जान लो कि इस सत्य को मानने वाले का ही व्यक्तित्व श्रेष्ठ व भविष्य उज्ज्वल हो सकता है। वह ही आत्मबल द्वारा निज पर आत्मनियन्त्रण रखते हुए यानि मन को वश में रखते हुए, बुद्धिमत्ता से श्रेष्ठ व्यक्तित्व के अनुरूप चलन में बने रहने की सामर्थ्य दर्शा सकता है। इस प्रकार सत्य पर उसकी पकड़ बनी रहती है और वह मिथ्या धारणा व विसूचिका से बचा रह सदा युवावस्था को प्राप्त रहता है।

यह होता है जीव का परमतत्व की संगति के प्रभाव से परमाक्षर यानि प्रणव की ध्वनि से अपने हृदय को सदा प्रकाशित रखना व सुरति का सचखण्ड में बने रहना। इस तरह 'विचार ईश्वर है अपना आप' के तथ्य अनुसार अकर्त्ता भाव से जीवन जीना व सर्गुण के खेल खेलते हुए, अनादि जोत को पहचान, निर्वाण पहुँचकर जोत के साथ जोत हो जाना।

इस तरह सर्व प्रकाशित आत्मा में परमात्मा के दर्शन करते हुए यानि समभाव नज़रों में कर, परमधाम की मौजां मानते हुए इस जगत में सब कुछ समदर्शिता से करना व निष्कामी बन परोपकार प्रवृत्ति में ढलना। याद रखो इस तरीके से संसार सागर के मंझधार में डोलती हुई जीव की किश्ती उस पार पहुँच, कर्म गति से छुटकारा पा जाती है और अंततः विश्राम को प्राप्त हो पुनः ईश्वर के लाड और प्यार को पाती है।

इसके विपरीत जो इन्सान ब्रह्म विचार के अतिरिक्त, द्वि-द्वेष

युक्त किसी अन्य भाव से इस जगत में विचरता है वह इस जगत में रुल जाता है और जन्म-जन्मान्तरों तक आशा-तृष्णा रूपी सर्पिणी के विषयी प्रभावों से ग्रस्त हो, एक अच्छे व नेक इन्सान के रूप में जीवन जीने हेतु अपना शारीरिक और मानसिक विकास करने में व खुद को पूर्णतः स्वस्थ रखने में अयोग्य हो जाता है।

इस प्रकार वह मनमुख इन्सान अपना आप गँवा बैठता है और सत्य-धर्म पर बने रहने के काबिल नहीं रहता। तभी तो उस स्वार्थपर इंसान को जीवन में हर कदम पर ठोकरें खानी पड़ती है व शर्मिंदगी उठानी पड़ती है। स्पष्ट है कि बुद्धि कमजोर होने के कारण, अज्ञान धारणा द्वारा, विकार-वृत्तियों में फँस उस अहंकारी का सन्तोष, धैर्य बल भी क्षीण हो जाता है और वह सच्चाई-धर्म यानि सुकर्मों के व निष्काम रास्ते पर बने रहने के काबिल नहीं रहता।

यही जीव के कमज़ोर होने का कारण बनता है जिसके प्रभाव से वह अपने पँचभूतों से निर्मित शरीर की बुरी हालत देखकर घबराता है और अपने यथार्थ स्वरूप में न बने रहने के कारण निर्बल हो जाता है। इससे वह आत्मिक बल व आत्मविश्वास दोनों ही खो बैठता है और जगत जंजाल में फँस जाता है।

इस परिस्थिति में उसका असली धन जगत रूपी मायावी शक्ति द्वारा लूट लिया जाता है यानि मनुष्यता के प्रतीक सद्गुणों यथा सम, सन्तोष, धैर्य, सच्चाई, धर्म आदि पर बने रहने की शक्ति क्षीण हो जाती है और इस प्रकार सभी प्रकार की विकृतियों के हेतु काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार

उसके मन में घर कर जाते हैं। फलस्वरूप उसके स्वभावों का यानि तीनों तापों का टैम्प्रेचर घटने-बढ़ने लगता है। इसी उतार-चढ़ाव के कारण वह इन्सान आजीवन अतृप्त व अशान्त अवस्था में रहते हुए अपना आप बिगाड़ बैठता है और पाप कर्मों के फलस्वरूप हजारों कष्ट-क्लेश झुखते रोते हुए भोगता है औरों के लिए भी दुःख का कारण बनता है।

इस सन्दर्भ में अब सभी सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और बताओ कि क्या काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार आपके हृदय में घर कर चुके हैं या आप इन विकारों से रहित हो?

जी, यह पाँचों हमारे हृदय में घर कर चुके हैं।

तो क्या इनको अपने हृदयरूपी घर में रखना लाभकारी है या हानिकारक?

हानिकारक।

यदि इन्हें हानिकारक मानते हो और यह बात आपको अच्छी तरह से समझ आ गई है तो इन सभी विकारों अपने हृदय से निकाल दो। जानते हो यदि इन्हें निकाल दिया तो क्या होगा?

मौन।

तो अतंर्निहित संतोष, धैर्य, सच्चाई, धर्म जैसे दिव्य गुण सक्रिय हो जाएंगे। याद रखो जब तक ऐसा करने में सक्षम नहीं होते तब तक अपना व अपने बच्चों का जीवन चरित्र सुन्दर नहीं बना सकते व निष्काम रास्ते पर चलते हुए

परोपकार नहीं कमा सकते।

तो क्या अपने बच्चों के वैरी बनना चाहते हो?

नहीं जी।

तो भौतिक ज्ञान के साथ:साथ उन्हें आत्मिक ज्ञान भी प्रदान करो। वह सब जानने के पश्चात् सजनों हमारे लिए बनता है कि हम सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार जीव के आत्मतुष्ट होकर इस जगत में निर्लिप्तता से विचरने की युक्ति को समझें ताकि हम व हमारे बच्चे इन युक्तियों पर अमल कर अपना जीवन चरित्र सुन्दर व परम पवित्र बनाने के योग्य बनें। ऐसा करने हेतु अक्षर के महत्त्व को जानो और अजपा जाप करने में कमज़ोरी मत दिखाओ क्योंकि-

ओ३म् मकान ओन्हां दा ओ३म् स्थान है।
ओ३म् दी रटन लगाओ सजनों नित।।

इस विषय में याद रखो यदि इसके विपरीत चलन अपनाया तो सांसारिक 'हौं-मैं' से ग्रसित हो, अहंकारी बन जाओगे। यदि अहंकारी नहीं बनना चाहते तो अक्षर का अजपा जाप करो और नित्य भाव में स्थिर रहो। ऐसा करने से हृदय सदा प्रकाशित रहेगा और हृदय विदित सत्यज्ञान को हमारी अतंर्दृष्टि सरलता से पढ़ सकेगी।

अत: स्मरण रखो कि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में वर्णित सजन श्री शहनशाह महाबीर जी की युक्तियों अनुरूप चलन पर सुदृढ़ता से बने रहने पर ही इंसान अपनी परमार्थी पढ़ाई अर्थात् संतोष, धैर्य, धारण करके सच्चाई, धर्म के रास्ते पर चलने की योग्यता प्राप्त कर सकता है। इस तरह इसी युक्ति

के अनुशीलन द्वारा ही वह इस पढ़ाई की गुढ़ाई अर्थात् जगत में सच्चाई-धर्म से विचरते हुए निष्काम कर्म करने की योग्यता धार सकता है। इस प्रकार विचार शब्द को पकड़ वह सम अवस्था धारण कर, एक निगाह एक दृष्टि, एक दृष्टि एक दर्शन पर बने रह, सबके कल्याण हेतु परउपकार कमा सकता है यानि नेक कमाई कर सकता है। जान लो ऐसा व्यक्ति ही कुरस्ते से हट, अपने यथार्थ आत्मबल में बने रह, आत्मविश्वास के साथ सीधे रास्ते पर अग्रसर होने से सभी कष्ट-क्लेशों से छुटकारा पा शान्ति को प्राप्त हो सकता है। ऐसे जीव का आवागमन मिट जाता है और वह ईश्वर से मेल खाकर परमधाम पहुँच जाता है। इसीलिए तो जीव के लिए ईश्वर के संग बने रहने व उनके विचारों को पूर्ण श्रद्धा यनि भक्ति-भाव द्वारा अमल में ला अपना जीवन सुखी बनाने का विधान है।

अंततः ऐसा बनने हेतु सजनों स्वयं तो उस सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान व सर्वव्यापक परमेश्वर को जानो-मानो ही, साथ ही अन्य सजनों को भी इस सत्य से अवगत कराओ क्योंकि निर्मल हृदय में बसने वाले वह सर्वश्रेष्ठ ईश्वर ही देखने व संग करने योग्य हैं। उन्हीं आनन्दमूर्त्त के रूप के दर्शन व संगति से हमारी सुरत कंचन बनी रह सकती है व हमारे हृदय व नेत्र बहार की तरह खिल सकते हैं और अधरों पर मुस्कान आ सकती है। तभी हम इन्सान, इन्सानियत में आ, व्यवहार में तद्नुकूल श्रेष्ठता दिखाने के काबिल बन सकते हैं और उच्च बुद्धि, उच्च ख़्याल कहला अपने मानव होने की उत्कृष्टता सिद्ध कर सकते हैं। अतः जगत में विचरते हुए जहाँ भी देखो उस ईश्वर को ही देखो व प्रसन्नचित्तता से उसी का संग करो। याद रखो इस जगत में

और कुछ भी देखने व संग करने योग्य नहीं है क्योंकि सब नश्वर है व दुःखों का हेतु है। उस चेतन का संग ही हमें सुन्दर बना सकता है। अतः हमारी सबसे प्रार्थना है कि ऐसे ही बनो व सदा आनन्द में रहो।

तो क्या सब आनन्दमय बने रहना चाहते हो?

हाँ जी।

तो अपने हृदय में, घर-परिवार में व समाज में आनन्द का वातावरण बनाए रखो। इससे एकजुट होकर जीवन उद्देश्य की सिद्धि करनी आसान हो जाएगी और यश-कीर्ति को प्राप्त हो रोशन नाम कहाओगे।

अब सब मिल कर बोलोः-

ओ३म् आनन्दम्, ओ३म् आनन्दम्, ओ३म् आनन्दम् ओ३म्।
हे दुःख भंजन, हे दुःख भंजन, हे दुःख भंजन ओ३म्।
हे दुःख भंजन ओ३म्, हे दुःख भंजन ओ३म्।
सर्वव्यापी ओ३म्, सर्वव्यापी ओ३म्।
ओ३म् आनन्दम्, ओ३म् आनन्दम्, ओ३म् आनन्दम् ओ३म्।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरान्त सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियन्त्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 9 अगस्त 2015 का सबक

जीव
भाग-3

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्मा-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इन्सान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शान्ति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

आइए पहले जानते हैं कि मनुष्यत्व में बने रहने के लिए सबसे श्रेष्ठ भाव कौन सा है। यह है सोहंग अर्थात् सोऽहम्। याद रखो यही वह संकल्प रहित श्रेष्ठ व शक्तिशाली निर्विकारी भाव है जिस पर स्थित रह एक जीव समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार इस जगत में सब कुछ करते हुए भी अकर्त्ता रह सकता है। इसी शब्द की ही आराधना करने का कुदरती विधान है। इसी ज्ञान स्वरूप शब्द के भाव अर्थ

को अपने मन-वचन-कर्म में उतार कर अपने जीवन की ताकत बना लो और फिर कदाचित् इससे विचलित न होवो। इस तरह चैतन्य व सशक्त अपने असलियत ज्योति स्वरूप में स्थित रह इस संसार में विचरो। याद रखो जो विश्वासपूर्वक इस शब्द में अपने मन को अजपा लीन रखता है, उसी के स्वभावों का घटता-बढ़ता टैम्प्रेचर संतुलित रहता है। फलस्वरूप वह जीव विश्राम को पाता है। वही यह मानता है कि ब्रह्म ही सर्व-सर्व है और उसी की रटन चहुं ओर गुंजायमान है। अतः जीवन क्रीडा करते समय, हर वक्त उसी स्वर का आनन्द मानो और सबको इसी आनन्द स्वर से परिचित कराओ। इस तरह सारे एक स्वर में बँध कर एक हो जाओ व परमात्मस्वरूप में बने रहो। यथार्थ में यही चित्त लगाकर भक्ति करने की सही विधि है। याद रखो जो ईश्वर प्रदत्त विवेक बुद्धि का समुचित तरीके से इस्तेमाल कर इस क्रिया को विधि अनुसार व्यवहार में लाता है, उसी पर ईश्वर की कृपा होती है। अतः मूर्खता और हठ त्याग कर ईश्वर की कृपा प्राप्त करने हेतु उचित पात्र बनो।

इस संदर्भ में जानो सुरति सोहंगम नाम की डेरि है। इसलिए स्पष्ट हो जाता है कि जीव के लिए ब्रह्म भाव पर स्थिर रहना आवश्यक है क्योंकि यही यथार्थ स्वरूप में बने रह यथार्थता से निर्भय, निर्वैर, निर्विकार, निष्कलंक हो जीवन व्यतीत करने का सरलतम उपाय है। अतः मानव के लिए मनमत को प्राथमिकता देना अनुचित है। इससे उत्तम विचार छूटते हैं व सुरति के दोषग्रस्त होने का भय बना रहता है जिसके प्रभाव से मन अचेतन अवस्था को प्राप्त हो बुद्धि के निर्देशों को नहीं स्वीकारता। परिणामस्वरूप मनुष्य अविवेकपूर्ण

क्रियाकलाप करना आरम्भ कर देता है और सत्–असत् को नहीं जान पाता। ऐसा किसी के साथ न हो इसलिए तो कह रहे हैं कि इस मन मजदूर को बुद्धि की लगाम द्वारा साध लो।

सोऽहम् अर्थात् वही मैं हूँ- अर्थात् मैं ब्रह्म हूँ। इसका अर्थ है, ईश्वर है अपना आप। इसी महान भाव को सत्यता से साधना है। यदि इसे साध लिया तो कोई अन्य जाप, आडम्बर व मनगढ़ंत भक्ति भाव अपनाने की आवश्कता नहीं रहेगी। वेदांत का सिद्धान्त है कि जीव और ब्रह्म एक ही है। दोनों में कोई अंतर नहीं है। जीव और कुछ नहीं, ब्रह्म ही है। यही नित्यता का भाव है। उपनिषदों में भी यह बात इसी प्रकार कही गई है। जानो जहाँ मानवीय गुण दया, मानवता का प्रतीक है वहीं अहं भाव दानवता का प्रतीक है। इसलिए जो मज़ा दया में है वह जुल्म में नहीं। मनुष्य का ब्रह्मभाव के स्थान पर अहं भाव अपनाना परमेश्वर से विच्छेद होने व शरीर रूपी भौतिक अस्तित्व अपनाने की बात है।

यही तो सुरती की शब्द रूपी परमात्मा से वियोग की अवस्था होती है और अपनी यथार्थता से हट सांसारिकता में फँसने की बात है। यह ठीक उसी तरह होता है जैसे कोई स्त्री पति से बिछड़ी हुई विरह के दुःख को प्राप्त होने के परिणामस्वरूप सदा खुद दुख पाती है और वह वियोगिनी औरों को भी दुःख देती है। यह ईश्वर से अलग होने व उसकी कृपा से वंचित होने की बात होती है। ऐसा होने पर ही तो मनुष्य का मन सांसारिक विषयों में आसक्त होता है और चित्त में राग, मोह, ममता आदि जैसी विकारवृत्तियाँ पनपती हैं। यही तो मनुष्यत्व से गिरने की बात होती है और

पुनः सुरत-शब्द के योग के लिए अनेक प्रकार के भक्ति-भाव चलन में आते हैं। याद रखो इस योग साधना में किसी विरले को ही सफलता मिलती है परन्तु युवा अवस्था का भक्ति-भाव यानि समभाव-समदृष्टि की युक्ति अपनाने वाला निश्चित रूप से सफल होता ही होता है।

सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार-
कुदरत ने भांडे घढ़े, कुदरत ने पाया जीव,
जीव विचों हौं मैं निकले, हौं राजा मैं होया वज़ीर।
हां हां मैं होया वज़ीर, वाह वाह मैं होया वज़ीर,
हौं राजा होया दलगीर, मैं वजीर होया फ़कीर।।

अर्थात् जीव-गृह यानि शरीर रूपी भांडा कुदरत द्वारा घढ़ा जाता है और उसमें माया के आवरण में ढँकी हुई चेतन आत्मा, जीवात्मा कहलाता है। यह जीवात्मा यानि जीवों में विद्यमान चैतन्य ही, इन्सान के आत्मीय अवस्था में बने रहने व अपनेपन से जीवन व्यवहार करने की शक्ति होता है। इसलिए ख़्याल व ध्यान का, इस इष्ट मित्र (आत्मा) को ही निकट-सम्बन्धी मानने व उसी के साथ बने रहने का विधान है। यानि इन्सान का कर्त्तव्य है कि वह अन्तर्मुख हो, अपने ब्रह्म स्वरूप में बना रहे व समस्त शरीर यानि मन, बुद्धि, अहंकार व स्वभाव आदि को अपने मूल तत्व के धर्म अनुसार साधे रख व्यावहारिक तौर पर मनुष्यत्व अनुरूप कुशलता से मानवीय चलन अनुसार जीवनयापन करे। यह ख़्याल ध्यान वल, ध्यान प्रकाश वल जोड़े रखने की बात है ताकि हृदय परिपूर्णता से प्रकाशित रहे। याद रखो ऐसा सुनिश्चित करने पर ही मनुष्य संकल्प रहित हो, जगत में यथार्थता से विचरते हुए, अपनी जीवन-यात्रा सफल कर सकता है

क्योंकि इस विधि से उसके स्वभावों का टैम्प्रेचर घटता-बढ़ता नहीं और उसके लिए समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार, सजन-भाव के व्यवहार पर बने रहना, सहज हो जाता है। जानो यही है विराट् अर्थात् असलियत की पहचान। अब सबने इसको याद रखना है और जैसा बताया है, उसी अनुसार चल पड़ना है।

जानो कि जीवों में विद्यमान, शुद्ध रूप अहं, बाह्य पदार्थों व विषयों से विमुख और 'अहम्' तक ही सीमित रहने वाली मनःशक्ति होती है। इससे अंतःकरण की विशुद्धता बनी रहती है। 'अहम्' की अनुभूति 'अहं भाव' कहलाती है। यह अपने अस्तित्व का ज्ञान है यानि 'अहम्-भाव'। यह व्यक्ति की अपने विषय में कोई निश्चित संकल्पना यानि व्यक्तित्व का आन्तरिक पक्ष होता है। अतः बचपन से ही अहम् आदर्श के रूप में, 'विचार ईश्वर है अपना आप' यानि 'ब्रह्म-भाव' से अपना तादात्म्य स्थापित करके, प्रत्येक कार्य में उसे पूर्णता का मानक समझने की प्रवृत्ति में ढल जाना आवश्यक होता है। तभी जीवात्मा और जगत में सामंजस्य व एकरूपता बनी रह सकती है यानि अचेतन मन का चेतन मन से तालमेल बना रह सकता है। इससे निश्चयात्मक रूप से यह ऐसा ही है, ऐसी मानसिकता बनी रहती है। इस अवस्था में बने रहना बहुत महत्त्वपूर्ण व आवश्यक होता है। याद रखो जब जीव आत्मरूप में इसे धारण करता है तो वह चेतन हो उठता है और अगर चेतनता का प्रवाह समरस बना रहता है तो उसके आन्तरिक जगत में चंचलता उत्पन्न नहीं होती। चेतनता से युक्त ऐसा इन्सान ही अपना हित साधने की क्षुद्र भावना जिसे स्वार्थ कहते हैं, उसमें नहीं फँसता व स्वाभाविक उत्तमता

श्रेष्ठता का प्रतीक बन, सदा समरसता से, समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार जीवनयापन करते हुए, अपने जीवन का अर्थ सिद्ध कर लेता है।

जान लो कि जहाँ जीव की शुद्ध 'हौं'-'मैं' यानि असलियत स्वरूप में बने रहने की स्थिति विशुद्ध अन्तःकरण यानि पूर्ण चेतन अवस्था का प्रतीक होती है वहीं मिथ्या ज्ञान धारणा के प्रभाव से, जीव में से शुद्ध 'हौं'-'मैं' का निकलना अन्तःकरण की अशुद्धता का प्रतीक होता है। ऐसा इसलिए कह रहे हैं क्योंकि जीव में से शुद्ध 'हौं-मैं' निकलने से जीव अचेतन अवस्था को प्राप्त हो यह सत्य भूल जाता है कि आत्मा-परमात्मा अभिन्न हैं व नित्य चैतन्य स्वरूप हैं जबकि आत्मा व शरीर भिन्न हैं क्योंकि शरीर अपने आप में जड़ है, मिथ्या व नश्वर है और विषय-विकारों व रोगों का घर है। ऐसा होने पर कामलिप्सा शुरू हो जाती है और उस कमज़ोर जीव के विषय विकारों में लिप्त होने के कारण मनमत अनुसार साम्राज्य चलता है। फलस्वरूप मन नटखट, उपद्रवी व शैतान शासक बन जीव को चिढ़ाने के लिए छेड़छाड़ करता है और इन्सान दुष्ट कर्म करता है यानि शरीर का स्वामित्व स्वीकार कर राजा होते हुए भी अपने पद से गिर जाता है। इस प्रकार शुद्ध 'हौं'-मैं', शरीरी 'हौं-'मैं' का रूप लेती है। तभी तो 'हौं' मनमत के रूप में राजा हो जाता है और जीव कमजोर हो वज़ीरी को प्राप्त होता है। इसलिए सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है:-

मन मजूर किसने बनाया, किसने इस नूं रथ ते बिठाया।
किसने इस नूं राज दिवाया, किसने इस नूं राज दिवाया।।

जान लो ऐसा होना अपनी सत्ता यानि श्रेष्ठता से गिरना है। अन्य शब्दों में यह निज धर्म से गिरने व सांसारिक विषय-विकार अपनाकर, अज्ञानियों की तरह अधर्म पर चलने की बात होती है। इसी कारण इन्सान स्वधर्म भूलकर ईश्वर के प्रति विमुख हो, उससे विद्रोह कर बैठता है और उससे अपना अलग अस्तित्व बना बैठता है। ऐसे में इन्सान अपने असलियत स्वरूप का मानसिक प्रत्यक्ष करने के स्थान पर अपने शरीर का मानसिक प्रत्यक्ष करने लगता है यानि माँ-बाप, भाई-बहन, सगे-सम्बन्धी व भौतिक ज्ञान को ही अपना स्वरूप मान इस बात से अनभिज्ञ हो जाता है कि उसका असलियत स्वरूप क्या है? शारीरिक 'मैं' का भाव उसके मन में कर्त्तापन के अहं भाव को जाग्रत करता है।

यही कारण है कि फिर वह शरीर को ही सब कुछ मानता है व उसका शरीर दूसरों को कैसे अच्छा लगे इसके लिए हर संभव प्रयत्न करता है। यहाँ तक कि फिर सांसारिक प्रतिष्ठा प्राप्त करने के लिए, किसी भी प्रकार का अनाचार, दुराचार, भ्रष्टाचार व व्यभिचार करने से भी नहीं सकुचाता। जान लो कि मन के वशीभूत हुआ ऐसा इंसान, अन्त समय तक शरीरी मोह को छोड़ नही पाता व काम, क्रोध, लोभ में फँस वह अहंकारी शरीर व जगत के बन्धन में इस तरह से फँस जाता है कि उससे जन्म-जन्मान्तरों तक छुटकारा पाना कठिन होता है। स्पष्ट है कि इस प्रकार उस स्वार्थपर अविवेकी की एकाग्रचित्तता भंग हो जाती है। तभी तो वह अहंकारी कर्म गति का अधिकारी बनता है व झुखते-रोते हुए उसका अच्छा व बुरा फल कई जन्मों तक भोगता है। यह अत्यन्त विडम्बनीय स्थिति होती है और इसीलिए उसके लिए अपने

निर्धारित निष्काम रास्ते पर बने रहना नामुमकिन हो जाता है और वह परमार्थ के रास्ते पर चलने के स्थान पर स्वार्थ का रास्ता अपना बैठता है। यह स्वयं से, यानि ख़्याल के अपने असली घर से विमुख हो, सांसारिकता के जाल में फँस, जगत में क्रीडा करते हुए, जीवन व्यर्थ करने की बात होती है। यह क्रिया ठीक वैसे ही होती है जैसे जल में रहने वाली मछली शिकारी के जाल में फँसकर, तड़पते-तड़पते दम तोड़ देती है। तो क्या आप भी इस तरह मोह-माया के जाल में फँस, असहनीय पीड़ा को सहन करते हुए, तड़पते-तड़पते दम तोड़ना चाहते हो?

नहीं जी।

तो फिर स्वार्थपरता से उबर जाओ। याद रखो स्वार्थपरता को अपनाना मोह-माया व आशा-तृष्णा यानि सांसारिकता के ऐसे बंधन में बंधनमान होने की बात है जिस बंधन को खोलना संभव नहीं।

यह अपने आप में अहं भाव व स्वार्थवाद का प्रतीक होता है जिसके वशीभूत हुआ इन्सान शेखी बघारता है व डींगे मारता है। ऐसा इन्सान सबको बराबर समझने के स्थान पर, अपने आप को अन्य मनुष्यों से बहुत श्रेष्ठ और महत्त्वपूर्ण समझता है। यही नहीं दूसरों की प्रशंसा का पात्र न होने के कारण वह स्वयं अपनी प्रशंसा करता है और अपने विषय में बड़ी-बड़ी अभिमानपूर्ण बातें करता है। तभी तो वह प्रतिद्वन्द्विता यानि ईर्ष्या-द्वेष में फँस अपने ही गुण गाना यानि 'मैं ही सर्वश्रेष्ठ हूँ' ऐसा कहना शुरू कर देता है। इस तरह वह दूसरों से आगे निकलने की होड़ में परस्पर प्रतिस्पर्धा का

शिकार हो जाता है और दूसरों को नीचा दिखाकर स्वयं को उनसे अधिक अच्छा बताने या दिखाने से उत्पन्न शत्रुता व विद्वेष की भावना को अपने स्वभाव के अन्तर्गत कर बैठता है। यह अंतर्द्वन्द्व की उलझना में फँस सांसारिक दलदल में धँसने यानि विपत्ति को प्राप्त होने की बात होती है। ऐसा इन्सान स्वयं अपना विनाश तो करता ही है साथ ही साथ दूसरों का दमन कर उनका नाश करने से भी नहीं घबराता। स्पष्ट है कि ऐसा निकृष्ट इंसान, मन्दी खरीद के कारण अपना असली राजपाट खो बैठता है और अति निर्धन व्यक्ति यानि भिखारियों या डाकुओं जैसा जीवन जीता है व जगह-जगह भटकता है।

ऐसा किसी के साथ भी न हो इसलिए सबको सुझाव है कि कुदरत को ही जानो, मानो व असली मानवीय व्यक्तित्व में बने रहो और इस शरीर का प्रयोग नियन्त्रित ढंग से मनुष्यता अनुरूप करना सीखो। निःसंदेह इस हेतु शारीरिक 'हौं-मैं' यानि अहंकार वृत्ति को त्यागना होगा।

जानो, 'अहम्' अपनी विशिष्ट सत्ता का बोध है। यह प्राणी को अपने इस स्वाभाविक ज्ञान कि 'मैं' क्या हूँ की प्रतीति कराता है। याद रखो जब कभी नियति (अवश्य होने वाली बात) अहं पर चोट देती है तो अहं से बड़ी कोई चीज़ जन्म लेती है जिसके प्रभाव से मानसिक नियन्त्रण छूट जाता है। इस सन्दर्भ में जानो कि अहंकार अंतःकरण की चार वृत्तियों में से एक है। आत्मा-परमात्मा को भिन्न व शरीर आदि को अपनी 'आत्मा' से अभिन्न मानने का अज्ञान रूप भाव यानि 'मैं-मेरा' का भाव ही अहंकार कहलाता है। 'मैं' और 'मेरा' की भावना अहंकार और ममता का प्रतीक होती है। ऐसा

व्यक्ति एक भाव के स्थान पर 'मैं' और 'तूं' की भावना युक्त द्वैतवाद के सिद्धान्त को अपना बैठता है।

अन्य शब्दों में हम कह सकते हैं कि यह अस्मिता यानि 'मैं हूँ' का मानसिक भाव है। यह अन्य व्यक्तियों, समाजों, राष्ट्रों आदि से भिन्नता दिखाने वाली विशेषताओ से युक्त और उनसे सिद्ध क्रमशः, व्यक्ति/समाज/राष्ट्र का अपने अस्तित्व का भाव है। जानो कि जैसे व्यक्ति की 'अस्मिता' उसके 'अहंभाव' में प्रकट होती है, वैसे ही किसी समाज की 'अस्मिता' उसके सामूहिक 'अहंभाव' में अर्थात् 'समष्टिभाव' में प्रकट होती है तथा राष्ट्र की 'अस्मिता' उसकी संस्कृति में प्रकट होती है। व्यक्ति, समाज या राष्ट्र अपनी 'अस्मिता' पर आघात होने पर तिलमिला उठता है क्योंकि अस्मिता पर प्रहार उनके 'अस्तित्व' पर प्रहार होता है और उसकी 'अस्मिता' का विनाश ही उनका विनाश कहलाता है। इसे अहं भाव भी कहते हैं। अहं भाव अज्ञान और मोह का प्रतीक होता है यानि पाँच क्लेशों में से वह एक होता है, जिसमें चित्त अपने स्वरूप को अपना विषय नहीं बना पाता और निज स्वरूप की विस्मृति के कारण संसारी विषयों में उलझ जाता है। इसमें शरीर में स्थित आत्मा या ज्ञाता/दृष्ट देह अभिमानी हो जाता है। इसीलिए ऐसी जीवात्मा को अभिमानी कहते हैं।

इस संदर्भ में यह भी जानो कि अपनी योग्यता, समृद्धि, प्रतिष्ठा आदि के महत्त्व की अनुचित धारणा ही अभिमान है यानि यह स्वयं को बड़ा समझने की बात होती है जिससे इन्सान का मानसिक झुकाव विषय-अभिमुख होता है और उन विषयों की पूर्ति हेतु बार-बार दीनतापूर्वक माँगने व उनकी समीपता प्राप्त करने की क्रिया चलती है। इन

परिस्थितियों में उसके लिए मानवता अनुरूप भाव-स्वभावों का निर्माण करना व उनमें बने रहना अति कठिन हो जाता है। इसी कारण जीव अपने असलियत स्वरूप से विमुख हो, राक्षसी स्वभाव जैसे काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार अपनाकर दरिद्रता को प्राप्त होता है। यह होता है असली राज्य को छोड़ कच का मिथ्या राज्य स्थापित करना। ऐसे व्यक्ति के लिए मुक्त जीवन जीना यानि बार-बार जन्म लेने और मरने के बन्धन से छुटकारा पाना असम्भव होता है। ऐसे इन्सान के अन्दर मोक्ष प्रदान करने वाली आध्यात्मविद्या के प्रति रुचि का अभाव होता है यानि आत्मज्ञान प्राप्त करने वाली खिड़की बंद हो जाती है और निज ज्ञानस्वरूप दृष्टि से ओझल हो जाता है। फलतः उसका हृदय अन्धकारमय हो जाता है और मानव भौतिकवाद के अनुसार बिना किसी प्रयोजन के अर्थ व काम में उलझ निरुद्देश्य जीवन व्यतीत करता है।

सारतः जिसके मन में अहंकार व 'मैं' और 'मेरा' का भाव होता है उसका मंगल कभी नहीं हो सकता। अतः 'मैं' और 'मेरा' में उलझे हुए हम कमज़ोर मानवों के लिए बनता है कि इस अमंगलकारी भाव से उबरने हेतु हिम्मत दिखाएं व आत्मिक ज्ञान के वर्त्त-वर्त्ताव द्वारा निज ज्योति स्वरूप का बोध करने में देरी न करें। याद रखो ऐसा कर पाने पर ही हम बाल अवस्था के भक्ति भावों से उबर सकेंगे व निज ब्रह्म स्वरूप में यथा बने रह अन्त में परमपद को प्राप्त होंगे। याद रखो यदि एक बार परमेश्वर से प्रीति लगा ली तो उस प्रीतम से प्रीति तोड़ निभाने के लिए उसी के विचारों के अनुसार जीवन में हर क्रियाकलाप करना सुनिश्चित करना आरम्भ कर दें। इसके लिए चाहे हमें कितने ही कष्ट-क्लेश क्यों न

सहने पड़ें, उनके प्रभावों से विमुक्त रह अपनी बिगड़ी दशा सँवारने हेतु निष्काम भाव से मज़बूत बने रहना होगा। यह खालिस सोना होने की बात है।

इस सन्दर्भ में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के इन शब्दों को सदा याद रखोः-

'जगत रुस्से तां रुस्सन देवो,
भगवान रुस्से तां नहीं ठिकाना है'

ध्यान दो कि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में विदित कुदरती विचारों को हम कब से पढ़ते व सुनते आ रहे हैं पर हमें मानना होगा कि इतना समय व्यतीत होने पर भी हम उन विचारों को अमल में लाने के योग्य नहीं बन पाए। उधर आयु बीतती जा रही है। ऐसा न हो कि अज्ञानवश मन की अशान्ति के कारण हम इस जीवन में मोक्ष प्राप्ति से वंचित रह जाएँ। अतः हमें सभी बन्धन तोड़कर, अहंमति का यह स्वार्थ भूल जाना होगा और कामनारहित बने रहने हेतु, स्पष्टता से वज्र अवस्था यानि निज स्वरूप में बने रह स्वाभिमान से मानवीय व्यक्तित्व अनुरूप जीवन जीने के योग्य बनना होगा। यही शीलता व पवित्रता का जीवन है। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए, साजन परमेश्वर के हुक्म अनुसार, सभा में कुदरती शास्त्र में विदित कुदरती विचारों पर प्रबल विचार चल रहा है ताकि इन विचारों के प्रभाव से हर सजन के हृदय को शान्ति प्राप्त हो और वह प्रसन्नचित्तता से स्वार्थपर, दुराचारी व व्यभिचारी चलन की कुर्बानी दिखा इन विचारों पर अटलता से बने रह, सच्चाई-धर्म का निष्काम रास्ता अपनाने योग्य हो जाए।

याद रखो ऐसा करने पर ही हमारा हृदय बहार की तरह खिला रहेगा और हम उस हीरे संग हीरा हो इस जगत को हर्षा देंगे तथा साथ ही कुदरती बधाई प्राप्त करने के भी अधिकारी बनेंगे। अतः आवश्यक है कि हम एकाग्रचित्तता द्वारा अपने जीवन चरित्र को सुन्दरता का प्रतीक बना लें यानि हमारा हृदय अपार रोशनी से इस प्रकार प्रकाशित हो उठे कि हमारे लिए अपने मन को सत्य व ज्ञान स्वरूप परमेश्वर में लीन रखते हुए, तृप्त हो, इस जगत में निर्लिप्तता से विचरना सहज हो जाए।

इस हेतु हमें युवावस्था की भक्ति यानि समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार सज्जनता का प्रतीक बने रहने के लिए, गुरुओं के गुरु, प्रणव आद् अक्षर को ही सच्चे दिल से गुरु मानना होगा। शब्द गुरु सदा समरूप रहता है व उसकी महत्ता आदिकाल से ही है। जानो यह शब्द गुरु नित्य है और तीनों कालों में एक समान रहता है। इसी में समस्त ज्ञान व संसार का सार निहित है। तभी तो इसी के अजपा जाप द्वारा, हृदय को प्रकाशित रख, ख़ुद अन्तर्दृष्टि के माध्यम से, हृदय वेद-शास्त्र विदित आत्मिक ज्ञान को ग्रहण करना होता है। जानो कि उसी सत्यज्ञान अनुसार जीवन का हर क्रियाकलाप मानवीय धर्म अनुरूप करने का कुदरती विधान है। इस प्रकार निष्काम भाव से, उसी की चरण-शरण में समर्पित भाव से बने रहकर ही इंसान समबुद्धि बना रह अपनी विवेक शक्ति का भरपूर प्रयोग करते हुए सत्य-धर्म पर डटा रह सकता है। यह आध्यात्मवादी संस्कृति में ढलने व बने रहने के लिए आवश्यक है। याद रखो ऐसे इंसान की बुद्धि किसी कारण भी भ्रमित अवस्था को प्राप्त नहीं हो

सकती। इस प्रकार वह अपने माता-पिता, पख-परिवार व कुल संसार के प्रति अपने कर्त्तव्य हँसकर व आदरपूर्वक तो निभाता है पर उन्हें शब्द गुरु तुल्य नहीं मानता। इस प्रकार वह मोह बन्धन से स्वतन्त्र बना रहता है। तभी तो वह भौतिकवादी संस्कृति में ढल संकल्पों-विकल्पों से भरे हुए सांसारिकता में फँसाने वाले रास्ते को नहीं अपनाता यानि अपनी विशुद्ध सोहम् अवस्था में बने रह परमार्थ के सौखे रास्ते पर डटा रहता है। इस प्रकार वह विरक्त चित्त व सम्यक् दृष्टि वाला, सांसारिक 'हौं-मैं' के भाव में नहीं उलझता व अपने विशुद्ध स्वरूप अनुरूप शक्तिशाली व त्रिकालदर्शी बना रह, सर्वहितकारी कार्य करता हुआ, अपनी शारीरिक, मानसिक व आध्यात्मिक स्वस्थता एकरस रखने में सक्षम होता है। जानो कि ऐसा मनुष्य ही मनुष्यों में श्रेष्ठ कहलाता है। अतः हमारी सबसे प्रार्थना है कि आत्मनिरीक्षण द्वारा अपने पर आत्मनियन्त्रण रखते हुए, आत्मसुधार करो व श्रेष्ठता के पात्र बनो।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरान्त सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियन्त्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 16 अगस्त 2015 का सबक

जीव की पालना
भाग-4

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्मा-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त्त-वर्त्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

मनमत ते सजनों न चलना,
गुरुमत दा संग असां करना

याद रखो सजनों मनमत पर चलना दुःखों में फँसना है। अतः कष्ट-क्लेशो से बचने के लिए सबने जगत में विचरते हुए इस सत्य के प्रति जागरूक रहना है और केवल गुरुमत का संग ही करना है। ध्यान से सुनो कि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में श्री साजन जी क्या कह रहे हैं-

फुरना मरे ते फुरना जमें, फुरने ठाठ रचाया
फुरना है ओ अफुर गुसाईं, ओहदा अन्त किसे न पाया।

अर्थात् इस नश्वर सृष्टि की रचना व इसके विस्तार का आधार फुरना ही है। अतः इस मिथ्या संसार को फुरने का खेल-खिलारा जानो। सजनों इस सत्य को समझो व इसे सदा याद रखते हुए यह मान लो कि जिसका मन मन्दिर ठिकाना है, वह साजन ही हकीकत में हमारा मित्र है और उसी चैतन्य यानि रोम-रोम, रग-रग में बसने वाले के संग बने रहने से ही हम ब्रह्मभाव में स्थित रह पाएँगे व इस भौतिक जगत के मिथ्या होने का सत्य जान पाएँगे। निःसंदेह तभी हम इस जगत में निर्भयता व निर्लिप्तता से न्यायसंगत विचरने की योग्यता प्राप्त कर पाएंगे। इस तरह जगत की मिथ्यता व आत्मा की अमरता का बोध होने पर धन, यौवन व सांसारिक विषय हमें आकर्षित कर विकारग्रस्त नहीं कर पाएँगे और हमारा मन नश्वरता में नहीं उलझेगा। तभी हम ब्रह्म-भाव को धारण कर, समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार व्यावहारिकता में ढल, संकल्प रहित, मनुष्यता के भाव पर सुदृढ़ बने रह पाएँगे। तभी तो इस तरह प्रसन्नतापूर्वक अपने जीवन व सभी सम्बन्धों के प्रति बुद्धिमत्ता से हँसते-हँसते निष्कामभाव से फ़र्ज़ अदा करते हुए निर्विकारी व परोपकारी बने रह सकेंगे।

इस सन्दर्भ में विडम्बना की बात यह है कि भौतिक जगत के चलन व पालन-पोषण से प्रभावित हो कोई विरला जीव ही यह सत्य स्मृति में रख पाता है कि कि 'मैं ब्रह्म हूँ' और 'संसार मिथ्या है'। इस प्रकार आद् सत्य के साथ जुड़ कोई विरला सदाचारी ही यह मानता है कि यह जगत, उसमें

उपजी सारी रैय्यत और चारों दिशाओं में आत्मा में परमात्मा का ही प्रकाश, प्रसार व प्रचार है तथा ब्रह्मा, विष्णु, महेश, गणेश, वरुण, कुबेर, स्वर्गपुरी के राजा इन्द्र, यमराज, धर्मराज, मृत्यु, प्रालब्ध व सभी जड़-चेतन उसी के बिन सूरजों प्रकाश यानि ओज से क्रियाशील हैं। इस प्रकार इस तथ्य से अपरिचित जीव अपने स्वामी ईश्वर यानि रूप-रंग-रेखा रहित जो ज्ञानस्वरूप परमात्मा है उस प्रकाश-पुंज के संग बने रहने के स्थान पर, उसके मायावी जगत के आकर्षणों में गलतान हो, अपनी बुद्धि भ्रमित कर बैठता है और इस तरह अपने असलियत स्वरूप से विमुख हो जाता है। ऐसा होना अध्यात्म से हट भौतिकवाद अनुरूप जीवन जीने की बात होती है। परिणामस्वरूप मनुष्य दुर्भाग्य को प्राप्त होता है। सजनों कलियुग में यह भूल हर मानव से हो रही है। अतः आत्मज्ञान द्वारा आत्मोद्धार करने की अत्यन्त आवश्यकता है।

सजनों याद रखो कि इस हानिकारक भूल के कारण जीव अपने आधार तत्व से छूट जाता है और विषय-विकारों में ग्रस्त हो, मायावी विषैले दुष्प्रभावों में यानि जगत-जंजाल में फँस जाता है। तभी तो ऐसा बुद्धिहीन जीव न तो जीवन में प्रसन्न रह पाता है, न ही परस्पर सम्बन्ध कुशलता से निभा पाता है। इस प्रकार वह जीवन लक्ष्य की प्राप्त करने की योग्यता खो बैठता है और ईश्वर के जगत रूपी निराले खेल को नहीं समझ पाता। वह अपने ख़्याल को अपने सच्चे घर में स्थित न रख पाने की वजह से जगत में अटक व भटक, बुद्धिमत्ता व विवेकशीलता से विचरने के काबिल नहीं रहता। इस प्रकार जगत पर अधिकार रखते हुए जीने के स्थान पर

वह खुद मनमत के अधीन हो, जगत के विषय-विकारों को अपना बैठता हैं। ऐसे जीवों का ख़्याल चारों दिशाओं में उस ईश्वर की सर्वव्यापकता का दर्शन करने में असमर्थ हो जाता है यानि समभाव के विपरीत दुई-द्वेष आदि भावों में फँस जाता है। इस तरह वह 'ख़्याल ध्यान वल ध्यान प्रकाश वल' के जीवनोपयोगी महत्त्व से अनभिज्ञ, अपने ख़्याल यानि सुरत को जगत में भटका बैठता हैं। यह सुरत शब्द का बिछोड़ा कहलाता है जिसके प्रभाव से जीव अचेतन अवस्था को प्राप्त होता है। यही अचेतनता ही उसके मन में झूठ व छल, कपट आदि के घर करने का हेतु होती है और ऐसे मनुष्य की पकड़ से संतोष, धैर्य, सच्चाई, धर्म छूट जाता है। ऐसा होने पर हृदय से परोपकार वृत्ति छूटती है और मनमत अनुसार स्वार्थपरता का विकास होता है यानि अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए इन्सान कुछ भी करने पर उतारू हो जाता है।

याद रखो ऐसा होना चित्त की एकाग्र अवस्था भंग होने की बात होती है ऐसा होने पर मनुष्य सत्य व असत्य की पहचान खो बैठता है। यह धर्म से गिरने व कुकर्म-अधर्म का रास्ता अपनाने की बात होती है। फलस्वरूप उस भ्रमित बुद्धि मनुष्य के मन में संकल्प-विकल्प की तरंगें उठनी आरम्भ हो जाती हैं। इस प्रकार वह निन्दनीय व्यवहार द्वारा अपने व पारिवारजनों के मन की अशांति व मस्तिष्क की असंतुलित अवस्था का कारण बनता है। तभी तो दुष्कर्मों के फल भोगों से शारीरिक व मानसिक रोगों से ग्रस्त हो वह आत्मबल व आत्मविश्वास दोनों ही खो बैठता है, और पागलों जैसा अतृप्त जीवन जीने पर मजबूर हो जाता है। यह होता है बुरे

इन्सानों की तरह जीवन जीना व समाज में बुराई ही फैलाना। जानो यही दुराचरण अपने आप में काँटो से भरा रास्ता होता है जो कदम-कदम पर कौड़ी ज़हरीली बातों के रूप में चुभन देता है व असहनीय होने के कारण इन्सान को दुःख में फँसा दुर्व्यवहार व दुष्कर्म करने पर मजबूर कर देता है। बस फिर तो हृदय को छलनी करने वाली ऐसी-ऐसी बातें सुननी पड़ती हैं जिनका घाव गोली लगने से प्राप्त होने वाले घाव से भी बढ़कर होता है और इन्सान अन्दर-बाहर से आग-बबूला हो खुद जलता है व औरों के साथ वैसा ही दुर्व्यवहार कर कष्ट पहुँचाता है या फिर तनावयुक्त रह मायूसी का जीवन जीता है।

इस अवस्था में उस दुर्बुद्धि इन्सान के लिए निष्काम रास्ते पर चलना असम्भव सी बात हो जाती है और वह कामनाओं के चक्रव्यूह में फँस दिन-रात का सुख-चैन खो बैठता है। यह सिलसिला जन्म-जन्मान्तरों तक चलता रहता है। इस प्रकार जब कोई कामना पूरी होती है तो लोभ व मोह के प्रभाव से, और अधिक प्राप्ति के लिए अच्छे-बुरे तरीके से भौतिक सुख-साधन इकट्ठे कर अपने सिर पर इतना बोझ उठा लेता है कि माया के विषैले प्रभावों से उसका अंग-अंग कमज़ोर होकर भ्रष्टाचारिता से प्राप्त होने वाले क्लेशों में जा फँसता है। इसके विपरीत जब उसकी कोई कामना पूरी नहीं होती तो क्रोध के वेग से अपना मानसिक सन्तुलन इस तरह खो बैठता है कि परमार्थ का रास्ता उसकी पकड़ से छूट जाता है। बस फिर तो स्वार्थसिद्धि हेतु अमानवीय व्यवहार द्वारा बात-बात पर झगड़ा करना व शोर मचाना उसकी नित्य प्रति की क्रिया बन जाती है।

इस प्रकार वह परमार्थ के रास्ते पर बने रहने में अपने आप को कमज़ोर पाता है और उसी घबराहट में ही माया का ग़ुलाम बन स्वार्थ के रास्ते पर चढ़ जाता है। यही नहीं फिर वह माया का पुजारी जहाँ से स्वार्थ सिद्धि होती है उसी के मोहपाश में इस तरह से फँस जाता है कि वह कुछ भी प्राप्त करने के लिए न केवल उसकी बुराइयों को नज़र अन्दाज करना उचित समझता है वरन् उन बुराइयों को अपनाने में भी संकोच नहीं करता। इस तरह वह चैतन्य अवस्था से अचेतन अवस्था में आ जाता है और आत्म विश्वास खो बैठता है। इस तरह अपनी पूरी उम्र दूसरों की अधीनता में व्यतीत कर देता है। आरम्भ में तो चाहे जीव ऐसे कर्मों की फाँसी रूपी सज़ा के भय से घबराता है पर यही अविचार ही उसकी झूठी अहंकारता का कारण बनता है जो उसके ग़रूरी व मग़रूरी के चलन का प्रतीक होता है। फिर स्वार्थपरता अनुसार जीवन जीने वाला वह अविचारी इन्सान हर समय अपने अंग-संग मृत्यु को देखता है। इस प्रकार निर्भयता व न्यायसंगत जगत में निर्लिप्तता से विचरना उसके बस की बात नहीं रहती।

सारतः कहने का तात्पर्य यह है कि जो इन्सान स्वार्थपर हो जाता है, उसके लिए जगत में निर्लिप्तता से विचरना नामुमकिन हो जाता है क्योंकि वह ईश्वर का संग छोडकर जगत के संग जा जुडता है। ऐसे पराधीन इन्सान की स्वतन्त्रता का हनन हो जाता है यानि वह गुलामों की तरह इस जगत में दुःखों से भरा जीवनयापन करता है। निःसंदेह विकारग्रस्त हो, ऐसा ही गुलामी भरा जीवन हम सब जी रहे हैं। तभी तो काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकार हमारे ख़्याल

को जहाँ मोड़ते हैं हमारा ख्याल उधर ही मुड़ जाता है और जगत के साथ जुड़ जाता है। इसी जुड़ाव के कारण आज अलगाववाद के चलन के प्रभाव से मानवजाति खण्ड-खण्ड हो चुकी है और उसे असंख्य कष्ट-क्लेश सहने पड़ रहे हैं। विडम्बना तो यह है कि इन नाना प्रकार के दुःख-क्लेशों को सहने के बावजूद भी हमारी बुद्धि टिकाणे नहीं आ रही और हमें धोखा दे रही है। इसी धोखे में आकर हम उस ईश्वर को जो हमारे जीवन का मुख्य सहारा है उसे भूल कर नश्वर माता-पिता, भाई-बहन व सगे-सम्बन्धियों को अपना असली सहारा मानने लगते हैं। यह बहुत बड़ा अज्ञान होता है। इस अज्ञान के वशीभूत हो हम कदापि आनन्द का जीवन नहीं व्यतीत कर सकते।

अतः सजनों इस छल-कपट के चलन में अटक, जगत में मत भटको। नीतिनुसार सबके साथ सम्बन्ध अवश्य निभाओ परन्तु उनमें फँसो मत यानि लिप्त मत होवो। याद रखो जो निर्लिप्तता से इस जगत में नहीं विचर सकता यानि सांसारिक सम्बन्धों में लिप्त होता है उसकी सोच-विचार तथा किया हुआ हर कर्म कामना युक्त होता है। इसी कामना का फल भोगने के लिए उसे बार-बार जन्म-मरण के चक्रव्यूह में फँसना पड़ता है। यहाँ यह भी मत भूलो कि इस चलन अनुसार वर्ताव करने वाला व्यक्ति अपने तुल्य किसी को नहीं समझता। खुद आकाश में उड़ते हुए वह अहंकारी परिवार को भी उसी स्वभाव में ढालता है और जब उसका अहंकार टूटता है तो धराशायी हो या तो बेहोशों जैसा जीवन जीता है या फिर मौत को प्राप्त होता है। ऐसा नादान जीव यह नहीं जानता कि माया उसी को ही डंगती व छलती है

जो उसकी मर्म यानि रमज़ को नहीं जानता। इस तरह जो माया कमाने के लिए दूसरो को छलता है वह खुद ही माया द्वारा छला जाता है। आज जीवन-लक्ष्य के प्रति इसी अनभिज्ञता के कारण इस जगत में अधिकतर माया के लोभी शैतान जीव परेशान हैं। एक बार यह बात खुद से पूछ कर देखो कि माया के मोह-जाल में फँसकर किस हाल में हो यानि जीवन परेशानियों में व्यतीत हो रहा है या प्रसन्नता से?

अगर परेशानियों में हो रहा है तो हमें न केवल खुद को इस अवस्था से बचाना है अपितु सुमति में आकर अपने बच्चों की पालना भी सांसारिक चलन अनुसार न करके परमार्थिक ज्ञान अनुसार करनी है। याद रखो यदि हमने अपनी संतानों यानि घर के चिरागों की पालना इस प्रकार की तो निश्चित ही हमारे घर के वे भावी चिराग इस संसार में अपना व अपने कुल का नाम रोशन करने में सफल हो सकेंगे।

तो क्या हम मानें कि ये सब सुन-समझ कर हम सब अपना भाग्य जगा निज व बच्चों का उद्धार करना चाहते हैं?

हाँ जी।

तो इस हेतु सदा याद रखो-

1. हमें आत्मिक ज्ञान प्राप्त कर इस माया के खेल को खुद जानना है फिर इसकी रमज़ यानि मर्म से बच्चों को परिचित कराना है ताकि वे भी सजन श्री शहनशाह हनुमान जी की युक्ति पर बने रह निर्लिप्तता से इस मायावी जगत में विचरने के योग्य बनें व सुख-समृद्धि को प्राप्त कर अपने सत्-चित्त-आनन्द स्वरूप में ठहरे रहें। याद रखो इसी तरह

से वे अपनी यथार्थता से परिचित हो, समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार सजन भाव अनुरूप व्यावहारिकता में सहजता से बने रहने की सामर्थ्य जुटा पाएंगे। इस प्रकार मृदुभाषी बन सच्चाई-धर्म के रास्ते पर निष्काम भाव से बने रह परोपकार प्रवृत्ति बनेंगे। इस प्रकार उनका आपके घर जन्म होना उनके लिए सौभाग्यशाली सिद्ध होगा।

2. हमें सावधानी से ब्रह्म शब्द विचार अनुसार ही जीवन जीना सुनिश्चित करना है। इसके लिए अपना ख़्याल आत्मा में जो है परमात्मा उसके संग जोड़े रख, समभाव में स्थित रहना है। वहीं से 'विशुद्ध जीवन जीने की आचार संहिता' प्राप्तकर सदाचारिता अनुरूप जीवन जीना है। इस हेतु भूल कर भी भौतिक ज्ञान के क्रियाकलापों में उलझे हुए माता-पिता, पख-परिवार व कुल संसार को गुरु नहीं मानना क्योंकि ये सब सच्चे घर के निष्काम रास्ते से भटका, हमें सांसारिक विषय विकारों में फँसा दुराचार, भ्रष्टाचार व व्यभिचार में फँसाने वाले हैं। इसके साथ-साथ सम अवस्था में बने रहने हेतु दुःख-क्लेश व रोगों से बचे रह, जन्त्र-मन्त्र वाले मनगढ़ंत भक्ति-भाव भूल कर भी नहीं अपनाने हैं। याद रखो आत्मनियन्त्रण द्वारा ऐसा सुनिश्चित करने पर ही हम अपना गृहस्थाश्रम सतयुग बना सकते हैं व परमपद प्राप्त कर अपना भाग्य जगा सकते हैं।

3. हमें अपने मनुष्य होने की अवस्था में बने रहने हेतु ब्रह्म विचार द्वारा अपने भाव-स्वभाव में पनपे बिगड़ाव को सुधारना है व इस जगत में विजयी हो यश-कीर्ति के पात्र बनना है। इसके लिए माता-पिता को सावधान रहना होगा कि वे अपने बच्चों की पालना के समय उन्हें 'हौं-मैं' से न

सींचें। कहीं ऐसा न हो कि माता-पिता की असावधानी से बच्चे सांसारिक विषय-विकारों मे फँस अहंकारी बन जाएँ व कुरस्ते चढ़ जाएँ। इस प्रकार वे अपने नकारात्मक स्वभावों द्वारा अपने ही दिल और दिमाग़ का संतुलन बिगाड़ने वाले जहरीले भावों को अपना बैठेंगे यानि अविचार अपनाकर, अपने निज मानवीय व्यक्तित्व के प्रति अनभिज्ञ रह जाएँगे। इस तरह एक दूसरे के प्रति आदर भाव का अभाव हो जाएगा और जीवन का सारा खेल बिगड़ जाएगा।

4. सभी अभिभावक अपने बच्चों के पालन-पोषण के समय उन्हें अपने यथार्थ के प्रति पूर्णतया जागरूकता प्रदान करना अपना मुख्य कर्त्तव्य मानें ताकि वे मनुष्य अपने सिरजनहार को ही सत्यनिष्ठा से अपना सच्चा आदर्श मानते हुए, उसी द्वारा निर्मित शासन-व्यवस्था अनुसार इस जगत में उसी शासक प्रदत्त संसाधनों का उपयोग करते हुए प्रत्येक क्रियाकलाप नियमित ढंग से न्यायसंगत उसी के निमित्त करने के योग्य बनें।

5. अपने जीवन उद्देश्य को सिद्ध करने हेतु हर परिस्थिति में हृदय वेद-विदित नीतियों और विधियों पर बने रहना अपना धर्म मानें। उन्हें एकाग्रचित्तता में बने रहने में प्रवीण बनाएँ ताकि वे प्रबल ध्यान द्वारा अपने सच्चे शासक के हुक्म के विपरीत न ही कुछ अपनाएँ व न ही कुछ करें। इससे निज अंतर्निहित परमशक्ति परमात्मा का बोध बना रहता है और अन्दरूनी व बैहरूनी दोनों वृत्तियों में विशुद्धता, शांति व समरसता बनी रहती है। यह उन वृत्तियों के हर प्रकार के विकारों से सुरक्षित होने का प्रतीक होता है। फलतः जीव

निर्मलता के वातावरण में बने रहते हुए, आध्यात्मिक व सांसारिक तौर पर हर कार्य धर्मसंगत व कर्मठता से करता है और चहुँमुखी विकास करते हुए, समृद्धि को प्राप्त होता है व निर्भयता से मनुष्यत्व में बना रहता है। यह जीव के लिए इस जगत में बुद्धिमत्ता से जीवनयापन करते हुए एकता व एक-अवस्था में बने रह, श्रेष्ठ पद को प्राप्त करने की बात होती है।

6. इस नश्वर जगत में विचरते समय ब्रह्मभाव में नित्य भाव से स्थित रहें, अपनी निज पहचान में स्थिर रहने के लिए, सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ की दिव्य वाणी के रूप में प्राप्त नीति-नियमों का यथा पालन करें। इन नीति नियमों की पालना द्वारा, हमें ईश्वर की गोदी में बने रह, उसी से प्यार रखते हुए, परम आनन्द प्राप्त करना है। निःसंदेह यह तभी हो सकेगा जब हम सांसारिकता को अपनाना छोड़ देंगे और सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में जो सुलभ शब्द वर्णित हैं उन विचारों को युक्ति सहित धारण करेंगे व वर्त्त-वर्त्ताव में लाना सुनिश्चित करेंगे। याद रखो सजनो यही सौखा तरीका है अपने ख़्याल को अपनी सुन्दर राजधानी यानि परमधाम रूपी घर में साधे रख, निष्काम रास्ते पर चलते हुए व परउपकार कमाते हुए संसार में निर्लिप्तता से विचरने का व निर्वाण पद को प्राप्त करने का। अतः सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ की महत्ता को समझो और तद्नुसार चलन अपनाना सुनिश्चित करो।

इस हेतु सजनो सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ हम नादान जीवों को समझा रहा है कि-

मैं-तूं दे विच फरक मत जानो,
अपने हृदय विच राम नाम ही मानो
आओ मेरा प्यारा श्री भगवान नाम तुम्हारा,
आपे खेल खिलारिया आपे दित्ता समेट
जीव नूं पता किस तरह लगे एक हो के अनेक।।

सजनों अभी तक आपने जो भी सुना है वह सजन श्री शहनशाह हनुमान जी की वह सौखी युक्ति है जो उन्होंने कलियुग के हम दुखिया जीवों की पुकार सुनकर, निज व्यक्तित्व यानि अंतर्निहित मनुष्यता अनुरूप गुणों को सम्मान देने के लिए प्रदान की है ताकि हम जीवन हारने यानि सांसारिकता में उलझने की बजाय, इन गुणों के सत् प्रभाव से, शक्तिशाली व सुसंस्कृत इन्सान बनें व जगत में विजयी बनें। याद रखो यह निज धर्म पर बने रह विजय प्राप्त करने की बात है। अन्यथा इसके विपरीत व्यवहार अपनाने पर जीवन हार बैठोगे। यह उनकी दयालुता ही समझो जो उन्होंने हमारे मन में घर कर चुके व हमें शारीरिक, मानसिक व अध्यात्मिक तौर पर रोगी बनाने वाले दुर्भावों को परख कर, औषधि के रूप मे समभाव-समदृष्टि की युक्ति प्रदान की है व इस युक्ति के अनुरूप सजन-भाव का वर्त्त-वर्त्ताव बताया है। इसलिए सर्व हित के लिए हमारे लिए इस सुलभ युक्ति को अपनाना व इस हेतु औरों को प्रेरित करना आवश्यक है।

यह जान लो कि इस सौखी युक्ति के वर्त्त-वर्त्ताव से सारा ब्रह्माण्ड एक सजन हो जाएगा और मौत का भय नहीं रहेगा। इस तरह सजन शब्द बुलाने से बाकी कोई संकल्प नहीं रहेगा और एक निगाह एक दृष्टि होकर हमारी दिव्य

दृष्टि हो जाएगी और एक आत्मा होकर परमात्मा से मेल खाकर ज्योति स्वरूप जो अपना आप है हम उसकी पहचान कर रोशन हो जाएंगे। यही नहीं इसी युक्ति को प्रवान करने से वैराग्य की अंधेरी द्वारा हमारे मन के विकारी भाव नष्ट हो जाएंगे और हम फिर से चिंता रहित हो हरे-भरे यानि तन्दुरुस्त हो सुन्दर लगने लगेंगे। याद रखो यह हृदय की खोट रहित ख़ालिस सोना हो, सात्विकता को प्राप्त होने की बात है। इसी द्वारा हम भाव-स्वभावों की कठिन अवस्था से उबर पहले नरम अवस्था को फिर वज्र अवस्था को प्राप्त हो सकेंगे यानि मन में ब्रह्म भाव को स्थित कर तद्नुरूप व्यवहार में स्थिर रह सकेंगे।

जानो कि यह मन को आत्मतोष प्राप्त होने की अवस्था है। परिणामस्वरूप मन शान्त हो जाएगा और इन्द्रियाँ अपने वश में हो जाएगी। यह होता है आत्मा के स्वरूप का अनुभव होना व स्वतन्त्र रूप से अपने विवेक से चलते हुए दूसरों को अपने-जैसा ही समझने की प्रवृत्ति में ढलना व समभाव में बने रहना। याद रखो ऐसा इन्सान ही आत्मनियन्त्रण रखने की योग्यता प्राप्त कर, अपने आचरण के स्वीकृत मानकों के अनुरूप अपनी आवश्यकताओं को, बिना किसी बाहरी दबाव के स्वेच्छा से किसी का अहित किए बगैर पूरा कर पाता है। फिर वह अपनी मान-मर्यादा की रक्षा करते हुए स्वाभिमानपूर्वक जीवन जीता है। यह होता है ब्रह्म विद्या को अमल में लाने के योग्य बन, सब कुछ अकर्त्ता भाव से करते हुए अपने आप में प्रसन्न रहना। ऐसा इंसान अपनी आत्मा यानि व्यक्तित्व का यथार्थ रूप समझकर उसी में बना रहता है। वह अपने विचारों को मन-वचन-कर्म द्वारा सबके आगे

सत्यता से प्रगट करते हुए भी निर्लेप बना रहता है। यह होता है एक अच्छे व नेक इन्सान की तरह धीरता पूर्वक सच्चाई-धर्म पर बने रह निष्काम भाव से परोपकार करना।

याद रखो ऐसा होने पर ही हम रोगों की सरदार विसूचिका से छुटकारा पा, यथार्थ भक्ति व शक्ति धारण कर उसका यथोचित प्रयोग करने की सामर्थ्य जुटा सकते हैं। यह शान्ति-शक्ति की ताकत से अपनी चैतन्य यानि प्रकाशमय अवस्था में निर्विकार बने रह, जगत को भी प्रकाशित करने की बात है यानि परोपकार कमाने की बात है। इस ख़ालिस सोना अवस्था में बने रहने वाले इन्सान को आदर्श रूप मान, उसके संग जो भी जुड़ता है उसका हृदय भी सत्य ज्ञान से प्रकाशित हो उठता है। सजनता के प्रतीक वे सब ठीक उसी तरह से सबको प्यारे लगते हैं जैसे आकाश में चन्द्रमा के साथ तारे। याद रखो ऐसे श्रेष्ठ पुरुष का ही युगों-युगों तक गुणगान होता है। इसलिए हमारी सबसे प्रार्थना है कि सब ऐसे ही बनो।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरान्त सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियन्त्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 23 अगस्त 2015 का सबक

वर्तमान युग में जीव की दशा
भाग-5

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्म-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है:-

कलुकाल बाल अवस्था रोलिया, युवावस्था दिखाया घमंड।
वृद्ध अवस्था जरजरी भूत करके मौत देखे अंग संग।।

इस सन्दर्भ में सजन श्री शहनशाह हनुमान जी कह रहे हैं कि कलुकाल जो त्रेता-द्वापर में कमज़ोर रहा, उसने वर्त्तमान समय में बाल अवस्था से ही इन्सान को अपनी चंगुल में

फँसा, छल-कपट, झूठ, चोरी-ठगी करनें के लिए विवश कर दिया है। परिणामतः इंसान इतना अज्ञानी व नासमझ हो गया है कि काम, क्रोध, लोभ, मोह के मद में अहंकारी हो अपनी अनगिनत भौतिक कामनाओं की पूर्ति हेतु, भ्रमितबुद्धि की ताकत से समरतक्ष चोरी करने, झूठ बोलने, डाका डालने, छल-कपट करने व शोर मचाने से नहीं घबराता। यहाँ तक कि स्वार्थ के रास्ते का अनुगामी यानि कलुकाल के स्वभावों अनुरूप ढला पहलवान अपने स्वार्थसिद्धि के लिए मरने-मारने से भी नहीं सकुचाता।

इस प्रकार अपने दुराचारी चलन से जगत को वीरान कर रहा है। जान लो कि उस दग़ाबाज़ ठग के प्रभाव के कारण ही इन्सान, इन्सानियत के विपरीत एक दूसरे को दग़ा दे रहे हैं और धोखाधड़ी कर रहे हैं। इसीलिए तो इन्सान के हृदय में इतना अन्धकार छा गया है कि मनुष्य निष्काम रास्ता छोड़ मनुराज के अधिकार में चला गया है और मनमत अनुसार चलन अपना बैठा है।

तभी तो आज बार-बार कहने के बावजूद भी, इंसान के लिए आत्मनिरीक्षण द्वारा सत्यता से अपनी कमियों को पकड़, आत्मसंयम पूर्वक आत्मसुधार करना कठिन हो गया है और सम्पूर्ण मानव जाति को निष्काम कर्म प्रणाली के आधार पर मानवता के प्रति जाग्रत रख सुखमय जीवन जीने के लिए प्रेरित करना असम्भव सा लग रहा है। याद रखो यह मूर्खता भरा चलन है। तो क्या यह मूर्खता भरा काम करते हुए अच्छे लगते हो?

नहीं जी।

तो फिर क्यों करते हो? तभी तो ईश्वर कहते हैं कि कलुकाल के घेरे में फँस जो शरीरधारी जीव अनेकों पाप कर रहे हैं उससे मेरा आत्मा रूपी सिंहासन इस तरह से हिल गया है कि जीव को उस सिंहासन पर मेरे विराजमान होने की प्रतीति ही नहीं रही। कहने का अर्थ यह है कि वह अपने हृदय में विद्यमान मुझ ईश्वर को देख-सुन ही नहीं पा रहा। तभी तो अध्यात्मज्ञान के प्रति उसके अन्दर रुचि नहीं पनप पा रही। इस प्रकार मेरे प्रति विमुखता के कारण ही, वह आत्मस्वरूप को भूल, मेरी माया द्वारा रचाए जगत के खेल में उलझकर फँस गया है।

इस परिप्रेक्ष्य में पापी जीवों के पापों से त्रस्त भारत माता की आरतवाणी सुनकर सजन श्री शहनशाह हनुमान जी प्रत्येक जीव को चेतावनी देते हुए कह रहे हैं कि मेरी शक्ति प्रबल, कमाल व विशाल है और अब वह ऐसे कुकर्मी, अधर्मी, दुष्ट और स्वार्थी इन्सानों का खात्मा करने व निष्काम रास्ते पर चलने वालों का बचाव करने के लिए निषंग तैयार खड़ी है। तो क्या चाहते हो अपना उद्धार या संहार?

उद्धार।

उद्धार चाहते हो तो होश में आओ और स्वार्थपरता के भाव से उबर परमार्थ ज्ञान प्राप्ति के प्रति अपने अन्दर रुचि पैदा करो। फिर उस ज्ञान को अमल में ला अपनी असलियत पहचान लो और इस प्रकार दुःख-सुख, मान-अपमान, वड-छोट के भाव से उबर जाओ। याद रखो यदि ऐसा नहीं किया तो संहार होने वाला है। इस विषय में हे दुष्कर्मियों ! यह

जान लो कि कलुकाल अब बूढ़ा हो गया है। उसकी टप-टप मुक गई है और उसके जाने का समय निकट आ गया है। वह जरजरी भूत ईश्वर के आगे दोनों हाथ जोड़ कर खड़ा है।

इससे स्पष्ट होता है कि अब कलुकाल का अंतिम चरण चल रहा है यानि उस बद्कार कलुकाल के अब थोड़े ही दिन रह गए हैं। सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार कलियुग के इस अंतिम चरण में जिसने भी उसके वशीभूत हो अब तक जो भी खोटी कमाई की है, वह उसको भुगतनी पड़ेगी यानि वातावरण को कलुषित करने वाले कमजोर, अधर्मी व जुल्मी इन्सानों को वक्त की मार अब सहनी पड़ेगी। फिर बौखलाओगे, तड़पोगे, अनाप-शनाप बोलोगे, निंदा-चुगली करोगे, यानि कर्मानुसार रोने-धोने के कारण चारों तरफ हाहाकार मच जाएगी और जो भी कलुकाल का संग कर रहा है, वह ख़्वार हो जगह-जगह दौड़ता रहेगा पर बच नहीं पाएगा। आखिर में इस अवलड़े रास्ते पर चलने के कारण वह लाचार हो जीवन हार बैठेगा। इस प्रकार कलियुगी स्वभावों में फँसे हुए जीवों का नुकसान होगा व उनकी हाहाकार से सभी परेशान हो जाएंगे।

अतः सजनों अगर अपने यथार्थ को भूल नासमझी के कारण कलुकाल के धोखे में आ चुके हो तो सम्भल जाओ। अन्यथा समझ लो कि उत्पातों के प्रभाव से, अंधों व बहरों की तरह मौत को अंग-संग देखते हुए व ज़ारोज़ार रोते हुए जीवन जीना पड़ेगा। याद रखो कि कलियुग के प्रभावो से त्रस्त होने के कारण ही तो हम सतवस्तु की बात न तो समझ रहे हैं

और न ही सतवस्तु के वाली को पहचान रहे है। यही कारण हैं कि ईश्वर से विमुख हो दग्ध-भस्म में जाने को तैयार खड़े हैं। समय रहते ही सतवस्तु की चाल पकड़ अपने बचाव का प्रबन्ध करो।

इसी परिप्रेक्ष्य में आज के इन्सानों के स्वभावों का टेम्प्रेचर इस तरह बिगड़ गया है कि उनके लिए संतोष, धैर्य पर स्थिर बने रह सच्चाई-धर्म के रास्ते पर अग्रसर रहना कठिन हो गया है। उन्हें अपने उद्धार हेतु आत्मिक ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता है। याद रखो तभी ही कलुकाल के स्वभावों अनुसार कुकर्म, अधर्म व दुराचार रूपी जो मनुष्यता के विपरीत चलन अपना बैठे हो उससे मुक्ति प्राप्त होगी। इसलिए अपने उद्धार के लिए हिम्मत दिखाओ व इस प्रकार काम, क्रोध लोभ, मोह, अहंकार कुलनाशक विकारों से छुटकारा पा सदाचारी बन निर्भय, निर्वैर, निर्विकार, निर्दोष व नित्य अवस्था को प्राप्त हो जाओ।

इस विषय में याद रखो कि चौरासी बहुरंगी है, पाखंड है व दुःखों का घर है। अतः सावधान रहो क्योंकि इस पाखण्डी के जाल में फँसकर हम आत्मिक ज्ञान के प्रति रुचि व उसे प्राप्त करने की काबलियत दोनों ही खो बैठेंगे और मिल वर्त्तने के स्थान पर अपने-अपने गुट बनाकर कसाइयों की तरह मार-काट करते रहेंगे।

इसका आने वाली सन्तानों पर भी दुष्प्रभाव पड़ेगा और शारीरिक तौर पर आयु भी कम होगी। ऐसा न हो इस हेतु आत्मज्ञान प्राप्ति कर, उसे अमल में लाने के लिए भरसक

प्रयत्न करने में जुट जाओ व बाल्यावस्था से ही बच्चों को भी विधिवत यह ज्ञान प्रदान करना सुनिश्चित करो।

इस सन्दर्भ में सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ कह रहा है कि जो उत्पात आने वाला है उससे घबराओ नहीं क्योंकि जो इंसान सजन श्री शहनशाह हनुमान जी के वचन प्रवान कर, ईश्वर संग मित्रताई साधे रखेंगे व सर्व उसी का ही निवास मानते हुए अफुर यानि समाधि अवस्था में बने रह, सजन-भाव के व्यवहार में प्रवीण होंगे उन जीवों के लिए फिक्र करने की कोई बात नहीं।

वे शक्तिवान, आप ही उन प्यारे धर्मधारियों का, कलुकाल के झोले के प्रभाव से बचाव करेंगे और उन पर आने वाली विपत्ति टल जाएगी। अतः स्वार्थ का रास्ता त्याग कर निष्काम रास्ते पर चलना आरम्भ कर दो। तभी पुनः शक्तिशाली बन अपने मन से कलुकाल के स्वभावों का संहार कर सकोगे यानि विशेष बुद्धि होकर मानवोचित विशेष आचार-व्यवहार अपना सकोगे और अपने ख्याल को उत्तम पद/स्थान पर आसीन कर सकोगे। इसलिए सजनो हिम्मत दिखाओ और उच्च बुद्धि, उच्च ख़्याल कहलाओ।

सजनो यह सजन श्री शहनशाह महाबीर जी की ही मेहरबानी है कि वह समय रहते ही कुरस्ते पड़े हुए सजनों की नाड़ी परख, उन्हें शारीरिक व मानसिक रोगों से मुक्त करने व उनके बचाव हेतु समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार 'कीड़ी कोलों हाथी अन्दर ब्रह्मा कोलों तृण अन्दर' सजन भाव अपनाने का सुझाव व युक्ति दे रहे हैं। अतः सब शब्द विचार के द्वारा, सहनशक्ति धारण कर, निर्भयता से

सच्चाई-धर्म के रास्ते पर, निष्काम भाव से चलते हुए परोपकार प्रवृत्ति में ढलो। इस प्रकार मृतलोक को जीत लो और जगजीत नाम कहाओ।

ऐसा सुनिश्चित करने के लिए हम बुद्धिहीन जीवों को परमेश्वर सुझाव दे रहे हैं कि सजन श्री शहनशाह महाबीर जी के द्वारे पर बने रहो। द्वारे पर बने रहने का अर्थ है कि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में वर्णित सतवस्तु की चाल यानि नीतियों व रीतियों को मज़बूती से अपनाना। मनमत के वशीभूत हो टीका-टिप्पणी, टोका-टाकी करने का चलन अब छोड़ दो। याद रखो जो ऐसा करता है वह सत्य ज्ञानी नहीं होता। सत्य ज्ञानी कभी भी ऐसा चलन नहीं दर्शाता क्योंकि उसका मन खामोश होता है और वह आत्मोद्वार हेतु जो भी क्रिया बताई जा रही होती है उसको ध्यान-स्थिर होकर ग्रहण करता है व अमल में लाता है।

अतः सजनों ऐसा ही बनने हेतु उन विशेष बुद्धि, तेजवान सजन श्री शहनशाह हनुमान जी को पहचानो। जानो वे ही हमारी कलुकाल से रक्षा कर सतवस्तु अनुरूप अपने भाव-स्वभावों की बनत बनाने की युक्तियाँ प्रदान कर सकते हैं। याद रखो आत्मनिरीक्षण द्वारा ही हम अपने मन से बुराइयों का नाश कर अन्दर की लंका पर विजय प्राप्त कर सकते हैं और अपने मन को ईश्वर में लीन रख, एकता एक अवस्था में बने रह सकते है। इस प्रकार बिना किसी घबराहट के, इस जगत में विचरते हुए जन्म-मरण के चक्रव्यूह से बचे रह सकते हैं। सजनों अगर हम अफुरता से संकल्परहित सुखमय जीवन जीना चाहते हैं तो दाता महाबीर जी के

वचनों को प्रवान कर हमें परिवारजनों सहित समभाव-समदृष्टि के स्कूल में दाखिल होना होगा। ऐसा सुनिश्चित करने पर ही हम इन्सानियत में आ, मौत के पंजे से बचे रह सकेंगे।

आओ सजनों अब जानें कि वर्तमान कलियुगी स्वभावों से उबर पुनः इन्सानियत में आने के लिए मनुष्य को क्या करना आवश्यक है-

1. याद रखो कि आत्मा अजन्मा, अजर, अमर है और मानव जीवन का लक्ष्य है आत्म साक्षात्कार। सांसारिक व आध्यात्मिक जीवन के लिए स्वस्थ शरीर आवश्यक है वरना कोई कार्य सिद्ध नहीं हो सकता। सक्रिय जीवन नहीं जिया जा सकता। शरीर ईश्वर का मंदिर है, इसे स्वस्थ व स्वच्छ रखना प्रथम कर्त्तव्य मानो।

2. चरित्र को अच्छा बनाने हेतु मन को विकारों से मुक्त कर शुद्ध रखो। यही सर्वांगीण स्वस्थता के लिए अनिवार्य है। न्यायोचित कर्म करना अपना धर्म मानो। सदा ईश्वर के आश्रय में रहो। आध्यात्मिक निष्ठा व परोपकार हेतु अपना जीवन समर्पित कर दो। अपनी सीमाएँ जानकर प्रालब्ध अनुरूप उपलब्ध साधनों का भरपूर उपयोग करो।

3. कलुकाल के प्रभाव के कारण मानव की प्रकृति 'सादा जीवन उच्च विचार' रखने के स्थान पर सदैव भौतिकता से सम्पन्न जीवन व निम्न विचार की ओर हो गयी है। मनुष्य के लिए स्पष्ट व्यवहार में बने रहना कठिन हो गया है। याद रखो मनुष्य जैसा सोचता है वैसा ही बन जाता है यानि वह

जैसा बोता है वैसा ही काटता है। अतः भोजन की तरह हमारे विचार व व्यवहार भी शुद्ध होने चाहिए। यदि विचार शुद्ध होते हैं तो शरीर स्वस्थ रहता है। बुरे विचार अपने शरीर पर तो बुरा प्रभाव डालते ही हैं दूसरों के शरीर पर भी बुरा प्रभाव डालते हैं। इससे विचार करने वाले व जिसके विषय में विचार किया जा रहा है, दोनों को ही हानि पहुँचती है। इसलिए हमें बुरे विचारों से बचना चाहिए व सद् विचारों को अपने जीवन में महत्त्व देना चाहिए। यह परोपकार वृत्ति में ढलने के लिए आवश्यक है। सदा याद रखो कि हम सब सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड के रचनाकार परमपिता परमेश्वर की संतान हैं।

4. हमें प्राकृतिक नियमों के अनुसार जीवन जीना चाहिए ताकि जिन प्राकृतिक तत्वों से शरीर का निर्माण हुआ है उनके पूर्ण उपयोग से शरीर पूर्णतया स्वस्थ बना रहे।

5. हमें दूसरों को कष्ट नहीं पहुँचाना चाहिए। अपशब्द या कठोर वचन बोलकर अथवा दूसरों की आलोचना करके उनका हृदय नहीं दुखाना चाहिए।

6. इस जगत में कोई भी पूर्ण नहीं है इसलिए यदि हमारे साथ कोई अनुचित व्यवहार भी करता है तो उसे यह सोचकर क्षमा कर देना चाहिए कि वह अज्ञानवश ऐसी भूल कर रहा है।

7. यदि हम किसी के साथ दुर्व्यवहार करते हैं या किसी की कोई वस्तु चुराते हैं तो हमारा मन स्वाभाविक रूप से अशान्त हो जाता है और यह हमारे स्वास्थ्य पर विपरीत प्रभाव

डालता है। इसके प्रति हमारा अन्तःकरण हमें सचेत करता है। अतः हमें अपनी आत्मा की आवाज़ को सुन कर उसे समझने व उसका पालन करने के स्वभाव में ढलना चाहिए।

8. व्याकुलता व चिन्ता शरीर व मन दोनों के लिए हानिकारक है अतः सावधान रहें व प्रतिकूल परिस्थितियों में भी आत्मनियन्त्रण द्वारा मन को शान्त रखें। कदापि क्रोध न करें और न ही भयभीत हों।

9. आलस्य न करें। कहा जाता है खाली दिमाग़ शैतान का घर होता है। अतः स्वयं को ज्ञान प्रदान करने वाली पुस्तकें पढ़ने, बागवानी, प्रातः व सायं भ्रमण, मित्रों के साथ समाजिक विषयों पर चर्चा व परोपकार के कार्यों में व्यस्त रखें।

10. भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से ही ब्रह्मचर्य के पालन पर बल दिया जाता रहा है। ब्रह्मचर्य हमें स्वस्थ रखने और लम्बी आयु प्रदान करने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। अतः विद्या प्राप्त करने के पश्चात गृहस्थ के लिए भी आत्मसंयम से ब्रह्मचर्य का पालन करना आवश्यक है।

11. किसी भी परिस्थिति में चाहे वह अच्छी हो या बुरी, भगवान को कभी न भूलें। प्रतिकूल परिस्थितियाँ हमारी उन भूलों का परिणाम हैं जो हमने इस जन्म या पूर्व जन्म में की हैं। हम स्वयं ही उनके प्रति उत्तरदायी हैं न कि भगवान।

संक्षेपतः सजनों हम सब जानते हैं कि कलुकाल हटने वाला

है और सतवस्तु आने वाली है अर्थात् वह शुभ दिन आने वाला है जब इस जगत में हर जीव को रोग-सोग, निंदा-झूठ आदि से मुक्ति मिलेगी।

इस तरह हर जीव आत्मतुष्ट हो आत्मानन्द का अनुभव करते हुए, चैतन्य अवस्था में बने रह, भिन्न-भेद रहित, सच्चाई-धर्म के रास्ते पर चलते हुए, सजन-भाव के व्यवहार द्वारा एकता के सूत्र में बँधा रह सकेगा। यह प्रेम अपने आप में निराला होगा क्योंकि सम्पूर्ण मानव-जाति तब एक छत्र ईश्वर को पहचानने वाली और उसी के शासन अनुसार व्यावहारिकता अपनाएगी व एकता एक अवस्था में बनी रह पाएगी। यही सतवस्तु का चलन है। इस बात को समझो व सतवस्तु की चाल पकड़ने में देरी मत करो।

जानो कि सतवस्तु में वही रह सकता है जो समभाव के सौखे सबक को परिपक्व कर लेगा। अतः उस सर्वव्यापी भगवान का जिसका आपके मन मन्दिर में व चार चुफेर बसेरा है उसका संग अपना लो। उसके संग बने रहो और उन्हीं के विचारों के अनुसार भाव-स्वभाव अपना कर, आत्मबोध कर हर्षा उठो। उनकी अपने प्रति सजनता को समझो और उन्हीं के ही वचनो को भक्ति-भाव से यानि सुदृढ़ता से वर्त्त-वर्त्ताव में लाओ।

इसे ही अपना ध्यान व साधना समझो। यही चौरासी से बचने का तरीका है। अतः सजनों अभी भी वक्त है सम्भल जाओ और सजन श्री शहनशाह हनुमान जी की चरण-शरण में बने रह अपना बचाव करो और अपना बेड़ा पार करो।

महाबीर जी के मुख के शब्द

किस्मत दा ताला खोल रे, किस्मत दी कुन्जी हेई कोल रे।
किस्मत दा ताला खोल रे, किस्मत दी कुन्जी हेई कोल रे।
भाग उन्हां दे जाणे विरला किस्मत पहचाणे।
ओ विरला किस्मत पहचाणे हां विरला किस्मत पहचाणे।
ओ ओ ओ त्याग उन्हां दे कोल जीवन न रोल रे।
किस्मत दा ताला खोल रे, किस्मत दी कुन्जी हेई कोल रे।

ओ किस्मत दे बन्दे गल पा लये तूं फन्दे।
ओ गल पा लये क्यों फन्दे हां गल पा लये क्यों फन्दे ।
ओ ओ ओ फन्दे अपने तोड़ जीवन न रोल रे।
किस्मत दा ताला खोल रे, किस्मत दी कुन्जी हेई कोल रे।
किस्मत दे राहवे जेहड़ा संगे पैरां विच पा लये ढंगे।
ओ पैरां विच पा लये ढंगे हां पैरां विच पा लये ढंगे।
ओ ओ ओ ढंगे दियां गंडा खोल जीवन अनमोल रे
किस्मत दा ताला खोल रे, किस्मत दी कुन्जी हेई कोल रे।
किस्मत प्रभु ने बनाई जो किस्मत तेरी हाई।
ओ जो किस्मत तेरी हाई हां जो किस्मत तेरी हाई।
ओ ओ ओ चक्कर तेरे पोल देसन सारे खोल रे।
किस्मत दा ताला खोल रे, किस्मत दी कुन्जी हेई कोल रे।
महाबीर जी ने युक्ति बताई ताले नूं कुन्जी लाई।
ओ ताले नूं कुन्जी लाई, हां ताले नूं कुन्जी लाई।
ओ भाग उन्हां दे चंगे हीरा लभ लिया अनमोल रे।
किस्मत दा ताला खोल रे, किस्मत दी कुन्जी हेई कोल रे।

शब्दः- प्रालब्ध ओही कुछ दस्से ओ सोहणियां,

जो कुछ जीव कमाई कमावे।
लिखण वाली लेखणी सब कुछ लिखदी जावे।

सजनो आज की कक्षा में जो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ अनुसार युक्ति बताई गई है उसे किस्मत का ताला खोलने की कुंजी समझो । इस युक्ति को अमल में ला सजनो रूप, रंग, रेखा रहित हो जाओ और किस्मत पर फ़तह पावो। तभी तो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है:-

अपनी किस्मत जितनी जे,
हिम्मत इन्सानों हारो न अपनी किस्मत जितनी जे।
हनुमान जी दे वचनां दी पालना करो,
दिलबर नूं दिलों विसारो न ।।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरान्त सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियन्त्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 30 अगस्त 2015 का सबक

जीव
भाग-6

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्म-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ का प्रत्येक जीव को सन्देश श्री साजन जी के मुख के शब्द ख़्याल जदों अपने घर विच राहवे तदों जीव विश्राम नूं पावे जेहड़े इन्सान यत्न करन, यत्न करन।।

ख़्याल जदों अपने घर विच राहवे,
इन्सान ध्यान इस्थर हो जावे

संग लक्ष्मी चतुर्भुजधारी दा दर्शन पावे,
कोई विरले दर्शन करन, दर्शन करन।।

केहड़े रस्ते जाना सी सजनों,
केहड़े रस्ते जाय चढ़े
घर दा रस्ता भुल के ते,
दूसरे शहर विच जाय वड़े जाय वड़े।।

अर्थात् ख्याल अपने सच्चे घर में स्थिर रहते हुए ही विश्राम को प्राप्त करता है। अतः इस हेतु हर मनुष्य को सावधान रह, युक्तिसंगत खुद पर नियन्त्रण रखते हुए, प्रयत्नशील रहना है। इसके प्रति कदाचित् कमज़ोर नहीं पड़ना। याद रखो ऐसा करने से ही ध्यान स्थिर और धारणा सत्यानुरूप हो पाएगी। यही सबसे उत्तम साधना है जिसके परिणामस्वरूप प्रत्येक के हृदय में विराजमान शंख, चक्र, गदा, पद्मधारी का दर्शन सहजता से हो सकता है।

इस सन्दर्भ में हम मानते हैं कि कलियुग के प्रभाव के कारण कोई विरला ही आज उस सुलभ व सुन्दर दर्शन यानि अपने असलियत स्वरूप से परिचित है। अपने वास्तविक स्वरूप के प्रति विमुखता के कारण ही इन्सान जगत के भ्रम जाल में फँस, अपने घर का रास्ता भूल कर सांसारिकता का यानि स्वार्थ का रास्ता अपना बैठा है। इस सन्दर्भ में याद रखो कि जहाँ जगत में उलझ कर स्वार्थ का रास्ता अपनाने वाला जन्म-मरण के चक्रव्यूह में फँस जाता है वहीं परमार्थ के रास्ते पर चलने वाला अपने जीवन के सर्वोत्तम लक्ष्य, परमपद को प्राप्त करता है।

इसलिए यदि नित्य अवस्था में बने रह सुख और शांति को प्राप्त करना चाहते हो तो अपने घर में बने रहो। मत भूलो कि जो आनन्द अपने घर में है, वह दूसरो के घर में यानि मृत्तलोक रूपी परदेस में कदापि प्राप्त नही हो सकता। अतः यदि सच्चा आनन्द प्राप्त करना चाहते हो तो अपने सत्-चित्त-स्वरूप में स्थिरता से बने रहो और सत्यज्ञान अनुसार व्यावहारिकता अपनाकर, सुख-शान्ति का जीवन व्यतीत करते हुए अंत में विश्राम को पाओ।

इस परिप्रेक्ष्य में हम सब जानते ही हैं कि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में सतवस्तु की ही बात है। जो बात अपने आप में हीरे के समान अनमोल है। सतवस्तु की उस बात को, कुदरत विच आकर सुनने का विधान है।

इस क्रिया अनुसार ही इन्सान के अन्दर इस सत्य बात को समझने के प्रति रुचि बनती है व फिर वह वृत्ति को रूप देते हुए स्मृति में इस तरह से ठहर जाती है कि उसे यथा अमल में लाना किसी प्रकार से भी कोई कठिन कार्य नहीं रहता। मानो कि यह सौखा तरीका है शास्त्र के अनमोल वचनों को प्रवान कर, ख़ालिस सोना हो अपने आप की पहचान करने का व इन्सानियत अनुसार जीवन जीने का।

इस सन्दर्भ में जानो कि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ की पवित्र वाणी को शब्द विचार करने पर ही पहचाना जा सकता है। अतः विचार शब्द पकड़ लो और जगत की ओर से मुख मोड़ लो। जान लो कि जो जीव इस क्रिया को करने में अयोग्य होता है वह अपना आप नहीं पहचान सकता। इस प्रकार वह कमज़ोर इन्सान जीवन मे शब्द विचार के अर्थ को धारने में

हार खा जाता है। इस प्रकार सुरत शब्द के रंग में नहीं रंग पाती।

अतः इंसान होने के नाते सजनों इन्हीं वचनों को प्रवान करने में ही अपनी शान समझो क्योंकि यह अपने ख़्याल को निज दर्शन में स्थित रख, फुरने की सृष्टि से आज़ाद रहने की बात है यानि परिपूर्ण चैतन्य अवस्था में बने रह स्वस्थ मानसिकता से समभाव-समदृष्टि अनुरूप नेक नीयती से निर्विकार जीवन जीते हुए जगत में अपना नाम रोशन करने की बात है। निःसंदेह इस हेतु सजनों हमें अक्लमन्द इन्सानों की तरह जीवन जीना सुनिश्चित करना होगा और अपने ऊपर ध्यान से ख़बरदार रहना होगा। इस तरह अपने ख़्याल को जगत से आज़ाद रख अक्लमन्द बने रहना होगा तथा किसी कारण भी बुरा संग कर अपनी अक्ल गँवा उसे बरबाद नहीं करना होगा।

इस सन्दर्भ में सजनो सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ प्रत्येक इन्सान को सन्देश दे रहा है कि अक्ल को ही अपना मीत मानो क्योंकि इसी के द्वारा जग को जीत सकते हैं व इन्सानों को दंग कर सकते हैं। आगे यह भी कहा गया है कि अक्ल और कहीं से नहीं अपितु हृदय वेद विदित आत्मिक ज्ञान द्वारा ही प्राप्त होती है। इस आत्मिक ज्ञान को प्राप्त कर ही हम जान सकते हैं कि यह जगत मुसाफ़िरखाना है और इसके साथ जुड़ना मूर्खता को प्राप्त होने की बात है।

अतः सजनो विचार जो कुदरती आई हुई है और महाराज जी के मुख की वाणी है व जीत और फ़तह है उसे पकड़ अपने सारे रोग व संकट हर लो। इस तरह अविचार जो

कुसंग के कारण मनुराज ने रची है उसे त्याग दो और अपना जीवन बनाओ। निश्चय लो कि हमें विचारवान बनना है और कुल दुनियां में और जनचर-बनचर-जड़-चेतन में एक प्रकाश समझ, निष्काम रास्ते पर बने रह, नेक कमाई करते हुए विजयी होना है। याद रखो यह ईश्वर का प्यारा व आज्ञाकारी पुत्र बनने की व मन को संकल्प रहित रख, अमीरों का अमीर होने की बात है।

जीव के उद्धार हेतु सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में परमेश्वर प्रत्येक इन्सान को समझा रहे हैं किः-

1. सर्वकला भरपूर अंतर्यामी ईश्वर सबके हृदय में ही विराजमान हैं। अतः सर्वप्रथम 'साडा है सजन राम, राम है कुल जहान' के अर्थ को जीवन में उतारने का महत्त्व जानो व समझो कि सर्व आत्मा में एक परमात्मा यानि चैतन्य शक्ति 'मैं' परमेश्वर ही हूँ। इसलिए ईश्वर को ही अपना सबसे अच्छा व प्रिय मित्र मानो व उसके निकट बने रहो। याद रखो ऐसा करने पर आनन्द की अनुभूति होगी व दुःख-सुख, जन्म-मरण, रोग-सोग, खुशी-ग़मी, मान-अपमान, अमीरी-ग़रीबी व खुशी-ग़मी में एकरस बने रह हर विपत्ति से बचे रह सकोगे।

2. वेदों में जो लिखा है उसी को ही वेद, पुराण, कुरान, गुरुग्रंथ, गुरुवाणी मानो क्योंकि वे शब्द ही सत्यज्ञानयुक्त हीरे रत्नों की खान हैं। जान लो कि इसके अतिरिक्त बाकी सब अज्ञान है जिससे मिथ्या गुण धारणा होती है और इन्सान के हृदय में खोट भरता है। फलस्वरूप उसके व्यक्तित्व की शोभा घटती है। अतः सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ

में शब्द विचार के रूप में वर्णित एक-एक बात को पकड़ो और उन शब्द विचारों पर स्थिर बने रहने हेतु किसी से मत डरो।

3. सत्-असत् का विचार करते हुए सत्-सत् बोलना सीखो व सच्चाई-धर्म के रास्ते पर विचरते हुए निज स्वरूप को पाओ। मानो यह अपने आप में निराली चाल है जिस पर बने रहने वाला जीव बेख़ौफा, बेख़तरा, निषंग जगत में विचरता है और खुशी-खुशी दिन व्यतीत करते हुए रात को भी सुख की नींद सो सकता है। यह होता है आत्मिक ज्ञान प्राप्त कर, उसी यथार्थता अनुरूप आचरण में बने रह जीव का संकल्प रहित होकर जगत में विचरना व अटल राज्य पाना।

4. अपने अंतःकरण को निर्मल रखते हुए कुल संसार को निर्मलता का पाठ पढ़ाओ ताकि सभी जीव इस सूक्ष्म युक्ति की ध्यान धारणा द्वारा अपनी वृत्ति-स्मृति, बुद्धि व स्वभावों का ताना-बाना निर्मल रखते हुए अपने निर्मल स्वरूप में बने रहने के योग्य बनें और सतवस्तु की चाल पकड़ उच्च बुद्धि उच्च ख़्याल हो पुण्य कर्मों द्वारा यश-कीर्ति को प्राप्त हों।

5. विचार शब्द को पकड़कर सजनो पूरी समदृष्टि दिखाओ। इस हेतु अपनी ग़लतियाँ सत्यता से स्वीकारो और अपनी विचारधारा को सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में विदित ज्ञान के अनुसार ढालो। इस प्रकार समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार सबको एक दृष्टि से देखने के व्यवहार में अटलता से मज़बूत बने रहने हेतु कदम-कदम पर अपनी तुलना करो ताकि मन में अमीरी-ग़रीबी, वड-छोट व अपने-पराए का भेदभाव घर न कर पाए। याद रखो ऐसा करने पर

ही सारे परिवारजन एक ही रंग में रंगे हुए नज़र आएंगे और हमारा परिवार संसारी परिवार से भिन्न परमार्थी परिवार कहलाने के योग्य बनेगा व घर सतयुग कहलाएगा।

6. आपसी सम्बन्धों को मर्यादा अनुसार अफुरता से भली-भांति निभाओ व घर सतयुग बनाना सुनिश्चित करो। इस सन्दर्भ में यह याद रखो कि ये सभी सांसारिक सम्बन्ध फाँसी के फंदे की तरह है। इनमें फँसना नहीं अपितु सबके प्रति अपना फ़र्ज़ अदा हँसकर करना है। इस हेतु यह सत्य मानकर चलना है कि-

जीव जन्तु प्रभु जी तेरे उपजाए,
फुरने दे स्त्री-पुरुष नज़र आए।
सब स्त्रियाँ इक पुरुष हर थाईं,
बेअन्त बेअन्त बे अन्त गुसाईं।।

अर्थात् इस फुरने की सृष्टि को उपजाने वाला व इसकी बनत बनाने वाला ईश्वर ही है और उसी की जोत ही सर्व सबाई है। इस भाव को अपनाकर अपनी अन्दरूनी व बैहरूनी दोनों वृत्तियाँ समभाव-समदृष्टि अनुरूप साधे रखो, क्योंकि इनके एकता एक अवस्था में बने रहने पर ही हम हर प्रकार से विकृति यानि रोग रहित बने रह, समरूपता से आनन्दमय जीवन व्यतीत करने के योग्य बन सकेंगे। यही नहीं ऐसा चलन अपनाकर ही हम खुद को व अपने परिवारजनों सहित अन्य जीवों को जन्म-मरण की त्रास से बचा सकेंगे।

7. सजन श्री शहनशाह हनुमान जी जिनका नाम अमर है

उन्ही का संग करो क्योंकि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है, 'मनमत ते सजनों न चलना गुरुमत दा संग असाँ करना'। याद रखो सजन श्री शहनशाह हनुमान जी हम कई जन्मों के भूले हुए जीवों की मनुराज में गिरी बुद्धि को आत्मिक ज्ञान द्वारा सचेत कर विश्राम अवस्था प्रदान कर सकते हैं। अतः सजनों सजन श्री शहनशाह हनुमान जी की युक्तियों से प्रेरणा लेकर व तद्नुकूल वर्त्त-वर्त्ताव करके अपने हृदय से सारा खोट साफ़ कर दो और ख़ालिस सोना होकर चमको व इंसानियत अनुरूप व्यवहार करते हुए चमक दिखाओ। इस प्रकार सर्व एकात्मा पहचान कर अपने निज स्वरूप की झांकी देख लो। याद रखो कि भूल कर भी किसी भी कारण उनका संग न छूटे और न ही किसी भी मजबूरी के कारण हमसे उनके वचनों की उल्लंघना जैसा कसूर हो। इस प्रकार सजनो अमर नाम कहलाओ।

8. ऐसा कर पाने के योग्य बनने हेतु भूल कर भी किसी शरीरधारी को ध्यान में और निगाह में न लावो और न ही ज़बान पर उसका जिक्र आवे। तात्पर्य यह है कि अपनी जिह्वा का वल कड्डो यानि जिह्वा स्वतन्त्र रखो और 'शब्द है गुरु' मान सजन श्री शहनशाह हनुमान जी के द्वारे पर बने रहो। सजनो जिनसे मौत भी थर-थर काँपती है, उनके वचनानुसार मौत के भय से बचने हेतु गुरु ग्रन्थ, गुरु वाणी, गुरु शब्द इस बात को प्रबलता से धारे रखो।

9. आत्मनिर्भर बनो अर्थात् नेक कमाई कर दुनियां में मौज उड़ाओ। तात्पर्य यह है कि हाथ-पाँव, आखें व युवावस्था होते हुए दूसरों की कमाई खाने के स्वभाव में मत ढलो। इस

सन्दर्भ में याद रखो कि चार वेद छः शास्त्र कुदरती आए हुए हैं। अतः कलुकाल के धोखे में आकर उनके मालिक बन अपनी पूजा-मानता कराते हुए, उस ईश्वर की चरण-शरण में बने रहने में बाधक बनना व इस क्रिया द्वारा अन्य जीवों को कर्मकाण्डों में फँसा बन्धनमान बनाना छोड़ दो क्योंकि यह जीव के कमजोर होने व बुद्धि के मनुराज में फँस संसार में भटकने की बात है यानि जीवन हारना है। इसीलिए तो सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ कह रहा है :-

ख़रीद अच्छी करो इन्सानो,
रोवन दा दिन कदे वी न आवे।

10. इस कथन को मानते हुए दूसरों को लूटना और दुखिया जीवों को मिथ्या ज्ञान द्वारा भ्रमित करना बंद कर दो। इसके स्थान पर शब्द ब्रह्म विचार पकड़ उन्हें मुक्त जीवन जीना सिखाते हुए खुद भी मुक्ति को प्राप्त करो। यह होगा सजन-भाव रखते हुए सभी जीवों को भवसागर से तरने योग्य बना पार उतारना।

11. अपनी प्रारब्ध में खुश रहो। दूसरों की देखा-देखी या प्रतिस्पर्धावश सब कुछ पाने हेतु झूठ का सहारा ले चोरियाँ, ठगियाँ मत करो क्योंकि ईश्वर कहते हैं कि 'लालच बुरी बला ओ लालच बुरी बला, कई जीवां दा करे ओ खात्मा, लालच करे तबाह हां हां लालच करे तबाह।' याद रखो सावधान करने के बावजूद भी यदि यह स्वभाव नहीं छोडा तो पकड़े जाने पर अपनी खोटी ख़रीद दुःख-सुख के रूप में भुगतनी पडेगी। फिर पछताओगे। अत सजनों त्रेता, द्वापर व गंदगी भरे कलुकाल के स्वभावों का चोला बदल, सतवस्तु

के स्वभाव अपनाओ व मनुष्यत्व में ढल श्रेष्ठ पद प्राप्त करो।

12. समभाव-समदृष्टि की मर्यादा पर अटल रह अपनी कमज़ोरियों को दूर करो व एक निगाह एक दृष्टि, एक दृष्टि एक दर्शन द्वारा चक्षुओं को दिव्य रूप देखने की शक्ति प्रदान करो व अलौकिक दृश्यों को देखने के योग्य बनो। याद रखो ऐसा सुनिश्चित कर पाने पर जन्म-मरण के झोले से सदा के लिए मुक्ति प्राप्त कर सकोगे।

अभी जो हमने पढ़ा है उस पर सुदृढ़ बने रहने हेतु हमें समभाव-समदृष्टि की मर्यादा पर अटल बने रहना है। इसके प्रति कदाचित् कमजोरी नहीं दिखानी। तभी हम अपना जीवन सफल बना सकते हैं। संक्षेपतः सजनों इसे उन बख़्शनहार बख़्शन्द दाता की मेहरबानी मानो जो वह अपने आप को पकड़ना सिखा कर हमारे बदन से खोट निकाल रहे हैं व ख़ालिस सोना बना निंदा और झूठ आदि नकारात्मक स्वभावों से बचाव कर रहे हैं। उनका इस प्रकार हमको सच्चाई-धर्म के रास्ते पर चलने के लिए प्रेरित करना प्रत्येक जीव को निष्काम रास्ते पर लाकर विश्राम अवस्था प्रदान करने की बात है। इसी यत्न द्वारा जीव ब्रह्म ज्ञान प्राप्त करने के योग्य बन अपने मन को परमेश्वर में लीन रखते हुए अनुरागी व त्यागी अवस्था में बना रह सकता है। जीवों पर उनकी यह कृपा जगत में विचरते समय सन्यासियों की तरह, उदासीनता की चाल चलते हुए अपने जीवन कर्त्तव्य सही ढंग से निभाने की बात है। यह होता है नित्यअवस्था में बने रह अकर्त्ता भाव से सब कुछ करते हुए रोशन नाम कहलाना।

यह सब जानने के पश्चात् सजनो हमारे लिए बनता है कि हम इन्सान होकर नादानों की तरह जीवन व्यतीत न करें और ख़ालिस सोना होकर अपना आप पहचान लें। इस हेतु मौनव्रत धार, उन्हीं के वचन प्रवान करते हुए जो भी उन्होंने नाम-ध्यान बख़्शा है उसी स्वतन्त्र युक्ति को प्रवान करते हुए स्वतन्त्र कमाई करें और परिपूर्ण इन्सान अर्थात् अमीरों के भी अमीर कहलाएं।

अंततः सजनों यह जान लो कि हनुमान जी की युक्ति सारे जगत से निराली है जिसे कोई बुद्धि वाला इन्सान ही समझ सकता है। बाकी जीव जो स्वभावों की ओर से अपने ख़्याल को हटाकर उन संग जोड़ने में कमज़ोर होते हैं, वे उस चाल को पकड़ने में अपने आप को असमर्थ पाते हैं। ऐसे जीव मानसिक तौर पर कठिन रोगी होते हैं और उनका इलाज कर भजन-बन्दगी के रास्ते पर चलाना सहज नहीं होता। जानो ऐसे बिगड़े हुए इन्सान अपने जीवन के साथ इन्साफ नहीं कर पाते।

अंततः सजनो आत्मिक ज्ञान के विपरीत चलन मत अपनाओ क्योंकि यह मूर्खता को प्राप्त होने की बात है। इससे बुद्धि मनुराज के अधिकार में चली जाएगी और जीवन हार बैठोगे। याद रखो एक बार प्रकाश के लुप्त होते ही अगर हृदय में अन्धकार छा गया तो जीव का अन्ध-कूप खाई में गिरना सुनिश्चित होगा जहाँ से कोई पकड़ कर निकाल नहीं सकता। इस तरह उसी अवस्था में रोते हुए उम्र बितानी पड़ेगी। इसलिए सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ की बात मानो और अज्ञान रूपी अन्धकार को छोड़, सत्य से अपना हृदय

प्रकाशित कर लो और जन्म-मरण के दुःख से बच अपनी बिगड़ी सँवार लो। इस हेतु समर्पित भाव से उस हितकारी के आगे सीस अर्पण करो।

जाग ओ बन्दिया वक्त तेरा है जागने दा
हिम्मत न हारी वक्त न गुजारी, कर लै प्रभु नूं याद
वक्त तेरा है जागने दा, ओ वक्त तेरा है जागने दा।।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरान्त सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियन्त्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 06 सितम्बर 2015 का सबक

जीव (शरीरधारी आत्मा)

भाग-7

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्मा-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

अभी तक हमने जाना कि जीव यानि माया के आवरण में लिपटी चेतन आत्मा हर प्राणी का आधार होती है। यही मनुष्य के शरीर के जीवित होने का व उस साहसी का क्रांतिकारियों की तरह, अपने जीवन के निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने का हेतु होता है। तभी तो हर मानव के लिए इस सत्य से परिचित होना अनिवार्य है कि जीवन का आधार तत्व आत्मा है, स्थूल शरीर नहीं। अतः सभी प्राणियों के प्रति

आत्मभाव रखते हुए, अपना विकास, भरण-पोषण एवं वंश-वृद्धि आदि करने का विधान है।

इस सन्दर्भ में याद रखो यदि आत्मभाव के विपरीत, अगर हम राग-द्वेष से युक्त किसी अन्य भाव के अनुसार, वंश-वृद्धि, भरण-पोषण एवं विकास के प्रति अपने महत्त्वपूर्ण दायित्व को, सम्पन्न करते हैं तो हम हानि को प्राप्त होते हैं क्योंकि फिर परस्पर संसर्ग के फुरने अनुसार, जो भी सन्तान हमारे घर में पैदा होती है, वह कामाचारी होती है।

तात्पर्य यह है कि इन्सानियत के भाव-स्वभावों से सुसज्जित होने के स्थान पर वह मंदे यानि बुरे भाव-स्वभावों से युक्त होने के कारण दुराचारी व व्यभिचारी होती है। ऐसी सन्तान को फिर लाख यत्न करने के पश्चात् भी हम इन्सानियत अनुरूप नहीं ढाल सकते। इस तरह परस्पर संसर्ग के समय की गई इतनी सी लापरवाही व भूल कितनी नुकसानदायक साबित होती है, यह हमें याद रखना होगा। सजनों जानते हो ऐसा क्यों होता है?

मौन।

क्योंकि उस समय हम सृष्टि रचना के महान कार्य के निमित्त अफुरता व निष्कामता से अपना सहयोग देने के स्थान पर काम के वशीभूत होते हैं। हमारा मन-मस्तिष्क कामनापूर्ति के जोश में इतना अधिक मदहोश होता है कि वंश-वृद्धि के प्रति अपने दायित्व को कुशलता से सम्पन्न करने की युक्ति के प्रति सुचेत नहीं रह पाता। यही कारण है कि हम नुकसान को प्राप्त होते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में सजनों

याद रखो कि ईश्वर ने हमें बुद्धि दी है। उस विवेक बुद्धि का इस्तेमाल करते हुए प्रत्येक कार्य अफुरता से सम्पन्न करना सीखो। ऐसा करने से परिणाम के रूप में न केवल उत्तम सत्यनिष्ठ सन्तान को प्राप्त कर सकोगे अपितु उसका भरण-पोषण व विकास भी मानव धर्मानुसार कर सकोगे। इस तरह एकाग्रता से सावधानी लेने से सब जगत-जंजाल सिमट जाएगा और जीव आज़ाद होकर स्वतन्त्रता से निर्वैर, निर्भय, निर्विकार व निरासक्त हो इस जगत में विचर सकेगा।

अतः सजनों आओ जीवन को परमात्मा की अद्भुत देन मानते हुए, समभाव-समदृष्टि के स्कूल से, वेद-शास्त्रों अनुरूप आत्मिक ज्ञान प्राप्त कर, सबसे सजनता का व्यवहार करें। इस तरह संकल्प रहित रह, अपने असलियत स्वरूप में बने रहना सुनिश्चित करें व जन्म-मरण के चक्रव्यूह से मुक्त होने के लिए प्रश्नोत्तर के माध्यम से जो अभी बताया जाएगा उसे ध्यान से समझें:-

प्रश्न- जीव कैसे इस जगत में विचरते हुए जन्म-मरण के भय से आज़ाद रह विश्राम अवस्था को प्राप्त कर सकता है?

उत्तर- जीव की आत्मा अमर है। केवल शरीर ही नाशवान है। मृत्यु शरीर की होती है, आत्मा की नहीं। अतः जीव को मृत्यु का भय नहीं होना चाहिए। आत्मा हमारे शरीर के अंदर कष्ट सहते हुए भी धर्म का आचरण करने व सोने के समान अपनी कांति बिखेरने के लिए प्रविष्ट हुई है। अतः स्मरण रहे कि हमारी आत्मा, प्राण व शरीर गुणवान बने रहें। हम अच्छे

कर्मों को करने का संकल्प लें, हमारे प्राण अविनाशी शक्ति से युक्त रहें, हम मर्यादाओं का पालन करें तथा निषिद्ध कर्म न करें, इसके लिए परमात्मा रूपी हीरे की सार को पाना होगा। याद रखो कि ऐसा करने पर ही मनुष्य का ख़्याल अपने सच्चे घर में सधा रह सकता है यानि जीव सांसारिकता में न उलझ, विश्राम अवस्था को प्राप्त होता है।

श्वसन प्रक्रिया द्वारा अस्तित्व में रहने वाला जीव (प्राण) जब शरीर से चला जाता है तब यह शरीर निश्चल पड़ जाता है। मरणशील शरीरों के साथ रहने वाली आत्मा अविनाशी है, अतएव अविनाशी आत्मा, अपनी धारण करने वाली शक्तियों से संपन्न होकर सर्वत्र निर्बाध विचरण करती है। यह आत्मा अविनाशी होने पर भी मरणधर्मा शरीर के साथ आबद्ध होने से विविध योनियों में जाती है।

यह अपनी धारण क्षमता से ही उन शरीरों में आती व शरीरों से पृथक होती रहती है। ये दोनों शरीर और आत्मा, शाश्वत एवं गतिशील होते हुए विपरीत गतियों से युक्त हैं। अधिकतर लोग इनमें से एक (शरीर) को तो जानते हैं, पर दूसरे(आत्मा) को नहीं समझते। अतः सदैव याद रखो कि प्रकाशवान आत्मा इस देह रूप गुहा में विराजती है। जरत (गतिशील) नामक महान पद में यह आत्मा, सचेष्ट और प्राणयुक्त से प्रतिष्ठित है। याद रखो उस धैर्यवान, नित्य, अजर, युवा आत्मा को जो जीव जान लेता है, वह मृत्यु से भयभीत नहीं होता।

प्रश्न- जीव के लिए ब्रह्म के अनुशासन अनुरूप आचरणशील बने रहना क्यों आवश्यक है ?

उत्तर- ब्रह्मचारी यानि ब्रह्म के अनुशासन में आचरणशील रहने वाला जीव द्युलोक (स्वर्ग) व भूलोक इन दोनों को अपने अनुकूल बनाता हुआ चलता है। देवगण भी उस ब्रह्मचारी में सौमनस्यता पूर्ण यानि आनन्द, प्रसन्नता व सन्तोष से निवास करते हैं। इस प्रकार वह पृथ्वी व द्युलोक को अपने तप से धारण करता है तथा अपने आचार्य यानि ब्रह्म को परिपूर्ण तृप्त व सार्थक बनाता है। तभी तो ब्रह्म के अनुशासन में चलने वाला जीव अपनी भावनाओं, विचारों तथा क्रियाओं से पृथ्वी एवं आकाश के स्थूल-सूक्ष्म प्रवाहों को अपने अनुरूप कर लेता हैं।

लौकिक अर्थ में शरीर का नाभि से नीचे वाला भाग पृथ्वी, नाभि से कंठ तक अंतरिक्ष व सिर को द्यु से संबंधित कहा जाता है। ब्रह्मचारी इन तीनों का आपस में संबंध बनाते हुए ब्रह्मानुशासन में इन्हें आबद्ध रखता है। इस प्रकार ब्रह्मचारी जीव, प्रकाशवान, ज्ञान व चेतन स्वरूप ब्रह्म को धारण करता है। तभी सभी देवता भी उसमें समाहित रहते हैं। वह प्राण, अपान, व्यान, वाणी, मन, ज्ञान तथा मेधा शक्ति को उत्पन्न करता है। ब्रह्मचारी जीव ज्ञानरूपी समुद्र में तपोनिष्ठ हो स्नातक हो जाता है और अति तेजस्वी होकर इस भूमंडल में विशिष्ट आभायुक्त हो जाता है।

प्रश्न- जीव के उद्धार में प्राणों की क्या भूमिका है?

उत्तर- जीव के सूक्ष्म प्राण ही उसे परम लक्ष्य तक पहुँचाते हैं। शरीर के अंगों का रस पीने वाला प्राण, उस हंस के समान है जो जल में से दुग्ध रूप सार अंश को पृथक करके

पीता है, यही ऋत् यानि विश्व व्यवस्था, नैतिकता और आध्यात्मिकता की दृष्टि से निश्चित ईश्वरीय नियमों से सत्य की प्राप्ति करता है। यही प्राण हमें पान अर्थात् इस भवसागर से पार उतरने जैसे कठिन और जोखिम भरे दायित्व को साहसपूर्वक सम्पन्न करने के निमित्त प्रयुक्त साधन – बल, अन्न, तेज, इन्द्रिय सामर्थ्य, दुग्धादि पेय, अमृतोपम आनंद और मधुर पदार्थ प्राप्त कराता है। इसी के फलस्वरूप शरीर रूपी दरख़्त हरा-भरा रहता है।

प्रश्न- जीव के स्वप्न कहाँ स्थापित होते हैं?

उत्तर- काया का वरण करने वाले जीवात्मा के अनुशासन में स्वप्रकाशित अंतःकरण से उत्पन्न त्रित (मन, बुद्धि चित्त) में जीव के स्वप्न स्थापित होते हैं।

प्रश्न- मनुष्य देह में कल्याणकारी शक्ति किस रूप में निवास करती है व इसका क्या महत्त्व है?

उत्तर- मनुष्य देह में कल्याणकारी चित्त शक्ति अजर और अमर रूप में निवास करती है। यम-नियम यानि इन्द्रिय निग्रह द्वारा चित्त को धर्म में स्थिर रखने वाले साधनों का व्यवहारिक जीवन में प्रयोग करने वाला जीव दीर्घायु लाभ प्राप्त करता है। इस प्रकार जो जीव इस कल्याणकारी चित्त शक्ति यानि चैतन्य की उपासना करता है, वह इस लोक में सम्मान पाता है।

प्रश्न- मैं जानना चाहता हूँ कि जीव के लिए मन और इन्द्रियों का क्या महत्त्व है?

उत्तर- यदि जीव का मन कल्याणकारी संकल्पों से युक्त है तो जीव का उद्धार निश्चित है। इसके विपरीत मन की स्थिति व्यक्ति को अंधकूप में धकेल देती है।

जीव की अनियंत्रित इन्द्रियाँ व वाणी शत्रु का कार्य करती हैं। वही नियंत्रित होने पर मित्र बन जाती हैं। जीव के छलपूर्वक स्वभाव के अनुसार ही रोग व दुर्गुण हितैषियों जैसे अपने जैसा रूप बनाकर शरीर में प्रवेश कर जाते हैं। ऐसा होने पर यानि शारीरिक व मानसिक अस्वस्था के कुप्रभावों से ग्रसित मनुष्य, विवेकशक्ति खो बैठता है और फिर जीवन में जो भी करता है मनमत के अनुसार केवल स्वार्थ साधने के लिए ही करता है। अतः इस तथ्य से शिक्षा ले, हमें निर्विकार जीवन जीने के लिए, एकाग्रचित्तता द्वारा निरोगी व निर्दोष जीवन जीने के महत्त्व को समझना है।

प्रश्न- जीव जीवित कैसे कहलाता है?

उत्तर- जीवन के दोषों को पराजित करके जो जीव व्यक्ति ऊर्जा को ऋत् यानि विश्व व्यवस्था, नैतिकता और आध्यात्मिकता की दृष्टि से निश्चित ईश्वरीय नियमों यानि सत्य के साथ जोड़ने में समर्थ होता है, वास्तव में वही प्राणवान होकर जीवित कहलाता है।

प्रश्न-कौन सा जीव पापकर्मों से बचा रह सकता हैं?

उत्तर- श्रेष्ठ कर्मों को संपन्न करने वाले जीव दुखों व पापकर्मों से बचा रहता हैं।

प्रश्न- जीवन में संकल्प का क्या महत्त्व है?

उत्तर- यदि जीव उत्साह के साथ किसी बात का संकल्प कर ले तो इच्छित फल प्राप्ति हो सकती है। इससे हमारी अनेक प्रवृतियाँ व शक्तिधाराएँ भी सहयोग करती हैं। अतः यह आवश्यक है कि मनुष्य जीवन में जो भी कर्म करने का संकल्प लें वह निष्काम भाव से ही लें। तात्पर्य यह है कि हर कर्म पूर्ण सत्यनिष्ठा व धर्मपरायणता से ईश्वर के निमित्त समर्पित करके ही करें। तभी सभी कर्म करते हुए भी संकल्प रहित अकर्त्ता भाव में स्थित रह पाएंगे।

प्रश्न- जीव कैसे अपने जीवन के सर्वोच्च लक्ष्य यानि परमपद को प्राप्त कर सकता है?

उत्तर- जीव में दिव्य ज्ञान के बीज स्वभावतः होते हैं, वे जब जीवंत होने लगते हैं तो जीव संकीर्णता की मनोभूमि में अल्प-जल में मीन की तरह कष्ट अनुभव करता है। इस प्रकार जीव में जब देवत्व परिपक्व हो जाता है, तो वह संकीर्ण स्वार्थपरता का घेरा तोड़कर प्रकट हो जाता है। ऐसा प्रकट जीव कह उठता है कि 'मैं' जो हूँ वही ईश्वर स्वरूप हूँ। मैं दिव्य-आत्माओं का अंश व वंशज हूँ। यही मेरा सहज स्वभाव है। मैं इस आस्था पर दृढ़ हूँ।' याद रखो यह बोध होने पर जीव उच्चस्तरीय गति पाता है और उस को सत्पात्र मानकर देवगण, दैवी संपदा प्रदान कर देते हैं। इस तरह वह संतोषी व धैर्यवान अहितकर प्रवृत्तियों से अप्रभावित रह जीवन में सतत प्रगतिशील रहता है और परमपद प्राप्त करने में सफल हो जाता है।

इस प्रकार जीव जब जड़-चेतन सृष्टि को इसी आत्मतत्व में अनुभव करता है तथा सभी भूतों के अंदर इस आत्मतत्व को समाहित अनुभव करता है, तब वह किसी भी प्रकार भ्रमित नहीं होता, क्योंकि जीव यह जान लेता है कि आत्मतत्व सभी भूतों में समाहित हुआ है। उस एकत्व की अनुभूति में व्यक्ति मोह व शोक रहित हो जाता है। अतः सर्वसृष्टा परमेश्वर द्वारा विनिर्मित विश्व में, अपने मनस् तत्व को परमात्म तत्व से युक्त करके पारलौकिक आनंद की प्राप्ति के लिए उस ज्योति को अपने अंदर समाहित कर लो।

सजनों इस विवेचना से स्पष्ट होता है कि जीवन एक समर यानि संग्राम है। इस संग्राम में शरीर रथ है व जीवात्मा उसकी रथी। संकल्प व कर्म रूपी बाणों को जन्म देने वाले तुणीर को 'मन' कहा जाता है। इस जीवन समर में सारथी बुद्धि है तथा चित्त वृत्तियों को लगाम कहा जाता है। शरीर से जुड़े पुरुषार्थ व पराक्रम को अश्व कहा है। इस जीवन समर में ब्रह्म मंत्र ही हमारा कवच है। इस कवच को धारण करके जब शूरवीर योद्धा संग्राम में जाते हैं तो सेना का स्वरूप बादल के सदृश होता है। अतः हे वीरों आप इस कवच की महान शक्ति को धारण करके विजय को प्राप्त करो।

सजनों जीव के विषय में अभी तक हमें जो भी ज्ञात हुआ उसका निष्कर्ष यह है कि:-

1. मायावी जगत में विचरते समय प्रत्येक जीव अपने जीवन और अस्तित्व के दो मूल प्रश्नों के उत्तर खोज रहा है। पहला इस भव्य आश्चर्यजनक प्रकृति का यथार्थ सत्य क्या है और

दूसरा वह कैसे स्वयं को शारीरिक और मानसिक रूप से स्वस्थ रख सकता है ताकि वह इस अन्तिम सत्य के पीछे जो कठिन पहेली है उसे हल कर सके।

निःसंदेह बाद वाला प्रश्न बहुत सी क्रियाओं को जन्म देता है, इनमें से एक है श्वसन क्रिया। शरीर में जीवन की क्रियाविधि सूक्ष्म प्राण या जीवनी शक्ति द्वारा चलती है। यदि कोई स्वास्थ्य और दीर्घ आयु प्राप्त करना चाहता है तो उसके लिए सूक्ष्म प्राणों पर नियन्त्रण करना अनिवार्य है। जीव के सूक्ष्म प्राण ही उसे परम लक्ष्य तक पहुँचाते हैं।

2. इस सन्दर्भ में हमें यह भी समझ में आया कि सभी प्राणियों में जीवन की क्रिया दो बलों द्वारा चलती है। एक अंगों का निर्माण करके उसकी देख-रेख करता है तथा दूसरा अंगों को नष्ट करता है और समाप्त करता है। इस प्रकार इन दो बलों द्वारा जीवन चलता रहता है। पहले बल को प्राण तथा दूसरे बल को अपान कहते हैं। जब तक प्राण प्रबल रहता है, जीवन का अस्तित्व रहता है और जब अपान शरीर पर अधिकार कर लेता है, तो यह इसे छिन्न-भिन्न करके नष्ट कर देता है। इस तरह शरीर को चलाने के लिए, दोनों बलों में समन्वय अनिवार्य है जोकि मात्र सूक्ष्म प्राणों पर नियन्त्रण द्वारा ही स्थापित हो सकता है।

इस विवेचना से हमें स्पष्ट हुआ कि सभी प्राणियों में जीवन का दो विधियों से पोषण होता है, एक श्वसन लेना और दूसरा श्वास बाहर निकालना। ये दोनों क्रियाएँ शारीरिक दोषों व अशुद्धियों को दूर कर उसे शक्ति और ऊर्जा प्रदान करती हैं। इसीलिए व्यक्ति जीवित रहता है। इस प्रकार शुद्ध

वायु इस विश्व के समस्त प्राणियों के लिए अचूक औषधि है। यह शान्ति देती है तथा आनन्द प्रदान कर व्यक्ति को निरोगी बना कर हृदय को प्रकाशित करती है। इस तरह नवजीवन प्रदान कर यह शारीरिक व्याधियों को दूर करती है। तभी तो वेदों में इस शुद्ध वायु को सारी रोग निवारक औषधियों का सार कहा गया है। इस शुद्ध वायु को श्वास द्वारा लेने से हमारे शरीर की समस्त अशुद्धियाँ प्रदूषित वायु के रूप में बाहर चली जाती है। इसीलिए शुद्ध वायु वास्तव में ईश्वर की प्रतिनिधि है। इसी कारण प्रत्येक मनुष्य को शुद्ध वायु में श्वास लेना चाहिए क्योंकि यह जीवन का रस है और समस्त रोगों को दूर कर अच्छा स्वास्थ्य प्रदान करती है।

3. इस प्रकार प्रत्येक मानव को अपने मन को अपने शरीर की अच्छी देखभाल करने हेतु प्रेरित करना चाहिए ताकि वह अपने शरीर के समस्त अंगों से सही ढंग से काम लेते हुए, अपने कर्त्तव्यों का भली भांति निर्वाह कर सके और जीवन का आनन्द उठा सके। इस हेतु वेद कहते हैं कि 'हमारा मन विषय-विकारों से रहित हो, हमारे शरीर के समस्त रोम सक्रिय हों, हमारी त्वचा और माँस नमनशील हो अर्थात् लचीला हो, हमारी अस्थियाँ संसार के आधारभूत धनरूप हों, हमारी वसा शरीर को नम्रता प्रदान करने वाली हो, हमारी अँगुलियाँ स्पर्श आनन्द देने वाली हों, हमारी दोनों भुजाएँ व इन्द्रियाँ बल-युक्त हों, हमारे दोनों हाथ कर्मशील हों, हमारी पीठ सबको धारण करने में समर्थ हो, उदर, दोनों कन्धे, गरदन, दोनों जंघाएँ, भुजा का मध्य भाग, कटि, घुटने आदि हमारे सभी अंग प्रजा की भाँति पोषण करने योग्य हों, हमारी नाभि ज्ञानरूप हो, हमारी गुदेन्द्रिय शरीर के संतुलन

का आधार हो, हम प्रजनन-शक्ति से सम्पन्न हो, हम पैरों सहित सब अंगों से धर्म रूप होकर समाज में प्रतिष्ठा को प्राप्त करें। इस तरह महान ऐश्वर्यशाली इन्द्रियों से सम्पन्न हमारा शरीर सौभाग्य युक्त हो और हमारी आत्मा और हमारा हृदय सामर्थ्यवान हो।

इस कथन अनुसार सजनों हमें दृढ़ स्थिर हृदय, अच्छी नेत्र ज्योति व श्रवण शक्ति, स्वस्थ हाथ-पैर इत्यादि के साथ-साथ अपनी वाणी को भी शक्तिशाली बनाना है ताकि वह अन्य मनुष्यों के सामने स्वयं को भली-भांति व्यक्त कर सके तथा जब उन्हें नियन्त्रित करने की आवश्यकता हो तो उन्हें नियन्त्रित भी कर सके। यहाँ जान लो कि वाणी आत्मा का प्रत्यक्ष अभिव्यक्तिकरण है। यह वाणी जब पूर्ण ज्ञान द्वारा निर्देशित होती है, तो बहुत शक्तिशाली और हृदयग्राही हो जाती है।

इसके विपरीत यदि वाणी का अभिव्यक्तिकरण स्पष्ट तथा द्वेष आदि से रहित नहीं होता, तो यह वाक्-युद्ध को अभिप्रेरित करता है और अवांछित परिणामों में समाप्त होता है। स्पष्ट है कि वाणी के द्वारा ही व्यक्तियों के मध्य मित्रता और शत्रुता होती है। वाणी के इस महत्त्व को समझते हुए हमें स्पष्ट, मधुर और शक्तिशाली वाणी का विकास करना चाहिए ताकि यह कल्याण रूप वचन बोले व महिमा से युक्त हो।

4. इस वार्त्तालाप से हमें यह भी समझ में आया कि जीवनी शक्ति से पूर्ण आकर्षक शरीर को प्राप्त करने के बाद भी व्यक्ति को लगता है कि जीवन का पूर्णता के साथ आनन्द

उठाने के लिए यह सब पर्याप्त नहीं है। उसे लगता है जैसे उसके स्वयं तथा जीवन के आनन्द के मध्य कोई तन्तु खो गया है।

समभाव-समदृष्टि की युक्ति के अनुसार वह तन्तु है स्वयं और उसके चारों ओर की परस्पर सौहार्दता या हम कह सकते हैं सज्जनता, मित्रता का भाव। यह उसके अन्तर के संसार और बाह्य जगत के मध्य सौहार्दता है। अतः वह पारस्परिक एकता व एकरसता हेतु यत्नशील हो जाता है। लेकिन इसके बाद भी उसे लगता है कि जीवन का आनन्द उससे कोसों दूर है लेकिन इस समय सुख की माला का खोया तन्तु मात्र उसके द्वारा ही नहीं वरन् उसके चारों ओर के प्रत्येक व्यक्ति के प्रति कर्त्तव्यों के निर्वहन में रहता है। इसलिए वह अब अच्छे कर्म जो सबके लिए लाभदायक हों करने में व्यस्त हो जाता है तथा सबको भी ऐसा करने के लिए प्रोत्साहित करता है।

इस प्रकार दीर्घ आयुष्य, कीर्ति, सम्पूर्ण मानव जाति की प्रसन्नता और इसके मार्गदर्शकों में वृद्धि होती है और मनुष्यों तथा प्राणियों के मध्य शान्ति एवं प्रसन्नता से पूर्ण जीवन स्थापित होता है। यहाँ उसे निष्कामता से परोपकार करने का महत्त्व समझ आ जाता है। तभी तो ऐसा मनुष्य सन्तुष्ट हो जाता है, उसके आनन्द की सीमा नहीं रहती और वह अपने नित्य स्वरूप में अटल रह, परमानन्द से जीवन बिताता है। इस प्रकार उसे लगता है कि सभी प्रकार के भौतिक साधनो से समृद्ध हो व परमानन्द को नष्ट करने वाले पापों से मुक्ति पा, वह विजयी हो गया। यह संसारी व

परमार्थी दोनो राज्य प्राप्त कर अमीरों का अमीर होने की बात होती है।

5. इस तरह मानवीय संघर्षों, उसके अस्तित्व और निर्माण के सत्य के पीछे जो पहेलियाँ हैं, उनको स्पष्टतः अभिव्यक्त कर व्यक्ति उन मूल सिद्धान्तों की खोज प्रारम्भ करता है जो उसके विकास पर शासन करते हैं। वह उन्हें समझता है तथा जीवन में वास्तविक सफलता प्राप्त करने हेतु स्वीकार करता है। तब उसे अपनी इन्द्रियों को पवित्र व शक्तिशाली बनाये रखने की आवश्यकता समझ में आती है और वह उन्हें जीवन की सकारात्मक अभिलाषाओं के साथ निर्देशित करता है।

तात्पर्य यह है कि उज्ज्वल व्यक्तित्व के निर्माण हेतु वह मानवता से परिपूर्ण विचारों का महान् आस्था और लगन के साथ पालन करता है और यह समझ जाता है कि इन समस्त मानवीय संघर्षो का परिणाम मन और विभिन्न ज्ञानेन्द्रियों तथा कर्मेन्द्रियों पर पूर्ण नियन्त्रण के साथ-साथ प्रकृति के मूल तत्वों पर पूर्ण नियन्त्रण करना है।

इस प्रयोजन में सफलता प्राप्ति उपरान्त मानव इस नश्वर जीवन और अस्तित्व की समस्त बेड़ियों से परे हो जाता है। उसके आनन्द की सीमा नहीं होती । उसकी सम्पत्ति की कोई सीमा नहीं होती। वह सभी पापों से परे हो जाता है और आत्मोत्कर्ष यानि यश-कीर्ति के शिखर को प्राप्त कर लेता है। इस तरह शरीर को सचखंड बना, वह सच्चाई से इतना भर लेता है कि उसकी यश-कीर्ति की सुगंधि देवलोक की सुगंधि को भी मात कर देती है। तात्पर्य यह है कि समस्त

शारीरिक व्याधियों से मुक्त हो उसके मन को अखंड शांति प्राप्त होती है।

6. हमें यह भी समझ में आया कि जीवात्मा पंच इन्द्रियों (दृष्टि, श्रव्य, घ्राण, वाक् तथा स्पर्श) तथा छठी इन्द्रिय मन के द्वारा सभी क्रियाओं को ग्राह्य और सम्पन्न करता है। इसी तरह जीवात्मा स्वयं को ज्ञानेन्द्रियों तथा मन द्वारा प्रत्यक्ष रूप से अभिव्यक्त करता है। जान लो कि इन छहों इन्द्रियों का मिलन-स्थल है हृदय।

याद रखो जब तक पूर्ण तथा शुद्ध भाव द्वारा ये इन्द्रियाँ पूर्ण रूपेण शुद्ध और तीक्ष्ण नहीं होंगी, वे जीव को कुमार्ग पर तथा उसके कर्मों को अवांछित परिणामों की ओर ले जाएंगी। इसी कारण हमें अपनी इन्द्रियों और मन को वश में रखते हुए शुद्ध तथा शक्तिशाली बनाये रखने का यत्न करना चाहिए और उन्हें विवेकशीलता से पूर्ण ज्ञान तथा शुद्ध भावनाओं द्वारा निर्देशित करना चाहिए, ताकि हृदय में सत्य सदा प्रकाशित रहे व सर्वत्र शान्ति बनी रहे। इस तरह व्यक्ति के साथ-साथ परिवार व समाज की सामूहिक निर्विघ्न प्रगति हो।

सजनों व्यक्तिगत, पारिवारिक व सामाजिक रूप से उन्नति कर आनन्द को प्राप्त करने की यही एकमात्र सर्वोत्तम व अचूक युक्ति है। इसी का अनुशीलन करने से न केवल जीवन यात्रा सफल और सुगम हो सकती है अपितु अपने जीवन लक्ष्य को भी सहजता से प्राप्त कर सकते हो।

सजनो वेद विदित इस वाणी से ज्ञात होता है कि मन के

द्वारा जीव स्वयं को व्यक्त करता है तथा मन ही ज्ञानेन्द्रियों तथा कर्मेन्द्रियों द्वारा सभी कार्यों को सम्पन्न करता है। मन अकेला ही लोगों को पास-पास लाने तथा उनमें मित्रता स्थापित करने में सक्षम है तथा यह ही उनकी मित्रता तोड़ने वाला भी है।

अतः इसे वश में रखना आवश्यक है। याद रखो जब तक मन को बुद्धि के अधिकार में रख, मूलभूत स्वच्छ विचारों द्वारा निर्दोष नहीं कर लिया जाता, यह मनुष्य को कुरस्ते पर ले जाता है। वह मन, बुद्धि के निर्देशन के बिना कर्मों को उचित प्रकार से नहीं कर सकता। अगर वह मन, बुद्धि द्वारा निर्देशित होता है तो अत्यन्त शक्तिशाली हो जाता है और योग्य बन जाता है। इस प्रकार मात्र मन के द्वारा ही इस लोक और परलोक में उपलब्धियाँ मिलती है।

इसलिए इस मन को, निर्मल विवेक बुद्धि द्वारा निर्देशित करने का यत्न करना है ताकि विवेकबुद्धि द्वारा मन पूर्णतया नियन्त्रण में रहे और मनुष्य समस्त कर्मो को उचित प्रकार से करते हुए अपने घर परमधाम जाने वाले निर्विघ्न निष्काम रास्ते पर बना रहे।

अंततः सजनों संक्षेपतः याद रखो कि परमात्मा जीव को जगत में भेजते समय उसे मन रूपी जहाज में बैठा देते हैं और भवसागर से पार होने के लिए बुद्धि रूपी पतवार प्रदान करते हैं। तदुपरान्त उसे समझाते हैं कि इस भवसागर को सरलता से पार करने के लिए 'विचार ईश्वर आप नूं मान' यानि ब्रह्मभाव पर स्थिर रहते हुए अपनी बुद्धि रूपी पतवार को एकाग्रता से सम अवस्था में बनाए रखना ताकि किसी भी

अविचार वश सांसारिक कारणों से प्रभावित हो मन रूपी जहाज भवसागर में डोले नहीं।

जानो कि यह जगत कारण जगत के नाम से जाना जाता है। जगत के विभिन्न कारणों में उलझकर ही जीव अपने जीवन-लक्ष्य को प्राप्त नहीं कर पाता लेकिन बुद्धि ही वह पतवार है जो मन रूपी जहाज को उचित गन्तव्य तक ले कर जाती है। इसलिए हमें समभाव-समदृष्टि के चलन अनुसार समबुद्धि हो 'ईश्वर है अपना आप प्रकाश। ईश्वर है जे अजपा जाप' इस सत्य पर आजीवन दृढ़ता से बने रहना है। ताकि हम एकरसता से सभी के साथ समदर्शिता अनुसार व्यवहार करने के योग्य बन निर्भय, निर्वैर, निर्विकार, निर्दोष व नित्य यथार्थ स्वरूप में बने रहें व परमपद को प्राप्त करें।

सजनों अगली कक्षाओं में जीव मन रूपी जहाज में बैठकर संसार सागर में उतरेगा। अतः संसार सागर यानि यह जगत क्या है? जीव को इस जगत में विचरते समय क्या सावधानी बरतनी चाहिए? जीव किस तरह बुद्धि रूपी पतवार को कुशलता से थामे रख निर्विकार बने रह भव-सागर पार कर सकता है? यह सब विस्तार से जानेंगे। अंततः सजनों सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में वर्णित इस सत्य को सदा याद रखोः-

जेहड़ा सजन विचार पकडे एक,
उस सजन दी बुद्धि हो गई विवेक।
सत हो गया बोलचाल,
एकता हो गई उस सजन दी कमाल ।।

फिर ओहदी उच्च बुद्धि ते उच्च ख्याल,
उच्च बुद्धि उच्च ख्याल, यह भी मत भूलो कि

समभाव समदृष्टि जैदी बुद्धि लवे पहचान जी,
ओ बुद्धि लवे पहचान जी।
ओथे जन्म मरण रोग सोग कहां,
खुशी ग़मी गरीबी अमीरी कहाँ।।
अमीरों का है ओ अमीर ओ मेरे साजना,
बेअन्त बिन सूरजों जगे ओ महान ओजी ओजी।।

इसीलिए

सबसे प्रार्थना है कि समभाव अपनाओ और अपने असलियत स्वरूप को पाओ व रोशन नाम कहाओ।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरान्त सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियन्त्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 13 सितम्बर 2015 का सबक

जगत भाग-1

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्मा-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

श्री महाबीर जी के मुख के शब्द

दोहा:- श्री राम जी दी मूरती वस्से,
श्री राम वस्से हर कोल।
मूरती कोई विरला अन्दर लवे टोल।।

साजन जी जल्दी जाना है दरबार।
ओ हकलाँ मारन तरह तरह दियां,
श्री राम जी रहे ने पुकार।।

श्री रामचन्द्र जी कह रहे हैं

मूरती लगे प्यारी, साजन तेरी मूरती,
युग युग जगदी आवे साजन तेरी मूरती।
कई कई नाम धराये साजन तेरी मूरती।।

साजन जी आये करूँ असां वारना,
क्या क्या असां वारूं।
कई नाम ते रहे हैं चितार, साजन तेरी मूरती।।

आद् मूरती जुगादि मूरती,
सारी विश्व विच सुहावे साजन तेरी मूरती।
मूरती ओ जुग जुगन्तर, मूरती ओ देश देशान्तर।।

ओ हर अन्दर हर्षाये, साजन तेरी मूरती।
मूरती है ओ मन मन्दिर, ओ है मकान अन्दर।

निर्लेप जगत ते राहवे, साजन तेरी मूरती।
त्रेते विच श्री राम पधारे, द्वापर आये कृष्ण प्यारे।

कलुकाल विच आये दस पातशाह सारे।
आये दस पातशाह सारे, साजन तेरी मूरती।

ज्यों ज्यों भीड़ पड़ी जग अन्दर,
त्यों त्यों बोझ उतारे, साजन तेरी मूरती।
ज्यों विपत्ति पड़ी जग अन्दर,
त्यों त्यों कष्ट निवारे, साजन तेरी मूरती।।

सजनों जगत को समझने के लिए इस कीर्तन के अर्थ को समझना आवश्यक है। इस कीर्तन के भावार्थ से यह स्पष्ट

होता है कि श्री साजन परमेश्वर ही इस ब्रह्माण्ड का आधार हैं। उन्हीं की ही महान शक्ति ब्रह्म सत्ता के रूप में सब मूर्त्तों में समभाव से सजती है। इसलिए इस ब्रह्माण्ड में विचरते हुए सदा उन्हीं के विचारों पर बने रह परस्पर सजनता का आचार-व्यवहार करना सुनिश्चित करो। इस प्रकार इस जगत में समदर्शिता अनुरूप, सबके साथ अपने कर्त्तव्यों का सक्षमता से पालन करते हुए संकल्प रहित बने रहो व आनन्दमय जीवन व्यतीत करना सीखो। इसी में ही अपना व सबका कल्याण मानो।

अतः सजनों उस परमेश्वर को ही अपने जीवन का एकमात्र आधार समझ, उसके प्रति समर्पित हो जाने में ही, समझदारी समझो क्योंकि इसके विपरीत अन्य संसारियों को अपना आधार मान कर, उनकी अधीनता स्वीकारते हुए जीवन जीना, मूर्खता यानि नादानी कहलाता है। यह निज स्वतन्त्रता खो दूसरों के आधिपत्य के प्रभाव से कर्म करते हुए, दुःखों को प्राप्त होने व जगत में भटकने की बात है। सो अगर हकीकत में जगत में विचरते हुए मौत के भय से स्वतन्त्र बने रहना चाहते हो तो श्री साजन जी के संग बने रहना सुनिश्चित करो। घबराओ नहीं, यह कोई कठिन कार्य नहीं है।

इसका सीधा-सादा, सरल तरीका है कि सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में जो विचार विदित हैं, उन विचारों अनुकूल चलन अपना लो। यह संकल्प कुसंगी से बचे रह मन की संकल्प रहित अवस्था में बने रहने की बात है। याद रखो यदि हम इतनी सी बात यादगीरी में रख तद्नुकूल चलन

अपनाने में सक्षम नहीं हो सकते तो हम अपना व अपने परिवार का उद्धार नहीं कर सकते। यह स्वयमेव ही विनाश का रास्ता अपनाने की बात है। इस बात को स्मरण रखते हुए अब बताओ कि किस रास्ते पर अग्रसर होना चाहते हो। उद्धार के या विनाश के ?

उद्धार के।

तो फिर अब ध्यान से सुनो कि जब कोई जीव, जगत में आने का निश्चय ले लेता है तो उसके लिए, जगत व उसकी गतिविधियों से, पहले से ही परिचित होना, आवश्यक होता है। याद रखो ऐसा सुनिश्चित करने पर ही, उस जीव की इस मायावी जगत की यात्रा सफल होती है और वह निष्काम व अकर्त्ता भाव से, सभी सांसारिक कर्त्तव्य निष्ठा से निभाते हुए, निष्कलंक, मृत्तलोक से अपने सच्चे घर, लौट पाता है।

हम सब भी अपने जीवन उपरान्त, इसी परिणाम को प्राप्त हो, उसके लिए हमें याद रखना होगा कि, जीव ही जगत का आधार है, जगत जीव का आधार नहीं। अतः जगत को अपना आधार मानकर उसके अधिकार में न जाओ, अपितु अपने स्वरूप में बने रहते हुए, जगत को अपने अधिकार में रख, उसमें विचरना सुनिश्चित करो। याद रखो यही सत्यज्ञान को सर्वहित हेतु यथा प्रयोग करने की युक्ति है। मानो कि इस सत्यज्ञान से विपरीत विचरना बहुत बड़ी भूल है। ऐसी भूल करने वाला ही अज्ञानता में फँस अपने जीवन का खेल बिगाड़ बैठता है। इस सन्दर्भ में यह भी याद रखो

कि जब तक जीव जगत में समाहित रहता है, तब तक ही जगत का रूप, रंग प्रकाशित रहता है।

आओ, अब इसी सत्य विचारधारा पर सुदृढ़ बने रहने हेतु, समभाव-समदृष्टि के सबक अनुसार, इस मायावी जगत के रूप, रंग के आकर्षक प्रभावों को समझें व अपनी विवेक बुद्धि रूपा जीवन नैय्या की पतवार को, योग्यता से थामे रख, उसके प्रयोग द्वारा, अपने मन रूपी जहाज का, युक्तिसंगत व संकल्प रहित संचालन करते हुए, निर्विघ्न संसार सागर से पार हो जाए। इस तरह अपने सच्चे घर परमधाम पहुँच पुनः विश्राम को प्राप्त हो। इस परिप्रेक्ष्य में अत्यन्त सतर्क रहना क्योंकि मन में लेश मात्र संकल्प यानि फुरने का उपजना, आपकी जीवन नैय्या को डोलायमान कर आपको पथभ्रष्ट कर सकता है। अतः ध्यान स्थिर हो विवेकबुद्धि की शक्ति का समुचित प्रयोग करते हुए, इस संसार सागर से पार उतरना होगा। इस हेतु जो अभी बताया जाएगा, उस ज्ञान द्वारा, जगत की मर्म को ध्यान से समझना ताकि मिथ्या जगत के आडम्बर, हमारी बुद्धि को उलझा व भ्रमित कर जगत के सत्यज्ञान से वंचित रख, अज्ञान धारणा द्वारा हमें अपने जाल में फँसा, जन्म-मरण के चक्रव्यूह में न धकेल दें। अब बताओ कि जीवन हारना चाहते हो या विजयी होना चाहते हो?

विजयी।

अगर विजयी होना चाहते हो तो जो अब बताया जाएगा उसे ध्यान से सुन-समझ, वैसा ही धारण कर, जगत में बेख़ौफा-बेख़तरा, निषंग विचरना सुनिश्चित करना।

सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार-

समझन विच नहीं आंदी ओ महाराज जी,
सारा जगत है रूप तुम्हारा।
जगत विच रैहंदियां होया,
ठीक जगत तों है ओ न्यारा।।

प्रश्न- जगत से क्या तात्पर्य है?

उत्तर- विश्व, दुनियां या संसार के रूप में चेतन सृष्टि को जगत कहते हैं। यह नित्य, सत्य और परिवर्तनशील यानि गतिशील है।

प्रश्न- जगत का कारण क्या है?

उत्तर- ब्रह्म ही जगत का कारण है।

जानो कि जिस प्रकार मकड़ी, जाले का निमित्त और उपादान दोनों कारण है, ठीक उसी प्रकार ब्रह्म इस जगत् का निमित्त (ऐसा कारण जिसकी सहायता या कर्त्तापन से कोई वस्तु बने) व उपादान (वह कारण जो स्वयं कार्य रूप में परिणत हो जाए जैसे घड़े का निमित्त कारण कुम्हार व उपादान कारण मिट्टी है) कारण है। इस प्रकार यह जगत ब्रह्म का परिणाम या विकार नहीं अपितु विवर्त यानि भ्रम व रूपांतरण है। यहाँ स्पष्ट कर दें कि किसी वस्तु का कुछ और हो जाना विकार या परिणाम कहलाता है जबकि उसका और कुछ प्रतीत होना विवर्त कहलाता है। उदाहरणस्वरूप दूध का दही हो जाना विकार है, लेकिन रस्सी का साँप प्रतीत होना विवर्त है।

इससे स्पष्ट होता है कि यह जगत् ब्रह्म का विवर्त है यानि

मिथ्या या भ्रम रूप है। वास्तव में ब्रह्म के अतिरिक्त और कुछ सत्य नहीं है और जो कुछ दिखाई पड़ता है उसकी पारमार्थिक (यथार्थ) सत्ता नहीं है। चैतन्य आत्मवस्तु के अतिरिक्त और किसी वस्तु की सत्ता अन्य किसी भी रूप में सिद्ध नहीं हो सकती।

प्रश्न- जगत प्रभु कौन हैं?

उत्तर- विश्व के स्वामी यानि परमेश्वर को ही जगत प्रभु कहते हैं। वे ही जगतकारण, जगताधार, जगतकर्त्ता, जगतात्मा, जगतपति, जगतप्रसिद्ध जगतपिता परमात्मा हैं जो जगत को नियमानुकूल रखने हेतु उस पर नियन्त्रण रखते हैं?

प्रश्न- जगत के रचनाकार, पालनहार और संहारकर्त्ता क्रमशः कौन हैं?

उत्तर- ब्रह्मा, विष्णु और शिव।

प्रश्न- जगत को किसने धारण किया हुआ है?

उत्तर- पृथ्वी ने।

प्रश्न- जीव जगत के अंतर्गत क्या आता है?

उत्तर- इह लोक यानि चौरासी लाख योनियाँ।

प्रश्न- इस जगत का प्राणाधार कौन है?

उत्तर- वायु।

प्रश्न- जगत का साक्षी कौन है?

उत्तर-   परमात्मा सूर्य रूप में जगत के साक्षी हैं।

प्रश्न-   जगत का गुरु कौन है?

उत्तर- जगत का गुरु शब्द रूप में परमात्मा है। वह ही आदि मूल है और केवल वह ही श्रद्धा के काबिल है। याद रखो जो शब्द जगत का गुरु है वही हमारा यानि प्रत्येक जीव का भी गुरु है।

प्रश्न- जगत का अंत स्वरूप क्या है?

उत्तर- जगत का अंत स्वरूप भी परमात्मा हैं क्योंकि वे ही काल, मृत्यु, यमराज और शिव रूप में जगत का नाश करने वाले हैं।

प्रश्न- जगत की धारणा का कारण क्या होता है?

उत्तर- मन-मस्तिष्क में विचार उत्पन्न होना, भाव का उदय होना या बात का उमड़ना ही जगत की धारणा का कारण होता है। याद रखो यह धारणा विशुद्ध यानि वेद-विदित सत्य अनुरूप होनी चाहिए।

प्रश्न- जिस मनुष्य के हृदय में जगत धारणा की क्रिया के दौरान ईश्वर का विराट् रूप प्रगट हो जाता है, वह क्या कहलाता है?

उत्तर- धन्य आत्मा।

प्रश्न- जगत की मिथ्या धारणा से एक मानव पर क्या प्रभाव पड़ता है?

उत्तर- जगत की मिथ्या धारणा के प्रभाव से मानव का मन अधीर और चित्त अस्थिर हो जाता है जो बुद्धि की मलिनता का कारण बनता है। परिणामस्वरूप निरोगी रहना कठिन हो जाता है। यही उसकी मानसिक व शारीरिक अस्वस्थता का कारण होता है।

प्रश्न- जगत को दुनियां भी कहते हैं, दुनियां शब्द से क्या तात्पर्य है?

उत्तर- जगत के प्रपंच या जाल को दुनियां कहते हैं।

प्रश्न- दुनियां की हवा किस को लगती है?

उत्तर- सांसारिक अनुभव या ज्ञान प्राप्त कर, छल-कपट या दुर्व्यसनों में फँसने वाले को दुनियां की हवा लगती है।

प्रश्न- दुनियादारी में पड़ा हुआ इंसान क्या करता है?

उत्तर- दुनियादारी में पड़ा हुआ इंसान कई ढंग रचकर अपना स्वार्थ साधता है और लल्लो-चप्पो लगाकर सबके साथ दिखावटी यानि बनावटी व्यवहार करता है।

प्रश्न- जगत में विचरण करते समय एक व्यक्ति को क्या सावधानी रखनी चाहिए?

उत्तर- एक व्यक्ति को जग निष्ठा या संसार में आसक्ति नहीं रखनी चाहिए यानि माया रूपी संसार की सुन्दरता के प्रति मोहित न होकर अपने ख़्याल को सदा अति सुन्दर परमात्मा की तरफ रखना चाहिए।

प्रश्न- जो जगत में विचरण करते समय यह सावधानी लेने

में चूक जाता है उसको क्या परिणाम भोगना पड़ता है?

उत्तर- वह भौतिक सुखों यानि सांसारिक बंधनों में फँस, संसारचक्र यानि नाना प्रकार की योनियों में भ्रमण करता हुआ जन्म-मरण के चक्रव्यूह का शिकार हो जाता है। तात्पर्य यह है कि उसे भोग यानि सुख-लिप्सा के कारण बार-बार संसार में आवागमन का दु:ख भोगना पड़ता है।

प्रश्न- संसार भी जगत का ही अन्य नाम है, इसका क्या अर्थ है?

उत्तर- संसार अर्थात् लौकिक निस्सार जगत। संसार का अर्थ है जो निरंतर एक अवस्था से दूसरी अवस्था में जाता रहे। इस संसार मे बार-बार जन्म लेने की परम्परा है। इसीलिए इसे मृतलोक, मायाजाल, भवचक्र, आवागमन व परिवर्तनशील सृष्टि भी कहते हैं।

प्रश्न- संसार बंधन क्या है?

उत्तर- जीवन का मोहपाश। इस पाश में फँसने वाले को सांसारिक दु:खों एवं कष्टों की प्राप्ति होती है।

प्रश्न- संसार बंधन में कौन फँसता है?

उत्तर- वही संसारी जो माया का आधिपत्य स्वीकारने की नादानी कर बैठता है और संसार का संग कर सांसारिकता यानि संसारी बातों व धंधों में जकड़ता है। उसे ही विषय विकारों में फँसा हुआ, जगत जंजाल में घिरा हुआ या भवचक्र में बँधा हुआ जीव कहते हैं। ऐसा जीव ही आजीवन संसार सागर में गोते खाता है।

प्रश्न- संसार सागर में गोते खाने से कौन बचा रह सकता है?

उत्तर- जिसका मन-मन्दिर प्रकाशित यानि संकल्प रहित रहता है।

प्रश्न- किस व्यक्ति का मन-मन्दिर प्रकाशित रहता है?

उत्तर- जो संसार में विचरते हुए अपने साथ व किसी के साथ घटित हुई या हो रही कहानी में दिलचस्पी नहीं रखता उसी का मन-मन्दिर प्रकाशित रहता है।

प्रश्न- किसका मन इस जगत में विचरते हुए भी संकल्प रहित बना रह पाता है?

उत्तर- जो धर्मयुक्त, कामना से रहित निष्काम रास्ता स्वयं तो अपनाता ही है, साथ ही कुरस्ते पड़े हुए अन्य सजनों को भी रास्ते पर ला परोपकारी नाम कहाता है। याद रखो सजन शब्द बुलाने से बाकी कोई संकल्प नहीं रहता। परिणामस्वरूप बुद्धि सम अवस्था में सधी रह मन को वश में रखने के सक्षम होती है। इस प्रकार मन शान्त व चित्त स्थिर अपनी चैतन्य अवस्था में बने रह, निष्काम भाव से इस जगत के समस्त क्रियाकलाप करते हैं।

प्रश्न- संकल्प पर पूरी तरह से फ़तह पा जाने पर क्या नतीजा निकलेगा?

उत्तर- एक निगाह एक दृष्टि हो दिव्य दृष्टि हो जाएगी और हम एक आत्मा होकर, परमात्मा से मेल खाकर, ज्योति स्वरूप जो अपना आप है उसकी पहचान कर सकेंगे और रौशन हो जाएंगे। इस तरह मौत का भय समाप्त हो जाएगा

और आवागमन का चक्कर मिट जाएगा। यही सतवस्तु का चलन है।

प्रश्न- सांसारिक बंधनों से मुक्ति दिलाने वाला कौन है?

उत्तर- भव मोचन ईश्वर।

प्रश्न- यह मुक्ति कौन प्राप्त कर सकता है?

उत्तर- वह विरला पराक्रमी संसार सारथि जो इस संसार को दुःखमय समझता है और उसमें उलझता नहीं, वह ही इस संसार रूपी सागर को पार कर, मोक्ष प्राप्त कर सकता है।

अंततः सजनों जान लो कि आत्मा ज्योति स्वरूप चिदानन्दरूप नित्य, निस्पृह और निर्गुण होता हुआ भी प्रकृति से युक्त होने से सगुण होकर जगत को उत्पन्न करता है। इस प्रकार प्रकृति स्वयं जड़ होते हुए भी चैतन्य रूप अव्यय परमात्मा के आश्रय से जगत का सृजन करती है अर्थात प्रकृति पुरुष इन दोनों के योग से सृष्टि कार्य सम्पन्न होता है। तभी तो कहा गया है कि नाम और रूप की उत्पत्ति का नाम जगत/सृष्टि/संसार/दुनियां है, परन्तु नाम और रूप, ब्रह्म के अवयव (अंग) नहीं। यह ही सत्य ज्ञान है इसके अतिरिक्त द्वैत या नानात्व ज्ञान अज्ञान है, जिसके प्रभाववश बुद्धि भ्रमित हो जाती है। अतः संसारी ज्ञान को मिथ्या ज्ञान समझकर यह मान लेना कि इस ज्ञान द्वारा मृतलोक को सम्पूर्णतया सत्यता से समझना असंभव है। इसलिए आत्मिक ज्ञान द्वारा इसके सार को पाने के उपरांत आवश्यकता अनुसार इसका बोध व प्रयोग तो करो परन्तु इसको धारण कर ख़्याल में कदापि न उतारो। इस संदर्भ में

सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में वर्णित इस तथ्य को सदा याद रखो कि :-

संसार है ओ आत्मा, परमात्मा आधार है।
निराकार आकार ना कोई, है ओ अपरम्पार है।

अगर हम कुदरती ग्रन्थ में वर्णित इस तथ्य के अनुसार इस संसार में विचरें तो हमारे लिए आत्मज्ञान प्राप्त करना सहज हो सकता है। फिर हम उसी आत्मज्ञान को अपने विचार, आचार व व्यवहार में सत्यता से उतार, न केवल उस नित्य ब्रह्म और इस नश्वर जगत की रमज़ जान सकते हैं अपितु स्वार्थ और परमार्थ के प्रति अपना फ़र्ज़ अदा प्रसन्नचित्तता से निभाने के साथ-साथ, सर्व-सर्व में निज सत्-चित-आनन्द स्वरूप का दर्शन भी कर सकते हैं। तभी तो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में श्री साजन जी कह रहे हैं:-

श्री साजन जी के मुख के शब्द,
अपने आप पर कह रहे हैं

रघुवर जी है नाम मेरा,
हर जगह मैं उजियाला हां।
तन मन अर्पण करे जो मेरे,
उसदा मैं रखवाला हां।।

हर जगह प्रकाश मेरा,
ओ कोना कोना डाली डाली हर वस्तु विच वास मेरा।
जेहड़ा हर स्वास नाम जपे मेरा,
ओन्हुं आनन्द दिखावन वाला हां।।

समझ लवो चानणा है जेहड़ा,
हर जगह प्रकाश मेरा।
जेहड़ा निष्काम रस्ते ते आवे,
ओहदे अंग संग राहवन वाला हां।।

रोशनी चानणा है सब जग अन्दर,
मेरा निवास मन मन्दिर अन्दर।
जेहड़ा मेरी गोदी दे विच आवे,
ओन्हुं साज सजावन वाला हां।।

सोहणे चरणां दी ऐनक लावां मैं,
बिन सूरजों ओ सड़क चमके,
अपने प्यारे नू दिखावां मैं
ओ मेरा मैं उसदा हो गया,
ज्योति विच जोत मिलावन वाला हां।।

ओ चमके मैं चमकां उस नाल,
चमकां कुल जहान उत्ते।
रोशनी मेरी सब जग अन्दर,
रोशनी सारे ब्रह्माण्ड उत्ते।

रघुवर जी है नाम मेरा,
हर जगह मैं उजियाला हां।

इस कीर्तन से स्पष्ट होता है कि सजनों सूरजों के सूरज श्री साजन जी का संग प्राप्त करने के लिए तन-मन अर्पण करना है। वह मायापति, सबको सब कुछ देने वाले, जगत हितकारी, किसी से धन नहीं माँगते। वह तो मात्र तन और मन को समर्पित करने के लिए इसलिए कह रहे हैं ताकि ये दोनों ही सदा पूर्णरूपेण स्वस्थ हो सदा सम अवस्था में बने

रहें। याद रखो यदि तन-मन अर्पित कर दिया तो सन्तोष और धैर्य प्राप्त हो जाएगा अर्थात आत्मतुष्टि प्राप्त हो जाएगी व जीवन की हर परिस्थिति का धीरता से सामना करने में सक्षम हो जाओगे। तभी तो सच्चाई-धर्म के रास्ते पर डटे रह, निष्कामता से परोपकार कमा सकोगे। इसलिए निष्काम रास्ते को ही विजय पथ मानो व उस पर निरन्तर आगे बढ़ते हुए अपने सच्चे घर की ओर प्रस्थान करो और अपना जीवन लक्ष्य प्राप्त करो।

अतः इस सक्षमता को प्राप्त करने हेतु सजनों निर्भयता से उस कुदरत के वाली के आगे, तन-मन अर्पण करो और नित्य भाव पर स्थिर बने रहने के काबिल बनो। तात्पर्य यह है कि जो तन-मन सदा बदलता रहता है व नश्वर है, उसे ईश्वर के निमित्त समर्पित कर नित्यता को प्राप्त कर अमर नाम कहाओ। समझो कि जिस मन में चैतन्य स्वरूप ईश्वर सुशोभित हैं व जिस चेतन शक्ति द्वारा यह तन क्रियाशील है, यदि उसकी सार को पा लिया तो सदा के लिए उस नित्य चैतन्य का संग प्राप्त हो जाएगा। परिणामस्वरूप मन शांत, चित्त एकाग्र व बुद्धि विवेकशील होने के कारण अहं का अभाव हो जाएगा। इस तरह सत्य-असत्य की परख कर ताकतवर हो जाओगे यानि परिस्थितियों के वशीभूत हो कभी भी कमज़ोर नहीं पड़ोगे। इस सन्दर्भ में यह भी याद रखो कि तन तो वैसे भी आयु व्यतीत होने के साथ मिटना ही है। मन भी यदि समभाव में स्थित हो जाए यानि नित्यता के भाव में स्थिर हो जाए तो इसके पंजे से भी छूटना कोई कठिन कार्य नहीं रहेगा। इस तरह तन-मन से स्वतन्त्र हो जीव अपने स्थान पर पहुँच विश्राम को पाएगा।

सजनों स्पष्ट है कि परमार्थ के रास्ते पर चलना कोई मुश्किल नहीं है। परन्तु परमार्थ के रास्ते पर चलने वालों के लिए मुश्किल खड़े करने वाले इस कलियुग में चारों तरफ हैं। उनका घेरा, उनका चक्रव्यूह बहुत मज़बूत है। उस घेरे को, चक्रव्यूह को तोड़ कर पुनः अपने स्थान को पाने की युक्ति सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में विदित है। अतः उस युक्ति को प्राप्त कर उसके प्रयोग द्वारा, इस घेरे को तोड़ने की हिम्मत दिखाओ। घबराओ नहीं, सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में विदित, विचारों को पढ़-समझकर व उन्हें तद्नुसार व्यवहार में लाकर, इस चक्रव्यूह से स्वतन्त्र हो सकते हो। परन्तु उसके लिए पहले तन-मन यानि मिथ्या अहं को अर्पण करने की कुर्बानी दिखानी होगी।

इस सन्दर्भ में यह भी जान लो कि जो यह कुर्बानी दिखा पाता है, उसे ही योग्य पात्र समझ कर ईश्वर 'सतवस्तु' जो अनमोल है, वह प्रदान कर देते हैं। अतः इस महान उपलब्धि की प्राप्ति हेतु सजनों निःसंकोच तत्पर हो जाओ और जगत में रहते हुए जीवन मुक्त होने की सामर्थ्य दिखाओ।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरांत सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियन्त्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 20 सितम्बर 2015 का सबक

जगत भाग-2

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्मा-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

जैसा कि सबको पता ही है कि गत सप्ताह से 'जगत' के विषय में बातचीत चल रही है। जगत अपने आप में अत्यन्त रहस्यमय विषय है। यह जान लो सजनों कि जब तक हम आत्मबोध द्वारा जगत के रहस्यों को प्रत्यक्ष रूप से देखने में सक्षम नहीं हो जाते, तब तक उनको समझना नामुमकिन होता है। यही तो मन की जगत के प्रति अज्ञान अवस्था होती है जो अंतःकरण की अशुद्धता का प्रतीक होती है। इसी के

प्रभाव से ही बुद्धि भ्रमित व चित्त अस्थिर रहता है। फलस्वरूप इन्सान सत्य-असत्य की पहचान खो, मिथ्या अहंकार को प्राप्त होता है और उसी के प्रभाव अनुसार ही कुकर्म-अधर्म करता हुआ जन्म-जन्मान्तरों तक उनके कर्मफलों को भोगता रहता है। हमारे किसी के साथ ऐसा न हो इसलिए इस विषय को अफुर होकर गहराई से समझने की आवश्यकता है। इस हेतु अपनी मानसिकता को सुदृढ़ व शक्तिशाली बनाए रख, स्थिरता से साधे रखने की ज़रूरत है क्योंकि लेश मात्र फुरना भी ख़्याल के जगत में भटकने का कारण बन सकता है और हमें अज्ञान में उलझा, गुमराह कर जगत की अधीनता स्वीकारने के लिए बाध्य कर सकता है।

अतः सजनों जगत का मर्म समझने हेतु सचेत होकर हिम्मत से काम लो और निष्काम रास्ते में आने वाली कठिनाइयों से मत डरो। याद रखो जो साहसी इसके प्रति हिम्मत जुटा पाता है वह विरला बहादुर ही आत्मिकज्ञान प्राप्त कर युक्तिसंगत जगत के इस निराले खेल को खेल पाता है। इसके विपरीत जो आत्मिक ज्ञान के प्रति जागरूक नहीं रह पाता या समर्पित भाव से अपना सर्वस्व अर्पण नहीं कर पाता वो जगत को कदापि नहीं समझ पाता और सांसारिकता में उलझ आजीवन रोते-झुखते हुए, ग़ुलामों जैसा, परेशानियों से भरा हुआ जीवन, व्यतीत करता है।

अतः सावधान हो जाओ और इस जगत के निराले खेल को समझो व कुशलता से खेलते हुए, गृहस्थाश्रम सतयुग बनाने व परमपद पाना सुनिश्चित करने हेतु, इस खेल की रमज़ को समझते हुए, सफलता प्राप्त करने के योग्य बनो । इस

हेतु सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार सजनों ध्यान से सुनोः-

महाबीर जी के मुख के शब्द

ओ मूर्ति विशाल हर अन्दर ओ पई वसदी।
ओ मूर्ति विशाल मन मन्दिर ओ पई दिसदी।।

शंख चक्र गदा पद्म ओ है पद्मधारी।
ओ है पद्मधारी, ओ है पद्मधारी।।

रघुवंशमणि पये लोचदे सारे हिन पये सोचदे।
आप दी प्रिय है ज़बान कैसे पये ओ शोभदे।।

शंख चक्र गदा पद्म ओ है पद्मधारी।
ओ है पद्मधारी, ओ है पद्मधारी।।

रहमत रमता है, रहीमत रमैया रमने वाला है।
रोशन है ओ सारे जगत ते, रोशनी देने वाला है।।

शंख चक्र गदा पद्म ओ है पद्मधारी।
ओ है पद्मधारी, ओ है पद्मधारी।।

ओ३म् चमके ओ३म् दा मन्दिर विच चमके ओ३म् दा सांई है।
सर्वव्यापी है नाम तेरा, सर्व ही जगमाही है।।

शंख चक्र गदा पद्म ओ है पद्मधारी।
ओ है पद्मधारी, ओ है पद्मधारी।।

ओ३म् विच विषेश है, ओ३म् तो निर्लेप है।
हर अन्दर ओ चमत्कार है सब सनां दा ओ यार है।।

शंख चक्र गदा पद्म ओ है पद्मधारी।
ओ है पद्मधारी, ओ है पद्मधारी।।

ओ३म् दा ही मन्त्र है ओ३म् ही स्वतन्त्र है।
ओ३म् दे हिन चार वेद, छः शास्त्रां दा प्रकाश है।।

ओ३म् दे हिन चार वेद, छः शास्त्रां दा प्रकाश है।
ओ३म् तो निर्लेप है उसे दा जप जाप है।।

शंख चक्र गदा पद्म, ओ है पद्मधारी।
ओ है पद्मधारी, ओ है पद्मधारी।।

श्री साजन जी कहते हैं

चरण तुआडे महाबीर जी जेहड़ा देखे ठरदा ओही ए।
चरण सबदे डिट्ठे बहुतेरे, इन्हां चरणां जिहा न कोई ए।।

अर्थात् जगत यानि संसार सर्वव्यापक भगवान का अचरज खेल है। सम्पूर्ण जगत में यानि जल, थल, पवन, अग्नि, आकाश, पाताल, सूरज, चाँद, लोक-परलोक, जड़-चेतन, चारों दिशाओं और सभी जीव-जन्तुओं में, आद् ज्योति स्वरूप, चैतन्य ईश्वर का ही चमकारा है। जान लो कि जितने भी खेल इस जगत में रच रहे हैं या रचने वाले हैं वे सब उसी के ही रचाए हुए हैं। सारे जगत में उसकी ही हुकूमत है और वही सकल कला भरपूर जगत का एकमात्र शासक, राजाओं का राजा, युग-युगन्तर स्वतन्त्र, समरूप से

हुकूमत चलाता आ रहा है। याद रखो इस जगत में जो इंसान उस की हुकूमत के मन्त्र अनुसार 'विचार ईश्वर है अपना आप' पर स्वतन्त्रता से मज़बूत बना रहता है वह रूप, रंग, रेखा रहित निज आत्मतत्व को जान सकता है व आजीवन उसी पर सम अवस्था से बना रह सकता है।

समझ लो कि परमेश्वर की हुकूमत को पहचानने वाला ब्रह्मज्ञानी ही जानता है कि अनंत, बेअन्त ईश्वर को चाहे इस जगत में कई नामों से जाना जाता है पर वह नाम व रूप-रंग रहित सर्वव्यापक भगवान एक ही है जो ब्रह्म सत्ता के रूप में सर्वत्र प्रकाशित व जापत है। अतः सजनों इस सत्य को स्वीकारो और सदा उसी के संग बने रह आत्मिक ज्ञान प्राप्त करो। इस प्रकार एक निगाह एक दृष्टि, कर एक दर्शन हो जाओ। याद रखो आत्मज्ञानी को ही इस मिथ्या जगत की हर शै में उस आद् ईश्वर की सत्ता के एकरस भासित होने की प्रतीति हो सकती है। तभी तो वह अपने असलियत ब्रह्म स्वरूप में स्थित रह उस महान ब्रह्म सत्ता का यथोचित प्रयोग करता हुआ इस कारण जगत पर विजय प्राप्त करने के योग्य बन पाता है।

इस प्रकार वह शब्द गुरु रूपी मूल मंत्र के अजपा जाप द्वारा, जगत में संकल्प रहित विचरता हुआ, अपनी कुर्सी यानि परमपद पर स्थिर बना रह पाता है और संसार सागर से पार हो, सर्व-सर्व चमक दिखाता है।

इस परिप्रेक्ष्य में सजनों सबको सतर्क करते हुए, हम कहना चाहते हैं कि मनमत के अधीन हो, ईश्वर के संविधान के विपरीत, अपनी हुकूमत मत चलाओ। अपनी हुकूमत चलाना

ईश्वर के प्रति विद्रोह व अहंकारता का प्रतीक है। इस अमानवीय चलन के पीछे भरपूर अज्ञान होता है। इस अज्ञान से बचने हेतु उस ईश्वर के अनुशासन में बने रहना सीखो क्योंकि इसी ध्यान साधना द्वारा जगत की रमज़ को भली-भाँति समझ सकोगे। इस सन्दर्भ में यह भी जान लो कि अपनी हुकूमत अनुसार शासन वही चलाता है जो अंतर्निहित वेद विदित ज्ञान प्राप्त करने में असक्षम हो जाता है और ज्ञानेन्द्रियों द्वारा इस जगत को धारता है।

ऐसा करते समय उस नासमझ को इस तथ्य की सुध नहीं रहती कि बैहरूनी वृत्ति में जो भी मैंने जगत से धारण किया, यह यथार्थ में मेरा नहीं है और ना ही मेरा रह सकता है। वह तो पराया मिथ्या धन है। इस पराये धन को इस्तेमाल में लाना कर्म फल में फँस, उसका भोग भोगते हुए सूद समेत लौटाने हेतु जगत में बने रहने की बात है। अतः सजनों इस बात की सूक्ष्मता को समझ जो भी धारण करो या समझो, वह निज ज्ञान स्वरूप से प्राप्त करो व जिह्वा को स्वतन्त्र व संकल्प को स्वच्छ रखते हुए सबके सजन हो जाओ। इस तरह सदा संतोष में बने रहो।

इस प्रकार शारीरिक स्वभावों की सफाई करते हुए अपनी अन्दरूनी वृत्ति को सशक्त बनाओ और मन को वश में रखने योग्य बनो। निश्चित ही फिर जो भी प्राप्त होगा वह शत-प्रतिशत आपका होगा और उस दिव्य प्राप्ति के परिणामस्वरूप आत्मतुष्टि की प्रतीक, निज परिपूर्णता का एहसास होगा। यही आत्मनिर्भरता आपको मनुष्यत्व में बने रहने में इस तरह से सक्षम बना देगी कि आत्मिक बल द्वारा

धीरता से आप उस ईश्वर की हुकूमत को स्वीकार उसी के अनुशासन का पालन करने में गर्व महसूस करोगे व इसी में अपना व अपने परिवार का हित मानोगे। इसलिए हमारी सबसे प्रार्थना है कि उस आद् ईश्वर की विचारधारा अपनाकर उस पर ध्यानपूर्वक सुदृढ़ता से बने रहते हुए परिवारजनों व कुल दुनियां को भी जीवन के इसी सुखदाई व निष्कंटक रास्ते पर चलने के लिए प्रेरित करो। सजनों सदा याद रखो कि ईश्वर की हुकूमत में बने रहने पर ही हम, आप व सब सुरक्षित रह, एकता व एक अवस्था धारण कर घर सतयुग बना सकते हैं।

सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में वर्णित इन अनमोल वचनों से प्रेरणा ले, हमारे लिए आवश्यक हो जाता है कि हम विवेक बुद्धि इन्सान, जगत में विचरते समय नादान न बने रहें। इस हेतु बाल-अवस्था के विभिन्न भक्ति-भाव त्याग कर, शब्द विचार पकड़, युवावस्था के भक्ति-भाव यानि समभाव-समदृष्टि की युक्ति पर स्थिर हो, निर्विकार बने रहें व ख़ालिस सोना हो हृदय सचखंड बना ले।

इस तरह ब्रह्म भाव में स्थित रह, त्रिकालदर्शी बनें व इस फुरने की सृष्टि से आज़ाद हो जाएँ। याद रखो संतोष-धैर्य अपनाकर जो इन्सान इस प्रकार निष्काम रास्ते पर चलता है वह भूमण्डल में अपने सब कर्त्तव्य मानव धर्म अनुसार न्यायसंगत व प्रसन्नतापूर्वक निभाते हुए सदा निर्दोष, निर्भय, निरासक्त, निष्पक्ष व निष्कलंक बना रहता है। इस प्रकार वह परमपद पाकर, जगत के जीवों को हैरान कर देता है। याद रखो ऐसा होने पर जगत की उपाधि मिट

जाती है और इंसान जन्म की बाज़ी जीत लेता है। तभी तो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है-

आवागमन ओहदा मिट गया,
मिट गया जगत जंजाल।
गर्भ चौरासी मिट गई,
जन्म दी बाज़ी जैं जित लई,
जित लई ओ कमाल।।

इस तरह सतवस्तु की निराली व मतवाली चाल पकड़ कर उस पर चलने वाले उच्च बुद्धि, उच्च ख़्याल सजनों का अंतःकरण यानि मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार जगत में विचरते हुए भी, निर्मल यानि एक अवस्था में सधा रहता है। इससे उन्हें अपनी यथार्थ यानि नित्य, अजर व अमर अवस्था का अनुभव होता है। जानो इस अनुभव द्वारा उन्हें अपनी अंतर्निहित शक्तियों का केवल बोध ही नहीं होता अपितु उनका यथोचित प्रयोग करने की क्षमता का भी विकास होता। तात्पर्य यह है कि उनकी अन्दरूनी व बैहरूनी वृत्ति सम हो जाती है। तभी तो सजनों सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया हैः-

इस द्वारे दी चाल कठिन,
कोई विरला चाल पकड़ लैंदा।
दुनियाँ ते हनुमान जी दे वचन जैं पाले,
ए चाल इन्सान ओ फड़ लैंदा।

सजनों जान लो कि इस चाल के विपरीत चलन अपनाने वालों के लिए सम, संतोष, धैर्य, सच्चाई, धर्म के रास्ते पर

निष्कामता से चलते हुए, निर्विकारी बने रहना कठिन हो जाता है। परिणामस्वरूप उनके हृदय में विकारवृत्तियाँ घर कर जाती हैं और वे न केवल स्वयं को अपितु अपने कुल को भी अपने हाथों ही वीरान कर डालते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ हमें सावधान करते हुए बता रहा है-

सिक्का आप पिघले, कईयाँ नू पिघलावे।
खालस सोना आप तरे कईयां नूं तारे बिन सूरजों प्रकाश को पाए।

अर्थात् सिक्का यानि अविचारी व्यक्ति आजीवन पछताता है क्योंकि शब्द रूपी गुरु के आधार परमतत्व परमेश्वर यानि अपने कंत से बिछोड़ा हो जाने के कारण, उसका ख़्याल मनमत अनुसार मोह-माया में उलझ व संकल्प-विकल्प के चक्रव्यूह में फँस, नश्वर जगत में भटकता रहता है। तभी तो वह सत्य आधारित वर्त्ताव के स्थान पर सबसे छल-कपट व राग-द्वेष युक्त व्यवहार करता है। इसी कारण उसके लिए एकाग्रचित्त होकर निज स्वरूप में बने रहना असम्भव हो जाता है व किसी भी कार्य सिद्धि हेतु ध्यान-साधना उसके लिए मुश्किल हो जाती है।

इस तरह ईश्वर के हुक्म की मननकारी न करने के कारण, अन्त में हारकर वह जीव नरक को प्राप्त होता है। इसके विपरीत ख़ालिस सोना यानि जिसके हृदय में कोई खोट नहीं होता, वह ईश्वरीय शानो-शौकत से जीवन जीते हुए जगत हितकारी बन सदा मौज मानता है व चमक दिखाता है। जानो कि ईश्वर ही खालिस सोना है। उन्हीं के वचन प्रवान कर हम अपने भाव-स्वभाव निर्मल कर सकते हैं और

खालिस सोना हो अपनी शान बढ़ा सकते हैं व जगत पर विजय प्राप्त कर सकते हैं। इस तरह स्पष्ट है कि ख़ालिस सोना यानि विचारवान निर्मल बुद्धि इंसान के जीवन में रोने का दिन कभी नहीं आता। परिस्थितियाँ चाहे कितनी ही बिगड़ जाएं वह उनमें कदाचित् व्याकुल नहीं होता और संयोग-वियोग दुःख-सुख में भी सम बना रह पाता है। तभी तो उसकी यश-कीर्ति की सुगंधि देवलोक की सुगंधि को भी मात कर देती है।

इस सन्दर्भ में ध्यान दो कि कलियुग मे कोई विरला इन्सान ही सतवस्तु की चाल पकड़, नीतियों का वर्त्त-वर्त्ताव करते हुए, सच्चाई-धर्म के रास्ते पर बना रह पाता है। इस सन्दर्भ में सजन श्री शहनशाह हनुमान जी का उदाहरण हमारे सामने हैं जिन्होंने नीतियों पर चलकर अमर पद को प्राप्त किया जबकि रावण ने नीति विरुद्ध चलन अपनाकर अपनी सोने की लंका को भी वीरान कर लिया।

अतः हमारे लिए आवश्यक है कि जगत में विचरते हुए हम भी सजन श्री शहनशाह महाबीर जी की युक्तियों को प्रवान कर आत्मिक ज्ञान प्राप्त करने का यत्न करें। इसके लिए हमें यत्नपूर्वक विचार शब्द पकड़ना होगा और अनीतियों वाले चलन को छोड़कर निष्कामतापूर्वक धर्मसंगत जीवन जीना आरम्भ करना होगा। ईश्वर आने वाले समयकाल यानि सतवस्तु के आगमन से पूर्व ही, समस्त जनता से सतवस्तु की इस निराली चाल को पकड़ने का आग्रह कर रहे हैं। वह सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में सब को कह रहे हैं कि सजनोः-

जोत नाल जोत हो जावो, ओ जोत नाल जोत हो जावो।
जोत नाल मेल कर दिखलावो, हो जावो मालो माली।।

याद रखो सजनों कि समय के अनुसार सतवस्तु का प्रचार चल रहा है और सतवस्तु का एक-एक शब्द जो बुल रहा है वह धारण कर, जगत में विचरते समय कलुकाल से बचाव हेतु, अमल में लाने के योग्य है। अतः इन्हीं शब्द विचारों को ही सिरताज मानो और इन्ही पर सुदृढ़ बने रह, सदा सुखी व आनन्दमय बने रहो।

इस हेतु जगत की कल्पना से मुक्त रह यानि जगत की तरफ से मुख मोड़, अपना ख़्याल ईश्वर के संग जोड़े रखो। इस क्रिया द्वारा सफलता से सदाचारिता रूपी परिणाम प्राप्त करने में ही अपना हित मानो। याद रखो सदाचार ही व्यक्ति, समाज एवं राष्ट्र की उन्नति व समृद्धि का, मूल स्रोत है। सदाचार तथा दुराचार, परस्पर विरोधी हैं। सदाचार अमृत है तो, दुराचार विष।

सदाचार जीवन है तो, दुराचार मृत्यु। सदाचार आद् प्रकाश है तो, दुराचार घोर अन्धकार। सदाचार देवत्व है तो, दुराचार आसक्ति युक्त आचरण। सदाचार के महत्त्व को समझते हुए ही, संसार के सभी महापुरुषों व मनीषियों ने, सदाचार को ही, एकमात्र आश्रय माना है। सदाचार का पालन करने से, कांति तथा लम्बी आयु, प्राप्त होती है। सदाचार रूपी वृक्ष, चारों पुरुषार्थों, यानि धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष को, सिद्ध करने वाला है। यहाँ स्पष्ट कर दें कि, सदाचार पर स्थिर बने रहना, इसलिए भी आवश्यक है, क्योंकि, चारित्रिक सुन्दरता पर, छोटा सा दाग लगने से,

मनुष्य के मन में हीन भावना पैदा हो जाती है, जिसके प्रभाव से वह विवेकहीन हो, अज्ञानियों की भांति, दुराचरण करने लग जाता है। इस तरह उसके मन में, विकार वृत्तियाँ पनपती हैं और वह कुंठा, घुटन, तनाव व अवसाद आदि का शिकार हो, नाना प्रकार की पीड़ा भुगतता है व इन्सानियत अनुरूप जीवन जीने के प्रति, आत्मविश्वास खो बैठता है। अतः दुराचरण के दुष्प्रभाव को देखते हुए सदाचरण अपनाओ व इस हेतु, प्रत्येक मानव को सत्य आचरण करते हुए, जीवन लक्ष्य की ओर बढ़ने का पाठ पढ़ाने का प्रबंध, बाल्यावस्था से ही करो। ऐसा करने पर ही, सम्पूर्ण मानव जाति एकजुट होकर, पूर्ण रूपेण, भौतिक और आध्यात्मिक विकास कर पाएगी।

इस सन्दर्भ में याद रखो कि ईश्वर की माया कठिन व प्रबल है। यह माया बड़ी जमाल यानि सुन्दर भी है। अतः माया की रमज़ को समझो क्योंकि इसको समझने से ही इस पर मोहित नही होवोगे और माया के स्वामी बन जगत में विचरते समय, माया का खेल अधिकार से खेल सकोगे व उस पर विजय प्राप्त कर सकोगे। याद रखो माया पर विजयी होना जगत पर विजयी होने की बात है। इस परिप्रेक्ष्य में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है किः-

इन्सान जाल विच फसे ते न तोड़ सके,
जिवें शेर पिंजरे विच पाया।
भजन बन्दगी दी ताकत देखो,
तरुट्टे जाल छुट्टे सारे फन्दे, रौशन नाम कहाया।।

अर्थात् कोई विरला इंसान ही ईश्वर की कृपा से, माया के

इस जाल को तोड़कर, बाहर निकल सकता है। तात्पर्य यह है कि जिसकी ईश्वर के साथ मित्रता हो जाती है वह भाग्यशाली व्यक्ति ही मायाजाल तोड़ जगजीत नाम कहा सकता है। याद रखो इस बात को सूक्ष्मता से समझने वाला इंसान जगत में कभी भी भ्रमित नहीं होता। इस तरह उस विवेक बुद्धि इंसान के चिन्ता, फिक्र व क्लेश सब मिट जाते हैं और वह दिन-रात हर्षवन्द रहता है।

तभी तो ऐसा इन्सान इस जगत में निषंग विचरता है और उसे सारा ब्रह्माण्ड अपना मित्र नज़र आता है। इस तरह हकीकत में वह इस तथ्य व सत्य को स्वीकारता है कि, आत्मा में ही सबके पालनहार परमात्मा, पारब्रह्म परमेश्वर, भक्तवत्सल, निरंकार, बिन सूरजों चमक रहे हैं तथा वह दयालु अंतर्यामी हम सबके दिलों की जानने वाले हैं। वह घड़ी-घड़ी, पल-पल गुजरी-विहाणी सब देख रहे हैं।

अतः इन्सानों इस सत्य को स्वीकार जगत में चोरी और ठगी का चलन मत अपनाओ और इस जगत में विचरते हुए सदा याद रखो कि उस सच्ची सरकार से न ही कभी कुछ छिपा है और न ही कुछ छिप सकता है। इसीलिए इस जगत में जो भी करो वह ब्रह्म ज्ञान अनुसार करना सुनिश्चित करो। इस हेतु सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के इस संदेश को मानो:-

सजनों समभाव-समदृष्टि नूं धारण करो।
वैरी दुश्मन शत्रु सारे इक सजन दृष्टि फड़ो।।

अर्थात् जगत में जनचर-बनचर, जड़-चेतन सबके प्रति समभाव-समदृष्टि अनुरूप सजनता का व्यवहार करो।

इससे जात-पात, वड-छोट, अमीरी-ग़रीबी व शत्रुता आदि का कोई प्रभाव नहीं रहेगा। ध्यान दो सजनों इस युक्ति अनुसार, सजन भाव की पढ़ाई व गुढ़ाई करवाने के लिए ही, जगत के वाली ने समभाव-समदृष्टि का स्कूल खोला है जिसमें कोई फीस नहीं है अपितु केवल सीस अर्पण करना होता है। इस युक्ति को प्रवान कर जगत में विचरते समय शब्द को ही अपना गुरु मानो। याद रखो किसी भी शरीर को गुरु मानना या किसी का गुरु बनना, अहं भाव में उलझ जन्म-मरण के चक्कर में फँसना है।

इस बात को सूक्ष्मतः पकड़ो और सदा सतर्क रहो क्योंकि आज के समयकाल में कई स्वार्थी व कपटी इंसान, साधु का वेष धारण करके, कर्मकाण्डों द्वारा अपना स्वार्थ सिद्ध करने के लिए गुरु बन बैठते हैं और दुनियां को अज्ञान में उलझा लूटते हैं। इस प्रकार वे झूठ की कमाई कर अपनी बुद्धि तो भ्रष्ट करते ही हैं साथ ही संग जुड़ने वालों को भी पथभ्रष्ट कर डालते हैं।

याद रखो इस कलियुग में कोई विरला साधु ही मुश्किल से आत्मिक ज्ञान प्राप्त करता है। तभी तो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में ईश्वर सबको सावधान करते हुए कहते हैं कि हे बाल अवस्था के मनगढ़ंत भक्ति-भावों पर चलने वाले इन्सानों ! होश में आओ और युवावस्था के भक्ति-भाव यानि समभाव-समदृष्टि की युक्ति प्रवान कर, समय रहते ही अपना घर सतयुग बना लो। यह पुनः मनुष्यत्व में ढलने की बात है।

इस सन्दर्भ में त्रेता में राम, द्वापर में कृष्ण व कलियुग में दस पातशाह जी को मिसाल से समझो। वे युग पुरुष भी

युवावस्था के इसी भक्ति-भाव द्वारा अपने शुद्ध अंतःकरण रूपी दर्पण में अपना प्रतिबिम्ब यानि यथार्थ स्वरूप देख उस पर स्थिर रह पाए। याद रखो कई गृहस्थियों ने भी यही चलन अपनाकर आत्मपद की सार पायी और निष्कामी व ब्रह्मज्ञानी बन अपना नाम रोशन किया तथा अमर पद को प्राप्त हुए। इस प्रकार समभाव-समदृष्टि की युक्ति अपना कर ही सब सजन जगत से निर्लेप, अपने असलियत सुन्दर स्वरूप में बने रह पाए और और जन्म की बाज़ी जीत पाए। सजनों हम सबको भी वैसी ही अजर-अमर हस्ती बनना है क्योंकि यही हमारा यथार्थ स्वरूप है। अतः सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में वर्णित संदेश के अनुसारः-

दुनियां ते आके एकता पकड़ो इन्सान
फिर तुसां ईश्वर नूं पाओ महान।।

इस कथन के अनुसार सजनों समभाव-समदृष्टि की युक्ति को पूर्णतया समझकर 'इक निगाह इक दृष्टि' हो जाओ और अपनी इलाही सुरत का दर्शन पाकर त्रिकालदर्शी नाम कहलाओ। इस तरह इस जगत में संसारी परिवार से भिन्न, परमार्थी परिवार से सम्बन्ध स्थापित करने हेतु, कदम-कदम पर विचार सहित समय-समय पर अपनी तुलना करते हुए, समभाव-समदृष्टि के व्यवहार में अटल बने रहो। ऐसा कर पाने हेतु :-

समभाव देखो सजनों जनचर-बनचर
समभाव देखो जगत जहान।
ओथे जात पात न अमीरी ग़रीबी
एहो दृष्टि सजनों राहवे महान।

सजनो समभाव-समदृष्टि की युक्ति का स्वयं वर्त-वर्ताव कर, अन्य सजनों को भी इसी युक्ति के अनुशीलन के लिए प्रेरित करो व उन्हें भी आत्मपद की प्राप्ति करने के योग्य बनाओ। याद रखो इस शब्द पर सीस अर्पण करने वाला इंसान, सुपुत्र बन फ़र्स्ट का नतीजा दिखाता है और परमात्मा के दर्शन करता हुआ ब्रह्मपदवी को प्राप्त कर रोशन हो जाता है क्योंकि जहाँ समभाव-समदृष्टि है वहाँ ईश्वर खुद हर समय मददगार होते हैं।

अंततः सजनो याद रखो कि सर्व-सर्व एक परमात्मा का ही चमकारा है। वह ही जगत का सिरजनहारा व पालनहारा सब जीवों के कल्याण का हेतु है। उसकी लीला अपरम्पार है इसलिए ब्रह्मज्ञान अनुसार उन्ही के विचारों को जीवन में उतार, नैतिक व चारित्रिक रूप से सुन्दर बनो और उसी में बने रहने हेतु परिश्रम दिखा, जीव, जगत, ब्रह्म के खेल की मर्म को जान अपने निर्विकारी स्वरूप में बने रहते हुए निष्कामता से परोपकार कमाओ। सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार सजनों यह मत भूलो कि जो जगत में सच का वर्त्त-वर्त्ताव करता है वह धर्म की आराधना व साधना कर आजीवन निष्कामतापूर्वक धर्म के मार्ग पर डटा रह सकता है। याद रखो ऐसा इन्सान ही न केवल खुद भवसागर से पार उतरने के योग्य होता है अपितु वह तो कुल सगली को भी तार परमपद को पा, अपने घर परमधाम पहुँच जाता है।

इस सन्दर्भ में सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में परमधाम के नज़ारे का वर्णन करते हुए कहा गया है कि-

परमधाम परमेश्वर रैंहदा,
ओ परमधाम जगमग जगे महान।
जगमग ओही प्रकाश ओ प्रकाश हे जे कुल जहान।
परमधाम दा नज़ारा है जे ओ जग सारा।
ओ परमधाम ओ परमधाम कैसा लगे प्यारा।।

सजनों समभाव समदृष्टि की युक्ति अनुसार स्वभाव अपना, सबसे सजनता का व्यवहार करते हुए, हम सब अपने घर परमधाम को प्राप्त हों, यही हमारी शुभकामना है। इस हेतु हमें क्या करना होगा, सजनों वह अब ध्यान से सुनो:-

सजन दयालु श्री रामचन्द्र जी के मुख के शब्द

जिवें प्रसन्न राहवे ओ मेरा साजना,
ओ साजन नूं प्रसन्न रखना।
ओ साजन नूं प्रसन्न रखना नी ओ।।

हृदय में राहवे एहो उमंग,
हृदय में राहवे एहो उमंग।
के साजन नू प्रसन्न रखना,
ओ साजन नू प्रसन्न रखना नी ओ।।

साजन एक हर अन्दर विशेष है,
साजन एक हर अन्दर विशेष है।
साजन रैहंदा ओ सारे ब्रह्माण्ड,
के साजन नू प्रसन्न रखना।
ओ साजन नू प्रसन्न रखना नी ओ।।

शब्दः- श्री शहनशाह हनुमान जी,
दयालु श्री रामचन्द्र महाराज रैहंदे हैन साडे पास।
साजन प्रभु जी दी गोदी में सज रिहा,
शक्ति लक्ष्मी दे साथ।
ओ साजन नू प्रसन्न रखना,
ओ साजन नू प्रसन्न रखना नी ओ।

शब्दः- साजन प्रसन्न सजनों किवें न राहवे,
प्रसन्नता विच ओ किवें न आवे।
श्री शहनशाह हनुमान दयालु श्री रामचन्द्र जी
रैहंदे ओन्हां दे पास।
प्रभु जी दी गोदी में सज रिहा शक्ति लक्ष्मी दे साथ।
फिर साजन प्रसन्न किवें न राहवे,
प्रसन्नता विच ओ किवें न आवे
ओ साजन नूं प्रसन्न रखना नी ओ,
ओ साजन नू प्रसन्न रखना नी ओ।।

श्री साजन जी दे मुख दे शब्द

जिवें प्रसन्न राहवे दाता श्री शहनशाह,
उस दाते नूं प्रसन्न रखना,
ओ दाते नूं प्रसन्न रखना नी ओ।

सजन दयालु श्री रामचन्द्र जी दे मुख दे शब्द

साजन जी ने दुनियां वल्लों मुख ओ मोड़ लिया।
साडे वल साजन जी ने मुख ओ जोड़ लिया।
असां साजन ते रैहंदे हाँ प्रसन्न,

ओ साजन नू प्रसन्न रखना।
ओ साजन नू प्रसन्न रखना नी ओ।।

मन मन्दिर बिन सूरजों ओ जगदा,
हर अन्दर साजन मेरा ओ सजदा।
सज रिहा सूरज चन्द,
ओ साजन नू प्रसन्न रखना।
ओ साजन नू प्रसन्न रखना नी ओ।।

आद अन्त साजन दा प्रकाश है,
गगन मण्डल सब जनों में अजपा ही जाप है।
ओन्हां दा रूप रेखा नहीं कोई रंग,
ओ साजन नू प्रसन्न रखना।।

ओ साजन नू प्रसन्न रखना नी ओ।
गगन-मण्डल प्रकाश रिहा मेरा ओ साजना,
प्रकाश रिहा कुल दुनियां अन्दर।
प्रकाश रिहा सूरज चाँद सितारे,
जैंदा रूप रेखा नहीं कोई रंग,
ओ साजन नू प्रसन्न रखना।।

ओ साजन नू प्रसन्न रखना नी ओ।

शब्दः– ओही ईश्वर ओही परमात्मा, ओही चमक रिहा मेरा साजना।

सजनों जानते हो उस साजन परमेश्वर को कौन प्रसन्न रख सकता है?

वही जो सतवस्तु के कुदरती विदित विचारों को अपने अन्दर

उतार लेता है व इस तरह अपने मन को सजन भाव से भरपूर कर सबके साथ सजनता अनुरूप व्यवहार करना आरम्भ कर देता है। याद रखो सजनों ऐसे ही सजन का मन आत्मस्वरूप में लीन रह, आत्मिक ज्ञान प्राप्ति द्वारा, सद् विचारों की खुराक का सेवन कर, सदा शांत रहता है। यही सात्विक खुराक फिर उसके ओजस्वी व तेजस्वी बन पुण्य कर्म करने की योग्यता प्राप्त करने का आधार बनती है।

इस प्रकार उसका हृदय प्रकाशित हो उठता है और वह जगत के सत्य को जानने वाला, जगत में विचरते हुए भी मोह माया के बन्धन में नहीं उलझता और वह जीव एकाग्रचित्तता द्वारा ईश्वर के निमित्त समर्पित भाव से सब कुछ करते हुए जगत पर विजय प्राप्त कर लेता है। यह अपने मन को ध्यान साधना द्वारा, ईश्वर में लीन रखते हुए व निष्काम कर्म द्वारा उस ईश्वर को प्रसन्न कर परमपद प्राप्त करने की बात होती है।

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरान्त सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियन्त्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

दिनाँक 27 सितम्बर 2015 का सबक

जगत भाग-3

प्रार्थना

मेरा समभाव-समदृष्टि की पढ़ाई व गुढ़ाई करने के पीछे मुख्य उद्देश्य है अपने यथार्थ में बने रहने हेतु आत्मज्ञान द्वारा, मन-वचन-कर्म से आत्मभाव अनुसार, हर प्राणी के प्रति परमात्मा-दृष्टि व वृत्ति अपनाकर, अपने आत्मबल का भरपूर प्रयोग करते हुए, अब तक धारण किए हुए सूक्ष्म से सूक्ष्म दोषों का निवारण कर श्रेष्ठ, विद्वान, गुणवान, बलवान, धनवान, बुद्धिमान व ज्ञानवान बन, सजन-भाव का वर्त-वर्ताव कर एक अच्छे इंसान की तरह जीवन जीने के योग्य बनना। मैं जानता हूँ कि यही युक्ति ही मेरे हृदय में शांति रूपा शक्ति द्वारा मुझे सदा हर विकृति व अमंगल से रक्षित रखने का अचूक हथियार है। इस हेतु मैं अपने इसी उद्देश्य सिद्धि के लिए सर्वव्यापक भगवान से बल, बुद्धि व सुमति प्रदान करने की प्रार्थना करता हूँ।

जगत में भेजते समय ईश्वर जीव को परमपवित्र जीवन चरित्र को अपनाने की प्रेरणा देने हेतु, श्री साजन जी के जीवन चरित्र से इस प्रकार परिचित करा रहे हैं:-

सजन दयालु श्री रामचन्द्र जी श्री साजन जी की अलौकिक रचनाएँ और दिव्य लीला का वर्णन करके जीवन चरित्र लिख रहे हैं

सजन दयालु श्री रामचन्द्र जी के मुख के शब्द

साजन जी दा लिख रहे हैं जीवन चरित्र।
कैसा सुन्दर है परम पवित्र,
साजन जी दा लिख रहे हैं जीवन चरित्र।।

श्री राम नाम दी रटन लगा लै,
राम नाम दी रटन लगा लै।
लगा लै दिल लगा के श्री राम नाम बोल।।

तेरा क्या लगेगा मोल श्री राम नाम बोल।
रे बोल रे बोल सजन श्री राम नाम बोल।
तेरा क्या लगेगा मोल श्री राम नाम बोल।।

जीवन चरित्र जीवन इन्हां दी ए बाणी।
सारी विश्व ते हिन ओ अस्थित।।

साजन जी दा लिख रहे हैं जीवन चरित्र।
कैसा सुन्दर है परम पवित्र,
साजन जी दा लिख रहे हैं जीवन चरित्र।।

जल और थल पवन और पानी,
सूरज चाँद विच चमकन ओ नित।
साजन जी दा लिख रहे हैं जीवन चरित्र।
कैसा सुन्दर है परम पवित्र,
साजन जी दा लिख रहे हैं जीवन चरित्र।।

जीव जन्तु जड़ चेतन प्रकाशे,
प्रकाश रहे ने जगत दे विच।
साजन जी दा लिख रहे हैं जीवन चरित्र।

कैसा सुन्दर है परम पवित्र,
साजन जी दा लिख रहे हैं जीवन चरित्र।।

चौदह भवन, नौ खण्ड, ब्रह्माण्ड प्रकाशे,
सप्तद्वीप गगन मण्डल विच।
साजन जी दा लिख रहे हैं जीवन चरित्र।
कैसा सुन्दर है परम पवित्र,
साजन जी दा लिख रहे हैं जीवन चरित्र।।

ओ३म् मकान ओन्हां दा ओ३म् स्थान है,
ओ३म् दी रटन लगाओ सजनो नित।
साजन जी दा लिख रहे हैं जीवन चरित्र।
कैसा सुन्दर है परम पवित्र,
साजन जी दा लिख रहे हैं जीवन चरित्र।।

ध्वनि:- सिंहासन ते जब बैठे, ओ बैठे कुर्सी बिछा के।
हार गले विच पाके, गोदी विच चाके।।

हो हो हो हो हार गले विच पाके, गोदी विच चाके।
हाँ हाँ गोदी विच चाके, हूँ हूँ गोदी विच चाके।
हो हो हो हो हार गले विच पाके, गोदी विच चाके।।

इस जगत में श्रेष्ठता से विचरने हेतु सजनों सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ हमें संदेश दे रहा है कि श्री साजन जी जो सारे विश्व में व्याप्त हैं व रोम-रोम में रमने वाले हैं उन्हीं अनादि, प्रमादि, अजर-अमर, नेहकलंक हस्ती का जीवन चरित्र अपनाओ क्योंकि उन्हीं का जीवन चरित्र सबसे सुन्दर व परम पवित्र है। सजनों सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में वर्णित उनकी कुदरती वाणी जीवनदायक है। इसलिए इस वाणी

को विचार में ला उसी का ही समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार मनन व अनुशीलन करो तथा तद्नुकूल ब्रह्म भाव पर स्थिर रह, मानवोचित आचार-विचार अपनाकर उसे अपने आहार-विहार द्वारा प्रदर्शित करो। इस प्रकार सजनों इस जगत में कामनारहित यानि निरासक्त विचरते हुए अपना अंतःकरण विशुद्ध रखो और अपनी जिह्वा स्वतन्त्र, संकल्प स्वच्छ व दृष्टि कंचन रखते हुए, अपने भाव-स्वभावों, वाणी व कर्मों द्वारा, मानवता का श्रेष्ठतम रूप प्रकट कर निष्कामी व परोपकारी बन जाओ। इस तरह ब्रह्म नाम कहाओ व ब्रह्म नाल ब्रह्म हो जाओ। इस प्रकार जगजीत नाम कहाओ और अपने स्थान नूं पाओ।

इसी परिप्रेक्ष्य में सजनों सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार सजन श्री शहनशाह हनुमान जी, इस फुरने रूपी जगत में परमार्थ के विपरीत विचरने वाले स्वार्थपर इंसानों को कलुकाल के भाव-स्वभावों से उबार, पुनः सतवस्तु के समभाव-समदृष्टि के चलन में ढाल मानव जीवन के सर्वोत्कृष्ट लक्ष्य के प्रति जाग्रत कर, सत्यनिष्ठ व धर्मपरायण सजन पुरुष बनने हेतु इस प्रकार सुझाव दे रहे हैं:-

1. अपने इस जगत में आने के उद्देश्य को समझो अर्थात् जानो कि ईश्वर ने आप को इस दुनियां में इन्सान बना कर, जगत के सुधार व उद्धार हेतु अपना कर्त्तव्य कर्म निष्कामता से करने के लिए भेजा है। इसके लिए उस कारियों के कारीगर द्वारा बनाए, अपने अनुपम व अति सुन्दर ईश्वरीय स्वरूप का आत्मिक ज्ञान द्वारा बोध करो। इस तरह अपने

जीवन की यथार्थता व अनमोलता समझ, उसे निष्पाप व निर्विकार रखते हुए, चरित्रवान बनो व अपना जन्म सिद्ध करो। इसके प्रति लापरवाही मत दिखाओ।

2. जगत में विचरते हुए सदा यह याद रखो कि जिस ब्रह्म सत्ता से मैं जग रहा हूँ, उसी ब्रह्म सत्ता से सब जग रहे हैं अर्थात् जो ब्रह्म सत्ता मन मंदिर प्रकाशित है वही आद-अंत, कोने-कोने, डाली-डाली, पत्ते-पत्ते, जड़-चेतन, सूरज-चाँद यानि पूरे ब्रह्माण्ड में जाप व व्याप रही है। इस तरह अपनी सत्ता के मूल स्रोत सर्व एकात्मा के सत्य से जुड़े रह 'विचार ईश्वर अपना आप' के सशक्त भाव पर स्थिर बने रहो व तदनुकूल ही परोपकार के निमित्त आचार-विचार अपनाओ।

3. सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ के अनुसार सजनों 'बह्म ही है आत्मा विच परमात्मा' व 'ब्रह्म ही है शब्द विचार' यानि सम, सन्तोष, धैर्य दा सिंगार। अतः जगत में परस्पर विचरते समय सजनों अपनी सुरत को शब्द ब्रह्म के साथ जोड़े रखो। यही नहीं ब्रह्म विचारों को खुद ध्यान से पकड़ो व औरों को भी समझाओ ताकि सब इन्सान 'ब्रह्म स्वरूप है अपना आप' इस सत्य को मान, ब्रह्म भावना अनुसार व्यवहार करते हुए, एकता व एक अवस्था में बने रहें। इस प्रकार निर्विकार रह सर्गुण-निर्गुण सम कर जानो और जगत में रहते हुए अपने अविनाशी स्वरूप में बने रहो। यही सतवस्तु की रमज़ को जानने की बात है और इसे कोई विरला ही समझ कर, सांसारिक दृश्यों के आकर्षण के प्रभाव से बच अपने ब्रह्म स्वरूप में बना रह सकता है व अमर पद को प्राप्त कर सकता है।

4. इस जगत में विचरते हुए सदा जाग्रत यानि पूर्ण चेतन अवस्था में बने रह, सतर्कता व सावधानी से जीवन व्यतीत करना सुनिश्चित करो ताकि अंतर्निहित वेद विदित, आत्मिक ज्ञान के रूप में प्राप्त करने के साथ-साथ बुद्धि विवेकशील बनी रहे व दृश्य जगत से कुछ भी प्रयोग करने से पूर्व उसकी सत्यता-असत्यता, सही-ग़लत की पहचान कर उचित को ही आवश्यकता अनुसार अपनाए। यह समचित्तता से एकरस बने रहने के लिए आवश्यक है। इस संदर्भ में सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ कह रहा हैः-

जेहड़ा सजनविचार पकड़े एक ,
उस सजन दी बुद्धि हो गई विवेक

5. भगवान सर्वव्यापक है, इस सत्य को मानते हुए, जगत में सबके साथ समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार विचरो। वड-छोट, तेरी-मेरी, का सवाल पैदा कर एक दूसरे से ईर्ष्या-द्वेष मत करो। इससे पाप कर्म की हेतु राक्षसी वृत्तियाँ पनपती हैं और मानव सदाचरण अपनाने के स्थान पर दुराचरण करने लगता है। यह समझो कि जगत की हर शै में ईश्वर का ही वास है और इस नाते हम सब एक दूसरे से अभिन्न हैं। इसलिए एकता व एक अवस्था में बने रह एक दूसरे के हितकारी बने रहना अति आवश्यक है। अतः हमारे लिए परस्पर सौहार्दता यानि सजन-भाव का व्यवहार करना उचित है। इस प्रकार ईश्वर को इस जगत रूपी सिंहासन का राजा मान, अन्दरूनी व बैहरूनी दोनों वृत्तियों में, मन-मन्दिर व जगत में उसी का समरस दर्शन करते हुए, परिपूर्णता से मानवीय व्यक्तित्व में ढल, शक्तिशाली बन जाओ और सजन भाव को वर्त्त-वर्त्ताव में लाना सुनिश्चित

करो। यह मानवोचित स्वभाव है मानो, और इस पर स्थिर बने रहते हुए मोह-माया के चंगुल में फँसने से बचे रहो। इस हेतु न किसी का बुरा सोचो, न करो और न ही किसी के प्रति कटुता व गाली-गलौज युक्त अपशब्दों का इस्तेमाल करो। सजनों इस प्रकार जगत में विचरने से अंतःकरण प्रकाशित रहेगा व संकल्प स्वच्छ, दृष्टि कंचन व जिह्वा स्वतन्त्र हो जाएगी। इस तरह झुखने-रोने के स्वभाव से निज़ात पा जाओगे।

6. सजनों जगत का सब कार्यव्यवहार करते हुए, अपना ख़्याल ध्यान वल व ध्यान प्रकाश वल यानि आत्मस्वरूप परब्रह्म परमेश्वर के प्रति स्थिर रखो व विचार ईश्वर है अपना आप के भाव में दृढ़ता से बने रहो। इस हेतु याद रखो कि मूलमन्त्र जो आद् अक्षर है वही शब्द हमारा गुरु है जिसका संग कर हम परमार्थ के रास्ते पर बने रह सकते हैं। यह भी याद रखो कि नादानो की तरह किसी संसारी शरीर व तस्वीर को गुरु मानने से मनगढ़ंत भक्ति-भावों में उलझ हम कुरस्ते पर अग्रसर हो सकते हैं।

जानो कि जिस प्रणव अक्षर का सारे भूमण्डल में चमकारा है उसी के अजपा जाप से हृदय प्रकाशित रहता है व इन्सान आत्मिक ज्ञान प्राप्त कर, इस जगत के सत्य का पारखी बनने में सक्षम होता है। इस क्रिया से मन को संकल्प रहित अवस्था में रखना सहज होता है। अतः इन्सान अपने निज स्वरूप में मग्न रह एक शक्तिशाली व्यक्तित्व के रूप में इस जगत में बेख़ौफ़ा बेख़तरा विचरते हुए सदा हर्षवन्द रहता है।

7. जगत को मुसाफ़िरखाना समझो अर्थात् मानो कि यह दुनियां, हम इन्सान और यह मायावी जगत नकली है। अतः

कुटुम्ब-कबीला, पुत्र-पुत्री, बहन-भाई, मित्र-सम्बन्धी इन मतलबी सम्बन्धों में गलतान हो, इस जगत के मस्ताने व दीवाने मत होवो क्योंकि इन मतलबी यारों के साथ कुछ दिनों का ही मेल है। याद रखो नकली दुनियां के मायावी आडम्बर में फँसना अज्ञान धारणा द्वारा अशान्ति प्राप्त करने की बात है। अतः झूठी दुनियां व धन-दौलत से प्रीत छोड़ दो और कलियुग के अटल-पटल जीवों में सावधानी से रहते हुए, जो करने आए हो वैसा करना सुनिश्चित करो। तभी सर्गुण-निर्गुण का खेल संकल्प रहित खेलते हुए व निष्काम कर्म करते हुए निर्वाण पद प्राप्त करने का पुरुषार्थ दिखा पाओगे।

8. सांसारिक अज्ञान के प्रभाव से अचेतन अवस्था को प्राप्त हो, इस जगत में गँवारों की तरह मत विचरो यानि मनुराज में फँस व संकल्प-विकल्प से दोस्ती लगा, जगत के भ्रमजाल में उलझ, स्वार्थी मत बनो अन्यथा हैवान बन ख़्वार हो जाओगे। अतः स्वार्थपर कामनाओं भरे रास्ते से पलट परमार्थ के निष्काम रास्ते पर चल पड़ो।

9. कलुकाल में जो निकम्मे बनावटी गुरु बन बैठे हैं और इन्सानों को बिगाड़, अवलड़े रस्ते चढ़ा जन्म-मरण के चक्रव्यूह में फँसा रहे हैं उनकी मनगढ़ंत चाल मत अपनाओ। इस प्रकार शारीरिक गुरु-चेले के बन्धन में न बन्धनमान होवो और न ही किसी को बंधनमान करो। इस बंधन में फँसने से बचने हेतु ईश्वर को ही इस विश्व रूपी बगीचे का मालिक मानो व हृदय विदित चार वेद और छः शास्त्रों के शब्द विचारों को ही अपनाने योग्य मानो और अपना आप पहचान, उच्च बुद्धि उच्च ख़्याल हो जाओ। इस तरह सब

कुछ आवश्यकता अनुसार उसी ईश्वर से ही प्राप्त करो और उन्हीं पर ही श्रद्धा व विश्वास रखते हुए, उचित प्रयत्न द्वारा, स्वतन्त्र रूप से समृद्धशाली बने रहो व आनन्द और शान से जीवन जिओ। यहाँ यह भी याद रखो कि इन्सान जो कुछ भी इस जगत से प्राप्त करता है वह यहीं रह जाता है और परिवारजनों के मनमुटाव व लड़ाई-झगड़े का कारण बनता है।

10. जगत में निरासक्त विचरने हेतु सदा आत्मतुष्ट बने रहो। निष्काम कर्म करने से, प्रारब्ध अनुसार जो भी मिला है, जितना भी मिला है, जैसा भी मिला है, उसी में ही संतुष्ट व प्रसन्न बने रहो यानि साग को कड़ाह समझो, इससे साग भी एक दिन कड़ाह हो जाएगा और उजड़या घर वस जाएगा। यह मन की शान्ति व धीरता से सच्चाई धर्म के रास्ते पर बने रहने के लिए आवश्यक है।

11. अपने आत्मस्वरूप की अजरता-अमरता का बोध कर, जीवन की हर परिस्थिति यथा जन्म-मरण, रोग-सोग, खुशी-ग़मी, मान-अपमान, अमीरी-ग़रीबी में धीरज रख, सम अवस्था में बने रह, नित्य भाव व समरसता से विचरो। तात्पर्य यह है कि जगत में रहते हुए दु:ख में भी सुख मनाना सीखो और संयोग-वियोग को भी सम कर जानो।

12. इस जगत में विचरते हुए सदा सच वर्त्तो, सच वर्त्त-वर्त्तावो व सच का पहरेवा पहन सबको सच की ही पौढ़ी चढ़ावो अर्थात् सच विचार, सच ही बोलचाल, सच ही खान'पीन व सच का ही व्यवहार होवे। तात्पर्य यह है कि झूठ का संग छोड़ दो व हर हाल में सच पर अटलता से डटे

रहो। याद रखो झूठ की बेड़ी हमेशा डूबती है।

13. इस जगत में कुशलता से विचरण करने हेतु अपने धर्म को पहचानो। जानो कि हर इन्सान का एक ही धर्म है। जगत में रहते हुए उसी धर्म का दृढ़ता से पालन करो क्योंकि धर्म की ताकत बड़ी बलवान है। उसी ताकत द्वारा ही हम सत्यनिष्ठ बन, कलुकाल के स्वभावों का सहजता से, नाश कर सकते हैं व सतयुगी इन्सान बन सकते हैं। धर्म की ताकत से ही युग पुरुषों व सजन श्री शहनशाह हनुमान जी ने सब कष्ट-क्लेश सहते हुए, अधर्मियों व दुष्टों का ख़ात्मा किया और इसीलिए आज भी जगत में उनकी शान है। अतः युग पुरुषों की भाँति धर्म पथ पर चलकर, अपने जीवनकाल में सर्व एकात्मा का दर्शन करते हुए, सदा परोपकार प्रवृत्ति बने रहो व धर्म पर स्थिर बने रहने हेतु तन-मन-धन वारने से न सकुचाओ। इस संदर्भ में याद रखो कि धर्म का मार्ग बहुत महान है। इसी रास्ते पर चलकर ही अपने स्थान व विश्राम अवस्था को प्राप्त किया जा सकता है। अतः सत्य-धर्म के रास्ते पर स्थिर बने रहने का पराक्रम दिखाओ व मौज उड़ाओ।

14. इस जगत में विचरते हुए अधर्म का रास्ता कभी न अपनाओ क्योंकि पाप कर्म करने वाले का हमेशा नरक में ही वास होता है। याद रखो कि जगत में विचरते समय जो इन्सान धर्म छोड़ देता है, वह अपवित्र चलन के प्रतीक, निषिद्ध कर्म करके मानवता को कलंकित करता है। ऐसा दुर्बुद्धि, अहंकारी इंसान उत्पात मचाता है व एक-दूसरे पर अत्याचार करता हुआ हथियारों से प्रहार कर अपने बहन-भाइयों तक का शिकार कर देता है। इस तरह अपने लिए

विपत्ति ख़रीद, युवावस्था में ही, तनाव व अवसाद के रूप में मौत को अंग-संग देखता है। यह अपने सच्चे घर की सुध भूल, कुकर्मों के अनुसार अंधकूप में गिरने-मरने की बात है।

15. जगत में विचरते हुए काम, क्रोध, लोभ, मोह व अहंकार जैसे विषय-विकारों में चित्त न लगाओ। याद रखो कि अगर ऐसा हो गया तो जगत में विचरते हुए संतोष, धैर्य अपनाकर, निष्कामता से सच्चाई-धर्म के रास्ते पर चलते हुए परोपकार कमाना कठिन हो जाएगा। यह अचेतन अवस्था को प्राप्त हो, संसार में फँस विकार-वृत्तियों के प्रभाव से दुराचार, व्यभिचार व भ्रष्टाचार करते हुए, अंत में नरक को प्राप्त होने की बात होगी। अतः इन नारकीय दुःखों से बचने हेतु सजनों आशा-तृष्णा व छल-कपट का रास्ता खुद भी छोड़ दो व अपनी संतानों को भी इस रास्ते पर अग्रसर होने से बचाओ। इस तरह अधर्म के स्थान पर उन्हें समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार, सच्चाई-धर्म का रास्ता बाल्यावस्था से ही दिखाओ ताकि वे सदा निरोगी व निर्विकारी रह युवावस्था को प्राप्त रहें व इन्सानियत में बने रहने के योग्य बने रहें।

16. इस जगत में विचरते हुए सब फुरनों व सन्तापों से मुक्त बने रहो। इस हेतु आत्मनिरीक्षण द्वारा अपने बिगाड़ को जानो व आत्मसंयम द्वारा अपना सुधार कर बेफ़िक्र हो जाओ व जन्म की बाज़ी जीत लो। याद रखो कि इस प्रकार कदम-कदम पर विचार शब्द द्वारा अपने आपको पकड़कर आत्मसुधार कर मनुष्यत्व अनुसार जगत में रमण करने वाला इंसान ही महान भक्ति-शक्ति धारण कर निर्भयता से इस संसार में निष्कलंक व आनन्दमय विचर सकता है। अतः सजनों विचार शब्द पकड़ संतोष में बने रह सहनशक्ति को

धारण करो और बिन तीरों बिन हथियारों ब्रह्मा के इस सृष्टि-चक्र से आज़ाद हो जाओ।

17. इस सत्य को स्वीकारते हुए कि ईश्वर सबके साँझे हैं और कुल दुनियां यानि जनचर-बनचर, जड़-चेतन, हिन्दु, मुस्लिम, सिक्ख, ईसाई आदि सबमें उसी एक का ही वास है, इस जगत में समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार एक अवस्था में बने रहो और एकता से विचरो। तात्पर्य यह है कि इस जगत में सबके साथ आत्मीयता के साथ विचरो। हमारी चेष्टा, गल-बात व सलाह मशवरा एक ही हो। याद रखो इसी वृत्ति में बने रहने से 'एक निगाह एक दृष्टि, एक दृष्टि एक दर्शन हो, संकल्प रहित अफुरता से जगत में विचर सकोगे। यह सुरत शब्द का मेल बनाए रख, अटल राज प्राप्त करने की बात है।

18. जगत में निषंग विचरने हेतु ईश्वर के वचनों यानि हुक्म की पालना को सर्वोपरि मानो और उन्हीं सत्य विचारों मे बने रहो। इस तरह न केवल अपने इलाही रूप को जान सकोगे अपितु बल, शील, सन्तोष, क्षमा जैसे गुणों को धारण कर अपने स्वभावों व वाणी को सुन्दर रूप देकर अपना जीवन चरित्र भी सुन्दर और उज्ज्वल बना पाने में कामयाब हो सकोगे। यह यथार्थ स्वरूप में बने रह, मन को वश में रखते हुए, जगत में निर्भयता से विचरने व यश-कीर्ति प्राप्त करने की बात है।

19. सार्वजनिक हित को ध्यान में रखते हुए यानि जगत के जीवों के कल्याण के निमित्त, कर्त्तव्यपरायणता, सेवा व परोपकार की भावना से ओत-प्रोत हो, बड़ी से बड़ी कुर्बानी

व त्याग दिखा उस हेतु वांछित पराक्रम दिखाने से भी न सकुचाओ।

20. इस जगत में विचरते हुए, हृदयविदित वेद-शास्त्रों की वाणी के अर्थ को समझ, युवावस्था का भक्ति भाव अपनाओ व समभाव-समदृष्टि की युक्ति की साधना व ध्यान द्वारा जगत निवासी के अर्थ को समझो। इस प्रकार सजन आत्मा में जो अनमोल हीरा रूपी परमात्मा है उसकी सार को जान लो और सजन श्री शहनशाह हनुमान जी की स्वतन्त्र युक्ति के वर्त्त-वर्त्ताव से स्वतन्त्र रूप से नेक कमाई कर, जगत को दंग कर दो।

21. अंत में सजनो सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ कह रहा है कि

एहो फुलवाड़ी लाई होई महाराज दी, एन्हु फल फुल लगे बहुतेरे।
एहो हरी-भरी राहवे फुलां दी आंदी राहवे सुगन्धि चार चुफेरे।।

अर्थात् यह सारा जगत उस ईश्वर की ही फुलवाड़ी है, इस सत्य को मानो और इस विचारधारा के अनुसार खुद को व सबको मनुष्यता अनुरूप सींचना अपना प्रमुख कर्त्तव्य मानो ताकि सबका सदा उस ईश्वर के संग प्रेम बना रहे। इस प्रकार हरे-भरे रह, इस जगत से न्यारे रहने के योग्य बनो व उत्तम पुरूष कहलाओ। याद रखो यह घर सतयुग बनाने की बात है और हम सब जानते हैं कि जिस घर में सत्य का वास होता है उस घर की सुगंधि चारों तरफ फैलती है।

अंततः सजनों जान लो कि ईश्वर निर्विकार हैं और हमारे लिए भी आत्मा में परमात्मा का दर्शन करते हुए निर्विकार बने रहने का पराक्रम दिखाना आवश्यक है। इस संदर्भ में युग पुरुषों

की आदर्श मिसाल हमारे सामने है जिन्होंने सत्यता से ब्रह्मविद्या अनुसार रीतियों व नीतियों पर अडिग बने रह, सब कठिनाइयाँ झेलते हुए भी जगत में विचरते हुए यह पराक्रम दिखाया। अतः सजनों हमें भी उन्हीं का अनुकरण कर, परमानन्द को प्राप्त कर रोते हुओं को हँसाने व रुड़ते हुओं को सम्भालने का परोपकार, निष्काम भाव से ख़ुशी-ख़ुशी निभाना है ताकि सब स्वार्थपरता छोड़, निष्काम रास्ता अपनाने के लिए तत्पर हो जाएं और सभी के मुरझाए हुए चेहरे फिर से खिल उठें और प्रभु का यह जगत रूपी बगीचा पुनः अपनी अलौकिक सुन्दरता को प्राप्त हो। तभी तो सतवस्तु का कुदरती ग्रन्थ कह रहा हैः-

श्री साजन जी के मुख के शब्द

प्रीति लगाई ओ प्रीतम नाल,
प्रीति हट गई ओ सबदे नाल।
प्रीतम है जे ओ परवरदिगार,
मगरों ओ मगरों लह गया जगत जंजाल।।

प्रीतम दी प्रीति ने सब कुछ दिखाया है।
प्रीतम ही प्रीतम से असां सब कुछ पाया है।
प्रीतम दी प्रीति ने रोंदियां नूं हसाया है,
प्रीतम दी प्रीति ने रोंदियां नूं हसाया है।।

हृदय में हृदय में खिड़ी ओ बहार है,
मिल पये, मिल पये ओ सिरजनहार है।
श्री राम रमणे वाले दी मूर्त्ति विशाल है।
हर विच वस्से हर विच दिस्से, मूर्त्ति कमाल है।।

श्री राम ओही रहीम ओही, कृष्ण ओही करीम ओही।
ओही तो निरंकार है, ओही तो निरंकार है।।

ओही तो निरंकार है, ओही तो निरंकार है।
हर विच वस्से हर विच दिस्से, मूर्त्ति कमाल है।।

श्री राम रमणे वाले दी मूर्त्ति विशाल है।
हर विच वस्से हर विच दिस्से , मूर्त्ति कमाल है।।

ईश्वर ओही परमात्मा ओही, ओही तो सिरजनहार है।
हर विच वस्से हर विच दिस्से, मूर्त्ति कमाल है।।

श्री राम रमणे वाले दी मूर्त्ति विशाल है।
हर विच वस्से हर विच दिस्से, मूर्त्ति कमाल है।।

एक ख़्याल एक दृष्टि मूर्त्ति विशाल है,
एक दृष्टि एक दर्शन मूर्त्ति कमाल है।
श्री राम रमणे वाले दी मूर्त्ति विशाल है।
हर विच वस्से हर विच दिस्से, मूर्त्ति कमाल है।।

सजन दयालु श्री रामचन्द्र जी कह रहे हैं:-

साजन जी हर समय तुसां रिहा करो साडे कोल।
असां हर समय रिहा करिए तुहाडे कोल।
तूं मैं दे विच फरक न कोई इको नाम कहाया करो।।

संक्षेपतः सजनों याद रखें कि हम उस परमपिता परमेश्वर का अंश यानि सन्तान हैं। हमारे पिता ने इस अजूबा जगत की हर शै का निर्माण परिपूर्णता से किया है और ज्ञान स्वरूप - हृदय सुशोभित आत्मतत्व के रूप में हर शै को क्रियाशील किया है ताकि कोई भी जीव इस सुन्दर व

आकर्षक जगत की वस्तुओं की मिथ्या चमक-दमक में भ्रमित हो, उसी के चक्रव्यूह में न फँस जाए और इस तरह उसका कुदरत प्रदत्त वस्तु विशेष-धर्म रूपी विशेष गुण विकृत हो जाए और उस विकार विकृति इन्सान के लिए अपने घर वापिस पहुँचना असम्भव हो जाए। याद रखो अगर किसी भी कारण ऐसा होता है तो यह आवागमन के चक्रव्यूह में फँसे रहने की बात है।

इस सन्दर्भ में सजनों याद रखो कि निज ज्ञान स्वरूप ही, परिपूर्ण आत्मिक ज्ञान का स्रोत है। जगत की हर वस्तु में व्याप्त व भासित सर्व एकात्मा अपने आप में उस परमपिता का विराट् दर्शन है। वह ईश्वर हर शै में किस प्रकार सुशोभित है, यह रहस्य इसी आत्मिक ज्ञान द्वारा ही जाना जा सकता है।

अतः जन्म उपरान्त बाल्यवस्था से ही मनुष्यत्व अनुरूप बने रहने हेतु इस ज्ञान द्वारा ही आत्मबोध करना नितान्त आवश्यक होता है ताकि हर शै के प्रयोग से पहले हम उसकी अच्छी व बुरी गुणवत्ता की परख कर ही उसे धारण करें और मन में व्याप्त प्रबल सजन भाव के प्रयोग व प्रभाव से हर परिस्थिति में, हर प्रकार से एकरस, एक अवस्था में बने रह सकें। इस प्रकार सजनों हम उसी एक दर्शन में स्थित रहते हुए व उन्हीं का गुणगान करते हुए उनकी कुदरती साइंस के तरीकों को पढ़ें, समझें व श्रद्धा और विश्वास के साथ अमल में लाकर आनन्दमय जीवन जीने हेतु उचित परिणाम प्राप्त करना सीखें। याद रखो कि हम केवल जगत को और सुन्दर बनाने का कार्य करने के लिए जगत को प्राप्त हुए है, जगत हमें प्राप्त नहीं हुआ, यह तो ईश्वर की

अमानत है। अतः उसको धारण करने की होड़ में मत दौड़ो क्योंकि यह अमानत में ख़्यानत करने की यानि बदनीयत होने की बात है।

कहने का तात्पर्य यह है कि जगत की सुन्दरता देख के उसके प्रति आकर्षित हो, उसे धारण मत करो। इसके स्थान पर जो ईश्वर हृदय में स्थित है उसका अनुभव कर, इस जगत को संवारने हेतु अपनी शाश्वत शक्ति का इस्तेमाल करो। इस तरह पति-पत्नि को, पत्नि-पति को, दोनो सयुक्त रूप से अपने बच्चों, बुर्जुगों व समाज को सद्-विचारों से भरपूर कर जगत को सँवारने का काम कुशलता से सम्पन्न करो। इस प्रकार अपना कार्य सन्तोष, धैर्य से, सच्चाई-धर्म की मर्यादाओं में बने रह, समयबद्ध समाप्त कर, अपने घर लौट विश्राम को पाओ।

इस हेतु सजनों आत्मतत्व के सद्प्रभाव से ओजस्वी व तेजस्वी बने रहो व मूल-मन्त्र आद अक्षर के अजपा जाप द्वारा अपने मन को सदा उसी ईश्वर में लीन रख, निज ज्ञान स्वरूप के प्रकाशमय दर्शन से, आत्मज्ञान प्राप्त कर अपना अंतःकरण प्रकाशित रखो। इस हेतु ख़्याल ध्यान वल, ध्यान प्रकाश वल निरन्तर जोड़े रखने की क्रिया में प्रवीण बनो। इस प्रकार आद्, जुगाद प्रमाद सत्य के संग बने रह, अपने मन, बुद्धि व चित्त को एकता, एक अवस्था में ध्यान से साधे रख, अंतर्दृष्टि से अन्तर्बोध यानि असलियत स्वरूप है अपना आप के बोध में स्थित रहो। तभी ही मिथ्या अहंकार से मुक्त रह एकाग्रचित्तता से, अज्ञानता के कारण जगत के दृश्यों से भ्रमित होने का प्रभाव समझ सकोगे और संतोष, धैर्य पर बने रह, निष्कामता से सच्चाई-धर्म के रास्ते पर चलते हुए व

उसी अनुरूप कर्म करते हुए परोपकारी नाम कहा सकोगे।

सजनों इस प्रकार समभाव-समदृष्टि की युक्ति अनुसार इस जगत की सुन्दरता को निहारते व निखारते हुए अपने यथार्थ असलियत ज्योति स्वरूप के प्रभाव से एक शक्तिशाली इन्सान की तरह अपनी श्रेष्ठता सिद्ध कर वेद-शास्त्रों की वाणी को मन-वचन-कर्म द्वारा सिद्ध करो। इसके लिए सदा सावधान रहो और समय काल के चक्रव्यूह में न फँसो। याद रखो समय काल का चक्रव्यूह ही युग-युग में भटकाता है। इस चक्रव्यूह से वहीं बच सकता है जिसका मन संकल्प रहित होता है।

अतः संकल्प रहित अपने स्थान पर स्थित रहते हुए, 'मैं-तूं, जगत तूं, आप ही आप हो, कीड़ी कोलों हाथी अन्दर, ब्रह्मा कोलों तृण अन्दर आप ही आप हो' के भाव से निष्काम कर्म करने की विधि परिपूर्णता से सीखो।

आपकी जानकारी के लिए आने वाली कक्षाओं में अब इसी विषय पर बातचीत होगी। अतः ध्यान से उसे सुनना, समझना व तदनुरूप ढलने का प्रयत्न करना। याद रखो सजनों ऐसा सुनिश्चित करने पर ही अपने मन को वश में रखते हुए जगत पर विजयी हो सकोगे। याद रखो जगत पर जो भी विजयी होकर आएगा, ईश्वर उसी को सतवस्तु का सेहरा पहना देंगे। तभी तो सतवस्तु के कुदरती ग्रन्थ में कहा गया है:-

चमक रिहा सतवस्तु दा सेहरा,
चमके सारे ब्रह्माण्ड विच जेहड़ा

निःसंदेह इस सेहरे को पहन कर आपकी चमक यानि यश-कीर्ति की सुगंधि सारे ब्रह्माण्ड में फैल जाएगी। अतः इस सेहरे को पहनने हेतु उचित पात्र बनो। जानते हो वह ईश्वर सतवस्तु का यह सेहरा यानि जयमाल जिस को पहनाते है उसका क्या अर्थ होता है?

मौन।

उसका अर्थ होता है कि ईश्वर ने अपनी उस सुरत को अपना लिया और वो सुरत अटल सुहागिन व अमीरों से भी अमीर हो गई। हम चाहते हैं कि सब ऐसे ही योग्य पात्र बनो इस हेतु अब सब ध्यान से सुनोः-

साजन जी का जीवन चरित्र।
कैसा है परम पवित्र ।।
कैसा है परम पवित्र।
साजन जी का जीवन चरित्र।।
उठ अरे मेरे विश्वास।
बदल डाल जीवन इतिहास।।
जाग अरे तू मेरे प्यार।
अब जगने की बेला है।।
अब जगने की बेला है।।
साजन जी का जीवन चरित्र....................

जो कुछ साजन जी ने लिखा है।
सतवस्तु के ग्रन्थ में ।।
समझ अरे अब तो वह वाणी।
फिरता क्यों हरबेला है।।

फिरता क्यों हरबेला है।।
साजन जी का जीवन चरित्र...............

बैठा तूं हैरान क्यों।
कर रहा जीवन वीरान क्यों।।
पहचान ले अपनी ताकत को।
ताकतवर बनने की बेला है।।
ताकतवर बनने की बेला है।।
साजन जी का जीवन चरित्र...............

इसी में तेरी शान है।
इसी में तेरी आन है।।
सत्य ज्ञान को धारण कर।
बनना तूने महान है।।
बनना तूने महान है।।
साजन जी का जीवन चरित्र...................

अंततः सबसे प्रार्थना है कि इस सबक को पढ़ने व समझने के उपरान्त सत्यता से अपना आत्मनिरीक्षण करो और इसके प्रति जो भी त्रुटियाँ स्वयं में पाओ आत्मनियन्त्रण रखते हुए उनका सुधार करने में विलम्ब न करो ताकि शीघ्र-अति-शीघ्र यह सबक आपके जीवन चरित्र का अभिन्न अंग बन जाए।

शुभकामनाओं सहित।

आत्म निरीक्षण हेतु प्रश्न

1. आनन्दमय जीवन जीते हुए व अपने गृहस्थ आश्रम को सतयुग बनाते हुए हम कैसे परमपद प्राप्त कर सकते हैं?
2. आत्मसुधार हेतू किस प्रकार महातप किया जा सकता है?
3. ज्योति स्वरुप'जो अपना आप है उसकी पहचान कैसे कर सकते है?
4. ब्रह्म भाव क्या है, और उसे अपनाना क्यों आवश्यक है?
5. आत्मिक ज्ञान की प्राप्ति के लिए हमें क्या करना चाहिए?
6. ब्रह्म पदवी कैसे पा सकते है?
7. 'मन जितयो जग जीत' इस कथन का क्या अभिप्राय है?
8. ईश्वर हमें बल बुद्दि व सुमति कब व कैसे प्रदान करता है ?
9. हमारे जीवन का लक्ष्य क्या है?
10. हमें अंदरुनी व बैहरुनी दोनों वृतियों में कौन सा चलन अपनाना चाहिए ताकि हम अफुर हो सकें ?
11. हम तनावमुक्त एकता व एक अवस्था में कैसे बने रह सकते हैं?
12. हमारे स्वभावों का टैम्प्रेचर ऊपर-नीचे क्यों हो जाता है?
13. कर्म-फल के भोग से हम कैसे बच सकते है ?
14. समभाव-समदृष्टि की युक्ति के इस्तेमाल से सम अवस्था में कैसे बना रहा जा सकता है ?
15. युवावस्था का भक्तिभाव क्या है ?
16. किन विध्न-बाधाओं से भक्तिभाव में बाधा उत्पन्न होती है और क्यों ?
17. क्या शास्त्रों को केवल पढ़ने-सुनने से इन्सान कामयाब हो सकता है ?

18. आत्मज्ञान द्वारा कौन सा भाव पनपता है और उससे हमें क्या लाभ होता है?

19. 'साडा है सजन राम, राम है कुल जहान' से क्या तात्पर्य है ?

20. परमात्मा किस प्रकार सब कुछ देख व सुन लेता है?

21. हम उस ईश्वर के सच्चे भक्त कैसे बन सकते हैं?

22. बालअवस्था की भक्ति और युवावस्था की भक्ति में क्या अन्तर है?

23. सबसे उत्तम भक्ति क्या है?

24. उस प्रभु के साथ इन्सान मेल कैसे रवा सकता है?

25. त्रेता युग में कौन सा भक्ति-भाव प्रधान था?

26. द्वापर युग में कौन सा भक्ति-भाव प्रधान था?

27. कलियुग में कौन सा भक्ति-भाव प्रधान है ?

28. मन को सदा ईश्वर में लीन कैसे रखा जा सकता है ?

29. कुदरत क्या है?

30. नाम-अक्षर चलाने की विधि क्या है?

31. ब्रह्म-वाणी अनुसार कुदरत की कौन सी बातें बच्चों व परिवार को बतानी चाहिए ?

32. जीवात्मा का घर कहाँ है व इसका प्रयोजन क्या है ?

33. सोऽहम भाव क्या है इसे कैसे अपना सकते हैं ?

34. संसार मिथ्या है मैं ब्रह्म हूँ' इसका अर्थ क्या है ?

35. जीव का उद्धार कैसे हो सकता है ?

36. इन्सानियत में आने के लिए मनुष्य को क्या करना आवश्यक है ?

37. ईश्वर का प्यारा व आज्ञाकारी पुत्र कैसे बना जा सकता है ?

निवेदन

इस पुस्तक को और अधिक जीवन उपयोगी बनाने हेतु आपके सुझाव सादर आमन्त्रित हैं।

SATYUG DARSHAN TRUST (REGD.)

ALLEVIATING PHYSICAL, MENTAL AND SPIRITUAL SUFFERINGS OF HUMAN BEINGS.

www.satyugdarshantrust.org

Institutions under the aegis of Satyug Darshan Trust (Regd.)

SATYUG DARSHAN CHARITABLE DISPENSARIES & LABORATORIES
Multidiscipline dispensaries, labs & diagnostic centres spread in 15 cities
www.satyugdarshandispensaries.org

SATYUG DARSHAN VIDYALAYA
Nursery-XII, Co-ed. English medium, residential & day boarding school. Affiliated to CBSE.
www.satyugdarshanvidyalaya.net

SATYUG DARSHAN INSTITUTE OF EDUCATION & RESEARCH
B.Ed. College for Girls. Affiliated to Maharishi Dayanand University, Rohtak.
www.sdier.org

SATYUG DARSHAN TECHNICAL CAMPUS
Engineering & Management College, offering B.Tech. BBA and BCA courses. Co-ed. with residential & day boarding facilities. Affiliated to Maharishi Dayanand University, Rohtak.
www.satyug.edu.in

DHYAN KAKSH
World's first School of Equanimity & Even-sightedness. It is open to all age and gender.
www.schoolofequanimity.com

SATYUG DARSHAN SANGEET KALA KENDRA
Imparting true teachings of music and dance, open to all age and gender. Present in 14 cities. Affiliated to Prayag Sangeet Samiti, Allahabad.
www.satyugdarshansangeet.org

Exam of Excellence in Humanity, Morality & Ethics

INTERNATIONAL
EQUANIMITY OLYMPIAD
www.equanimityolympiad.in